CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment : Heritage Foundation , Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

8.3

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE

ru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, J

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

मुगलकालीन भारत

(१५२६-१७५७ ई०)

लेखक
डा० राधा कृष्ण शर्मा, एम० ए०, पी एच० डी०
(राष्ट्रभाषा परिषद्-ग्रन्थ-पुरस्कार-विजेता)
अध्यक्ष, स्नातकोत्तर इतिहास विभाग, राजेन्द्र कालेज, छपरा

प्रकाशक
गंगा पुस्तकालय
पटना - ४

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

प्रकाशक
गंगा पुस्तकालय
पटना-४

१९९१

लेखक द्वारा सर्वाधिकार सुरक्षित ।

संशोधित
मूल्य [illegible] रुपये मात्र

मुद्रक : सूर्योदय प्रेस, पटना-६

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

प्राक्कथन

खक पाठकों के सामने मुगलकालीन भारत नामक पुस्तक सहर्ष प्रस्तुत कर। यह पुस्तक महाविद्यालय के छात्रों की आवश्यकताओं को ध्यान में लिखी गई है। ऐसे तो भारतीय इतिहास के सभी कालों पर अंगरेजी में की भरमार है किन्तु राष्ट्रभाषा हिन्दी में अभी भी अच्छी पुस्तकों का ही है। इस अभाव की पूर्ति के लिये भी यह पुस्तक लिखी गई है।

स्तक की भाषा बहुत ही सरल एवं रोचक है। इससे महाविद्यालय के ी लाभान्वित होंगे ही, यह सामान्य पाठकों के लिये भी उपयोगी सिद्ध

स्तक में त्रुटियों का होना स्वाभाविक है। जो सज्जन उन त्रुटियों की ओर का ध्यान आकृष्ट करेंगे उनके प्रति लेखक कृतज्ञ होगा।

हास विभाग
द्र महाविद्यालय, छपरा
लाई, १९६५ ई०

राधा कृष्ण शर्मा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE

ru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Ja

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विषय-सूची

अध्याय	विषय		पृष्ठ
१.	बाबर के आक्रमण से पूर्व भारत की राजनैतिक दशा	....	१
२.	मुगल साम्राज्य का संस्थापक—बाबर	....	६
३.	दुर्भाग्यशाली सम्राट—हुमायूँ	....	१८
४.	सूरवंश—शेरशाह	....	२७
५.	मुगल साम्राज्य का विस्तार—अकबर	...	४२
६.	मुगल साम्राज्य का विस्तार—जहाँगीर	...	६४
७.	मुगल साम्राज्य का विस्तार—शाहजहाँ	....	७६
८.	मुगल साम्राज्य का विस्तार—औरंगजेब	....	८७
९.	मुगल सम्राटों की उत्तरी-पश्चिमी सीमान्त नीति	....	९९
१०.	मुगल सम्राटों की राजपूत नीति	....	१०७
११.	मुगल सम्राटों की दक्षिणी नीति	....	११७
१२.	मराठों का उत्कर्ष—शिवाजी का उदय	....	१२६
१३.	सिक्खों का उत्कर्ष—गुरुगोविन्द सिंह का उदय	...	१४५
१४.	मुगल साम्राज्य का पतन	...	१५७
१५.	मराठों का पुनरुत्थान—पेशवा	....	१६५
१६.	मुगल शासन प्रणाली	...	१७८
१७.	मुगलकालीन समाज सामाजिक—आर्थिक—धार्मिक दशा	....	१८८
१८.	मुगलकालीन संस्कृति शिक्षा—साहित्य—कला	...	१९५

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

परिशिष्ट

१. मुगल सम्राटों की वंशावली २०७

२. प्रश्नावली २०६

३. विस्तृत अध्ययनार्थ ग्रन्थ-सूची २१५

a Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgao

n Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-

uru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jal

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G
Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अध्याय १

बाबर के आक्रमण से पूर्व भारत की राजनैतिक दशा

१६ वीं शताब्दी के प्रथम चरण में भारत की राजनैतिक दशा प्रायः वैसी ही थी जैसी कि १२ वीं शताब्दी के अन्तिम चरण में थी। १३ वीं शताब्दी के आरंभ में हिन्दू राज्य के अवशेष पर तुर्क अफगान राज्य की स्थापना हुई। १६ वीं शताब्दी के आरंभ में भी विदेशी राज्य की स्थापना के लिये राजनैतिक स्थिति अनुकूल थी। उस समय भारत एक संगठित राज्य नहीं रह गया था। वह कई स्वतन्त्र छोटे तथा बड़े राज्यों में विभाजित हो गया था। देश में सार्वभौम सत्ता का अभाव था। लेनपूल के मतानुसार राजा का आदेश सर्वमान्य नहीं था और साधारण राजकुमारों का ही बोलबाला था।

दिल्ली—दिल्ली तुर्क अफगान साम्राज्य की राजधानी थी। लेकिन १४ वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध से सल्तनत की स्थिति क्रमशः बिगड़ने लगी थी। उसी शताब्दी के अन्त में (१३६८-६६ ई०) तैमूर ने भारत पर हमला किया। उसने दिल्ली में भी प्रवेश किया और वहाँ करीब दो सप्ताह ठहरा। उसने दिल्ली के लोगों का खूब संहार किया और नगर का लूटपाट किया। उसके जाने के बाद भी लगभग दो महीने तक दिल्ली में अराजकता फैली रही। बीमारी और अकाल का प्रचार था। दिल्ली सल्तनत की जड़ खोखली हो गई।

इस तरह १५ वीं शताब्दी में दिल्ली सल्तनत बहुत ही कमजोर थी। इसमें अपनी शक्ति नहीं थी। इसे राष्ट्र का भी समर्थन प्राप्त नहीं था। यह सामन्तों और सैनिकों के बल पर टिका हुआ था। किन्तु यह बल अस्थायी सिद्ध हुआ। ऐसा शासन जनता में लोकप्रिय नहीं बन सका। शासक एवं शासित वर्ग में सहयोग एवं सद्भावना का अभाव था।

१५१७ ई० में इब्राहिम लोदी दिल्ली की गद्दी पर बैठा। उसी समय उसका साम्राज्य आसपास के कुछ राज्यों तक ही सीमित था। दिल्ली साम्राज्य में दिल्ली,

---

1. The king's writ was no more supreme; it was the day of little princes.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आगरा, जौनपुर, दोआब, बिहार का कुछ भाग, बयाना और चन्देरी सम्मिलित थे। अन्य कई राज्य सुल्तान की अधीनता से स्वतंत्र हो चुके थे।

इब्राहिम वीर और साहसी था किन्तु उसमें कुछ बड़े दोष थे। वह उद्दंड और उग्र स्वभाव का था। वह मूर्ख और हठी भी था। वह अपने सगे-सम्बन्धियों तथा शुभचिन्तकों की भावनाओं को समझ नहीं सका। उसने अपने व्यवहार से उन्हें असन्तुष्ट कर दिया। वह राजाओं के दैवी हक़ के सिद्धान्त में विश्वास करता था। उसने अफ़ग़ान सरदारों के साथ दुर्व्यवहार किया। उसने घोषणा कर दी कि राजशक्ति के सामने सम्बन्ध का कोई मूल्य नहीं है और सभी सरदार उसके असामी एवं सेवक के तुल्य हैं। इस तरह अफ़गान सरदार जो कभी उसके बाप-दादा के समय में सुलतान की बराबरी में गलीचों और कुर्सियों पर बैठते थे, इब्राहिम के दरबार में हाथ जोड़कर खड़ा रहने के लिये बाध्य किये गये। जो सरदार सुलतान के आदेश की अवहेलना करते थे उन्हें सजा भी मिलती थी। स्वाभिमानी अफ़गान सरदार अपने ही एक भाई के द्वारा किये गये अपमानों को कैसे भूल सकते थे। उनके हृदय में क्रोध एवं असन्तोष की अग्नि सुलगने लगी।

अफ़गान सरदारों ने इब्राहिम के आधिपत्य का विरोध करना शुरु किया। ये सरदार कई शाखाओं में विभाजित थे जैसे लोदी, लोहानी, नियाजी और फ़रमूली। इन सभी शाखाओं ने सुलतान के विरुद्ध विद्रोह करने का प्रयास किया। सुल्तान के चाचा आलम खाँ लोदी ने दिल्ली की गद्दी पर अपना दावा पेश किया। पंजाब में दौलत खाँ लोदी और उसके पुत्र गाजी खाँ और दिलावर खाँ ने अपनी स्वतन्त्रता घोषित कर ली। बिहार में दरिया खाँ लोहानी और उसके पुत्र बहार खाँ लोहानी ने विद्रोह का झंडा खड़ा किया। जौनपुर में भी इब्राहिम का विरोध हुआ। अन्त में लाहौर के सूबेदार दिलावर खाँ और इब्राहिम के चाचा आलम खाँ ने काबुल के बादशाह बाबर को दिल्ली पर हमला करने के लिये आमंत्रित किया। बाबर ने आमंत्रण खुशी से स्वीकार कर लिया।

सिन्ध—१६ वीं शताब्दी के आरम्भ में सिन्ध में अशान्ति फैली हुई थी। १५१६ ई० में बाबर ने कन्धार के शासक शाहबेग अरधुन को परास्त किया। शाहबेग भागकर सिन्ध चला आया और उसने ४ वर्षों के बाद सिन्ध पर अधिकार कर लिया। उसके बेटे शाह हुसेन ने अपने राज्य और अपनी शक्ति में वृद्धि की। उसने मुलतान पर अधिकार कर लिया। इस तरह बाबर के हमला के समय सिन्ध में अरधुन वंश का राज्य था।

गुजरात—१४०१ ई० में गुजरात में गवर्नर जफर खाँ ने स्वतन्त्र राज्य की स्थापना की। बाबर के हमला के समय गुजरात में मुजफ्फर शाह द्वितीय

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शासक था। वह वीर एवं लड़ाकू था। उसने मालवा पर हमला किया था। मेवाड़ से भी उसे दुश्मनी थी। राणा सांगा ने उसे परास्त किया था। बाबर के हमले के समय बहादुरशाह गुजरात का शासक था। उसने मालवा को भी अपने अधीन कर लिया था।

मालवा—१४३५ ई० में महमूद खाँ मालवा के राजा का मंत्री था। उसने गद्दी पर अधिकार कर खिलजी वंश स्थापित किया। बाबर के हमले के समय महमूद द्वितीय मालवा का शासक था। वह अयोग्य था। उसके समय में मेदिनी राय नामक एक राजपूत सरदार ने अपना प्रभाव बढ़ा लिया। मुसलमानों को यह बात पसन्द नहीं थी। उन्होंने मेदनी राय को शक्तिहीन कर देने का प्रयास किया। किन्तु मेवाड़ के राणा सांगा ने मेदनी राय को मदद दी। महमूद को हराकर कैद कर लिया गया। लेकिन बाद में सांगा ने उसे मुक्त कर दिया और उसका राज्य भी लौटा दिया। किन्तु मालवा में अशान्ति बनी रही।

पंजाब—हम देख चुके हैं कि पंजाब का सूबेदार दौलत खाँ लोदी था। उसके लड़के गाजी खाँ और दिलावर खाँ इब्राहिम के विरोधी थे।

काश्मीर—पंजाब के उत्तर-पश्चिम में काश्मीर था। १३३६ ई० में एक मुसलमान सैनिक शाहमिर्जा ने अपने हिन्दू राजा के विरुद्ध विद्रोह कर दिया। उसने वहाँ मुस्लिम राज्य स्थापित किया। जैनुल अब्दीन (१४२०--७०) सबसे प्रसिद्ध मुसलमान शासक हुआ था। वह संस्कृत भाषा और धार्मिक सहिष्णुता का प्रेमी था। उसके मरने के बाद काश्मीर में अशान्ति फैलने लगी। १६ वीं शताब्दी के आरंभ में वहाँ के शासकों पर सरदारों का बहुत प्रभाव था।

जौनपुर—जौनपुर में नसीर खाँ लोहानी का शासन था। वह इब्राहिम से असन्तुष्ट था।

बिहार—बिहार में दरिया खाँ लोहानी ने स्वतन्त्र राज्य कायम किया था। वह विद्रोही सरदारों का मुखिया था।

बंगाल—बंगाल एक समृद्धिशाली प्रदेश था। फिरोज तुगलक के ही समय में वह स्वतन्त्र हो चुका था। वहाँ हुसेनी वंश के सरदारों का राज्य था। बाबर के आक्रमण के समय नसरत शाह शासक था। वह योग्य व्यक्ति था और बंगला साहित्य का संरक्षक था। उसने महाभारत का बंगला में अनुवाद कराया था। उसका पिता भी शक्तिशाली शासक था।

राजपूताना—राजपूताने में राजपूतों के कई छोटे-बड़े राज्य थे। १६वीं शताब्दी के आरम्भ में मेवाड़ का राज्य प्रसिद्ध था। राणा संग्राम सिंह वहाँ के प्रसिद्ध शासक थे। वे अपनी वीरता के लिये प्रसिद्ध थे। कई राज्य उनसे बहुत डरते थे।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

खानदेश—खानदेश ताप्ती नदी की घाटी में एक स्वतन्त्र प्रदेश था। यहाँ मलिक राजा फारुकी ने फारुकी वंश कायम किया था। बाबर के समय में मुहम्मद प्रथम यहाँ का शासक था। असीरगढ़ इस राज्य का प्रसिद्ध दुर्ग था।

विजयनगर—दक्षिण भारत में विजयनगर हिन्दुओं का एक शक्तिशाली और गौरवपूर्ण साम्राज्य था। हरिहर और बुक्का इस साम्राज्य के संस्थापक थे — १३३६ ई० में इसकी स्थापना हुई थी। कृष्णदेव राय इसका प्रमुख राजा था। वह बाबर का समकालीन था। वह महान् विजेता और कुशल शासक था। वह साहित्य एवं संस्कृति का भी पोषक था। विदेशी यात्रियों ने उसके शासन और धन-दौलत की बड़ी प्रशंसा की है। पुर्तगीज यात्रियों ने विजय नगर को विश्व का सर्वश्रेष्ठ नगर कहा था।

बहमनी राज्य—दक्षिण भारत में बहमनी साम्राज्य मुसलमानों का प्रसिद्ध साम्राज्य था। यह बरार से लेकर कृष्णा नदी तक फैला हुआ था। १५ वीं सदी के मध्य (१३४७) में इसकी स्थापना हुई थी। १५ वीं सदी के अन्तिम चरण (१४८१) में महमूद गवाँ की हत्या के बाद बहमनी साम्राज्य ५ भागों में बँट गया। ये भाग हैं बरार (१४८४-१५२७), अहमद नगर (१४८६-१६३३), बीजापुर (१४८६-१६८६), गोलकुंडा (१५१२-१६८७) और बीदर (१५०३-१५६०)।

विजयनगर और बहमनी साम्राज्य में प्रायः लड़ाई-भिड़ाई हुआ करती थी। बहमनी साम्राज्य के ५ राज्यों में भी एकता नहीं थी। लेकिन १५६५ ई० में मुसलमानों ने अपनी शक्ति संगठित की और विजयनगर पर हमला कर दिया। उसी लड़ाई में विजय नगर का साम्राज्य बर्बाद हो गया।

सैनिक दशा—१६ वीं शताब्दी के आरम्भ में भारत की सैनिक दशा भी दयनीय थी। युद्ध के सामान पुराने थे। लड़ने के तरीके भी पुराने ही थे। भारत के सैनिक युद्ध की नयी कला और युद्ध के नये अस्त्र-शस्त्र से अनभिज्ञ थे। भारतीयों को गोला-बारूद की जानकारी नहीं थी। अतः सैनिक दृष्टि से भी भारत कमजोर और पिछड़ा हुआ था।

बाबर के द्वारा प्रस्तुत भारत काराजनैतिक विवरण—बाबर ने स्वयं अपनी आत्म कथा में भारत की राजनैतिक दशा का विवरण प्रस्तुत किया है। उसने पाँच मुसलमान[1] और दो हिन्दू[2] राज्यों का उल्लेख किया है। उसके कथना-

---

(१) १ अफगान राज्य (दिल्ली साम्राज्य), २ जौनपुर, ३ बंगाल, ४ मालवा, ५ गुजरात।

(२) १ विजयनगर २ मेवाड़ (चित्तौर)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नुसार हिन्दुस्तान का सबसे बड़ा भाग दिल्ली साम्राज्य के अधीन था, लेकिन देश में कई स्वतन्त्र तथा शक्तिशाली राज्य थे।

इस प्रकार १६ वीं शताब्दी के आरम्भ में भारत की राजनैतिक एवं सैनिक दशा शोचनीय थी, किसी भी महत्वाकांक्षी और शक्तिशाली विदेशी आक्रमणकारी के लिये यह सुनहला अवसर था : बाबर ने इससे पूरा लाभ उठाया।

⊙

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अध्याय २

बाबर (१५२६-१५३० ई०)

भूमिका—१५२६ से १५५६ ई० तक की अवधि में भारत पर प्रभुता कायम करने के लिये मुगलों और अफगानों में संघर्ष होता रहा। इस संघर्ष में कभी मुगल और कभी अफगान सफलीभूत होते रहे। किन्तु एक कहावत है कि अन्त भला तो सब भला। अन्त में मुगलों की ही विजय हुई और अफगान हार गये। १५५६ ई० के बाद भारत में राज्य कायम करने के लिये अफगानों ने फिर कभी साहस नहीं किया।

बाबर का प्रारंभिक जीवन—बाबर मध्य एशिया के एक छोटा प्रदेश फरगना में १४८३ ई० में पैदा हुआ था। उसके पिता का नाम उमर शेख मिर्जा था जो फरगना का शासक था। बाबर का असली नाम जहीरुद्दीन मुहम्मद था। वह माता के पक्ष से चंगेज खाँ से और पिता के पक्ष से तैमूरलंग से सम्बन्धित था। चंगेज और तैमूर दोनों ही मध्य एशिया के महान् वीर एवं विजेता थे। चंगेज मंगोल जाति का और तैमूर तुर्क (चगताई शाखा) जाति का था। लेकिन बाबर को मुगल ही कहा जाने लगा।

बाबर जब लगभग १२ वर्षों का था तभी उसके पिता की मृत्यु (१४९४) हो गयी। वह इसी उम्र में फरगना का शासक हो गया। फरगना तैमूर के साम्राज्य का एक छोटा अंग था और यह उसके पूर्वज को विरासत के रूप में प्राप्त हुआ था। उस समय उसके कई दुश्मन थे। उसके चाचा और मामा दोनों ही उसे गद्दी से हटा देना चाहते थे। समरकन्द की उजबेग जाति के सरदारों को भी बाबर का राजा होना पसन्द नहीं था। बाबर के चाचा और मामा ने चट उस पर हमला कर दिया। किन्तु बाबर घबराने वाला व्यक्ति नहीं था। उसने बड़े धैर्य के साथ उनका सामना किया और उनके हमले विफल हो गये।

समरकन्द की विजय—समरकन्द में ही तैमूर की राजधानी थी। अतः बाबर उस पर अधिकार करने के लिये उत्सुक था। उसने अनुकूल स्थिति देखकर १४९६ ई० में समरकन्द पर हमला कर दिया किन्तु उसे सफलता नहीं मिली।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

लेकिन उसने दूसरे साल समरकन्द पर अधिकार कर ही लिया। लेकिन यह अधिकार अस्थायी सिद्ध हुआ।

जब बाबर समरकन्द में समय बिताने लगा तब फरगना का राज्य उसके हाथ से निकल गया। जब वह फरगना गया तब समरकन्द (१४९८) उसके हाथ से निकल गया। उसने बारी-बारी से फरगना (१४९८) और समरकन्द (१५००) दोनों पर कब्जा कर लिया। लेकिन १५०२ ई० में उजबेगों ने उसके दोनों राज्यों को दखल कर लिया। अब बाबर बेघर-बार का भटकने लगा। दो वर्षों तक उसकी यही स्थिति रही।

काबुल पर अधिकार—अब बाबर का ध्यान काबुल की ओर गया। काबुल में अव्यवस्था फैली हुई थी। बाबर ने उस पर हमला किया और बड़ी आसानी से विजय प्राप्त कर ली (१५०४ ई०)। तीन वर्ष के बाद उसने बादशाह की पदवी धारण की। उसी वर्ष उसने कन्दहार पर भी अधिकार कर लिया किन्तु थोड़े ही समय के बाद कन्दहार पर उसके अधिकार का अन्त हो गया।

समरकन्द पर फिर अधिकार—बाबर ने एक बार फिर (१५११ ई०) समरकन्द पर अधिकार कर लिया। उसने बुखारा और खुरासान पर भी कब्जा किया। किन्तु उजबेगों ने फिर बाबर को इन राज्यों से भगा दिया। अब बाबर ने समरकन्द पर राज्य करने की इच्छा का त्याग कर दिया। जब वह उत्तर-पश्चिम में साम्राज्य कायम करने में सफल न हो सका तब उसने दक्षिण-पूर्व की ओर इसके लिये प्रयास शुरू किया।

भारत पर बाबर के प्रारंभिक हमले—बाबर पानीपत के पहले भारत पर तीन बार हमला कर चुका था। सबसे पहले उसने १५१९ ई० में बेजौर (सीमाप्रान्त) पर हमला किया और यहाँ के प्रसिद्ध दुर्ग पर अधिकार कर लिया। इसके बाद उसने झेलम नदी पर स्थित भेरा पर अधिकार किया। उसने हिन्दू बेग को भेरा का सूबेदार नियुक्त किया। उसी समय उसने इब्राहिम लोदी के पास एक दूत से सन्देश भेजा कि जो प्रदेश कभी तुर्कों के अधीन थे वे लौटा दिये जायँ। किन्तु दौलत खाँ लोदी ने ही उस दूत को लाहौर में ही रोक रखा। बिना किसी उत्तर का ही दूत कुछ समय के बाद लौट गया। भेरा तथा कुछ अन्य स्थानों पर अधिकार कर लेने के बाद बाबर काबुल लौट गया।

१५१९ ई० के उत्तरार्द्ध में ही बाबर ने दूसरी बार भारत पर आक्रमण किया। उसकी अनुपस्थिति में हिन्दूबेग को भेरा से भगा दिया गया था। उसने पेशावर में अपनी शक्ति संगठित करने का प्रयास किया किन्तु उसे शीघ्र ही लौट जाना पड़ा।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

१५२० ई० में बाबर ने भारत पर तीसरी बार हमला किया। उसने भेरा पर फिर अधिकार कर लिया। उसी साल उसने बदख्शां पर अधिकार कर लिया और हुमायूं को वहाँ का सूबेदार नियुक्त कर दिया। दो साल के बाद उसने अरगूनों के हाथ से कन्धार ले लिया और इसे कमरान के अधीन सौंप दिया।

अब बाबर अफगानिस्तान में निश्चिन्त हो गया। उसने दौलत खां लोदी के द्वारा उत्साहित किये जाने पर भारत पर १५२४ ई० में चौथी बार आक्रमण किया। उसने पंजाब पर ही पहले अधिकार कर लिया। उसने दौलत खां को जालन्धर और सुलतानपुर की जागीरदारी सौंप दी। लेकिन दौलत खां को इतने से सन्तोष नहीं हुआ। वह बाबर के विरुद्ध जाल रचने लगा। उसके पुत्र दिलावर खाँ ने बाबर को इसकी सूचना दे दी। अब बाबर ने सुलतानपुर की जागीर दिलावर खाँ को और दीपालपुर की जागीर आलम खाँ को सौंप दी। इसके बाद वह फिर काबुल लौट गया।

बाबर की अनुपस्थिति में दौलत खां ने फिर सारे पंजाब पर अपना अधिकार कर लिया। अब आलम खां काबुल भाग गया और बाबर से उसने एक समझौता किया। किन्तु लाहौर लौटने पर आलम खां दौलत खां से मिल गया। दोनों ने दिल्ली की गद्दी पर अधिकार कर लेने के लिये प्रयास किया किन्तु सफलता नहीं मिली। अब बाबर का उन दोनों पर विश्वास नहीं रहा। उसने स्वयं दिल्ली पर अधिकार करने के लिये निश्चय किया। इसके लिये उसे सर्वशक्तिशाली राजपूत सरदार राणा सांगा की ओर से भी प्रोत्साहन मिला।

पानीपत का पहला युद्ध (१५२६ ई०)

कारण—इस युद्ध के अनेक कारण थे। (१) बाबर बड़ा ही महत्वाकांक्षी और साहसी युवक था। उसके नसों में मंगोल विजेता चंगेज खां और तुर्क विजेता तैमूर का रक्त प्रवाहित हो रहा था। (२) उत्तर-पश्चिम में बाबर को राज्य कायम करने में असफलता हुई थी। अतः दक्षिण-पूर्व की ओर मुड़ने के लिये वह बाध्य हुआ। (३) तैमूर का वंशज होने के कारण वह भारत पर विजय करना अपना अधिकार समझता था और सुअवसर के लिये बाट जोहता था। (४) १६ वीं शताब्दी के आरंभ में भारत की राजनीतिक स्थिति अनुकूल साबित हुई। एकता का अभाव था। केन्द्रीय शासन दुर्बल था। (५) दिल्ली के सुल्तान इब्राहिम लोदी अदूरदर्शी, निर्दयी, उद्दन्ड और घमंडी शासक था जिससे बहुत लोग असन्तुष्ट हो गये थे। (६) दौलत खां, आलम खां और राणा सांगा ने भारत पर हमला करने के लिये बाबर को आमंत्रित किया था। बाबर ने आमंत्रण का स्वागत किया।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

युद्ध की प्रगति—बाबर ने १५२५ ई० में भारत पर पाँचवाँ हमला शुरू किया। उसने पंजाब पर अधिकार कर लिया। दौलत खां बन्दी बना लिया गया। आलम खां ने बाबर की अधीनता मान ली। अब बाबर दिल्ली की ओर बढ़ने लगा। वह पानीपत के मैदान में पहुँचा। इब्राहिम लोदी भी वहीं पहुँच गया। २१ अप्रिल १५२६ ई० को दोनों की सेनाओं में लड़ाई हुई। इब्राहिम की सेना से बाबर की सेना छोटी ही थी। लेकिन जीत बाबर की ही हुई। इब्राहिम अपने हजारों सैनिकों के साथ लड़ाई में ही मारा गया।

परिणाम—यह पानीपत का पहला युद्ध था। इसके परिणाम बड़े ही महत्वपूर्ण हुए। पानीपत की विजय के फलस्वरूप दिल्ली और आगरा पर बाबर का अधिकार हो गया। दोआब भी उसके अधिकार में आ गया। अब एक राजवंश (लोदी) का अन्त हो गया। इसके साथ ही तुर्क-अफगान राज्य, जिसे दिल्ली सल्तनत (१२०६–१५२६) भी कहते थे समाप्त हो गया। अब एक नये राजवंश का आरंभ हुआ। इसे मुगल राजवंश कहते हैं और यह लगभग सवा दो सौ वर्षों तक (१५२६–१७५७) कायम रहा।

जैसे आगे चल कर भारत में अंगरेजी राज्य कायम करने के लिये पलासी की विजय से अंगरेजों को एक अधार मिल गया वैसे ही पानीपत की विजय से मुगलों को भारत में मुगल राज्य कायम करने के लिये एक आधार प्राप्त हो गया।

राजपूत बाबर के वास्तविक उद्देश्य से परिचित हुए। मुगलों के साथ राजपूतों का संघर्ष अनिवार्य हो गया। एक ही साल के बाद राजपूतों और मुगलों में भी युद्ध हो ही गया।

दिल्ली और आगरे में बाबर को बहुत धन भी हाथ लगा। उसने अपने सैनिकों, अफसरों, सम्बन्धियों और नौकरों में बहुत बड़ी रकम पुरस्कार के रूप में बाँट दी। कई शासकों को जागीर देकर बाबर ने अपने पक्ष में किया।

मुगलों की अपनी सभ्यता एवं संस्कृति थी। अतः उनके शासनकाल में भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति पर उनका बहुत प्रभाव पड़ा।

बाबर और राजपूत—केवल दिल्ली और आगरा पर अधिकार हो जाने से बाबर समस्त देश का स्वामी नहीं हो गया। अभी उसे भारत के अन्य दुश्मनों से मुकाबला करना था। उसके दुश्मनों में राजपूत सरदार राणा सांगा का नाम विशेष उल्लेखनीय है।

राणा सांगा—राणा सांगा सिसोदिया वंश का राजपूत सरदार था। चित्तौर में उसकी राजधानी थी। उसका नाम राणा संग्राम सिंह भी था। वह अपने समय का सर्वोत्तम वीर एवं साहसी व्यक्ति था। वह एक महान् सैनिक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

एवं विजेता था। उसने कई राज्यों को दखल कर लिया था। उसने कई युद्धों में भाग लिया था। डा० ईश्वरी प्रसाद के मतानुसार "युद्ध में राजा की एक आँख फूट गयी थी, एक हाथ टूट गया था और वह एक पैर से लँगड़ा हो गया था। इनके अतिरिक्त उसके शरीर पर तलवार, भाले और तीर के ८० घाव थे।" इस तरह उसकी वीरता अद्भुत थी। उसकी सैनिक शक्ति पर्याप्त थी।

राणा के पास अपार सम्पत्ति भी थी। कई छोटे-मोटे राजा उसके सामन्त थे। वह राजपूत राज्यों का प्रमुख सरदार था। उसी राणा से अब बाबर को जूझना पड़ा।

दोनों में युद्ध के कारण—बाबर और सांगा दोनों ने एक दूसरे पर प्रतिज्ञा भंग करने का आरोप लगाया। बाबर का कहना था कि राणा सांगा ने काबुल में अपने एक दूत से सन्देश भेजा था कि यदि वह (बाबर) उत्तर से दिल्ली पर हमला करेगा तो राणा आगरे की ओर से हमला करेगा। लेकिन बाबर ने जब हमला किया तो राणा ने अपनी प्रतिज्ञा का पालन नहीं किया। राणा का कहना था कि बाबर ने समझौते की उपेक्षा कर कुछ स्थानों पर अधिकार कर लिया था।

यह पारस्परिक दोषारोपण युद्ध के लिये बहाना मात्र था। असली कारण कुछ दूसरा ही था। राणा सांगा तुर्क अफगान राज्य के अवशेष पर हिन्दू राज्य कायम करने का स्वप्न देख रहा था। लेकिन पानीपत के मैदान में बाबर की विजय से सांगा का स्वप्न खतम हो गया। उसने सोचा था कि तैमूर की तरह बाबर भी कुछ लूटपाट करके वापस चला जायगा किन्तु बाबर तो भारत में राज्य कायम करने का प्रयास करने लगा। इससे सांगा की आशाओं पर पानी फिर गया और बाबर के साथ मुठभेड़ निश्चित हो गई।

बाबर भी अच्छी तरह जानता था कि भारत में राज्य-स्थापना के मार्ग में राणा सांगा बहुत बड़ा कांटा है। इस कांटे को हटाना वह आवश्यक समझता था।

खानवा का युद्ध—इस तरह सांगा और बाबर में संघर्ष शुरू हो गया। सीकरी के निकट खानवा के मैदान में १५२७ ई० के आरंभ में दोनों सेनाओं में मुठभेड़ हुई। मुगल सैनिक पहले ही राजपूतों की वीरता की कहानी सुन चुके थे। प्रारंभ में राजपूतों ने उन्हें परास्त भी कर दिया। अब मुगल सैनिक बहुत निराश हो गये। वे मैदान छोड़ कर भाग जाना चाहते थे। किन्तु बाबर निराश नहीं हुआ। उसने अपने सैनिकों में एक जोशीला भाषण दिया। अल्लाह और कुरान के नाम पर उसने सैनिकों को उत्तेजित किया। उसने मद्यपान न करने की कसम खाई। उसने मदिरा को फेंक दिया और प्यालों को फोड़ दिया। उसने घोषणा की कि "बदनाम होकर जीने की अपेक्षा इज्जत के साथ मर जाना

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कहीं अधिक अच्छा है। लड़ाई में मरने पर हम शहीद होंगे और जीतने पर गाजी (विजेता) होंगे।"

बाबर के भाषण का अच्छा प्रभाव पड़ा। मुगल सैनिक मर-मिटने के लिये कमर कस लिये। बाबर ने सन्धि के लिये भी बात शुरू कर दी। उधर लड़ाई की तैयारी भी होती रही। फिर जमकर लड़ाई शुरू हुई। सलहदी नामक सरदार मुगलों से मिल गया। युद्ध का पासा पलट गया। राणा घायल होकर गिर गया। मुगल राजपूतों पर टूट पड़े। अन्त में मुगलों को ही विजयश्री प्राप्त हुई। राजपूत हार गये। दो वर्ष के बाद राणा की मृत्यु हो गयी।

परिणाम—खानवा का युद्ध पानीपत के युद्ध से अधिक महत्वपूर्ण है। पानीपत की विजय ने मुगल राज्य की नींव दी और खानवा की विजय ने उसकी नींव को सुदृढ़ कर दिया। पहली विजय ने बाबर के लिये भारत का दरवाजा खोल दिया और दूसरी विजय ने बाबर को भीतर प्रवेश करने के लिये मौका दिया। अब हिन्दुस्तान का स्वामित्व बाबर के हाथ में चला आया। प्रो० रशब्रुक विलियम्स के शब्दों में खानवा की विजय के बाद उसकी शक्ति का आकर्षण केन्द्र काबुल से हटकर हिन्दुस्तान हो गया।[1]

अब बाबर को अपने प्राण की रक्षा के लिये या सिंहासन को सुरक्षित रखने के लिये चिन्तित होने की आवश्यकता नहीं रही। अब राज्य-विस्तार के लिये ही उसे सोचना था। रशब्रुक विलियम्स का कहना है कि इसके (खानवा) बाद "भाग्य की खोज में इधर-उधर भटकते रहने के दिन समाप्त हो गये। भाग्य तो उसके साथ था ही, अब उसे अपने को इसके योग्य दिखलाना था।"[2] डाक्टर ईश्वरी प्रसाद का भी कथन है कि "बाबर स्थिर रूप से भारत का सम्राट् हो गया। अब उसे दिल्ली का सिंहासन हाथ से निकलने का भय न रहा।"[3] बाबर ने अब बादशाह की पदवी ग्रहण की।

खानवा की हार राजपूतों के लिये घातक सिद्ध हुई। उनकी सैनिक शक्ति को बहुत आघात पहुँचा। राजपूतों के नेतृत्व में हिन्दू साम्राज्य कायम करने का स्वप्न भंग हो गया। मेवाड़ की प्रतिष्ठा को गहरा धक्का लगा। राजपूतों का संघ समाप्त हो गया।

---

1. Henceforth the centre of gravity of his power shifted from Kabul to Hindustan.

2. His days of wandering in search of fortune were now passed away; fortune was his.

3. भारत का इतिहास—भाग २ (१९५१) पृष्ठ २३

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रशत्रुक विलियम्स ने कहा है कि इस हार के बाद हिन्दुस्तान की राजनीति में राजपूतों का महत्वपूर्ण स्थान नहीं रहा। लेकिन यह मत बिलकुल सत्य नहीं है। राजपूतों की शक्ति कम हुई, उनका सर्वथा विनाश नहीं हुआ। शेरशाह और औरंगजेब को राजपूतों से संघर्ष करना पड़ा था। राजपूतों ने अकबर को बहुमूल्य सहायता दी थी।

चन्देरी का युद्ध—बुन्देलखंड और मालवा की सीमा पर चन्देरी का दुर्ग स्थित था। अब बाबर ने उस पर हमला कर दिया। मेदिनी राव के अधीन वह सामना किया। किन्तु बाबर ने दुर्ग पर अधिकार कर लिया। बहुत से राजपूत सैनिक लड़ते हुए मारे गये और बहुत राजपूत रमणियाँ अग्नि में जल मरीं। यह घटना १५२८ ई० में हुई।

घाघरा का युद्ध—पानीपत के युद्ध के बाद बहुत से अफगान (पठान) पूर्व की ओर भाग आये थे। उस युद्ध में वे परास्त हुए थे, कुचले नहीं गये थे। लेनपूल के शब्दों में अफगान सर्प केवल घायल हो गया था, मरा नहीं था। इब्राहिम लोदी का भाई महमूद लोदी बिहार में अफगानों का संगठन कर रहा था। बाबर ने उनका पीछा किया। घाघरा के पास फिर अफगानों और मुगलों में युद्ध हुआ। अफगान बुरी तरह हार गये। महमूद लोदी भाग कर बंगाल चला गया। अफगानों ने भी बाबर की अधीनता कबूल कर ली। इसे घाघरा का युद्ध कहते हैं और यह १५२६ ई० में हुआ था।

बाबर के साम्राज्य की सीमा—अब उत्तरी और पश्चिमी भारत के अधिकांश भाग पर बाबर का अधिकार हो गया। भारत में उसका साम्राज्य सिन्धु नदी से लेकर बिहार तक और हिमालय से लेकर ग्वालियर तक फैला था। पश्चिम में उसका राज्य ऑक्सस नदी तक फैला हुआ था।

बाबर की मृत्यु—बाबर बहुत दिनों तक अपने साम्राज्य का सुख नहीं भोग सका। १५३० ई० में ४७ वर्ष की ही उम्र में उसकी मृत्यु हो गई। कहा जाता है कि उसका पुत्र हुमायूँ एक बार बहुत बीमार पड़ा। बचने की कोई आशा न रही। बाबर ने ईश्वर से प्रार्थना की कि वह हुमायूँ के प्राण की रक्षा करे और उसके बदले उसी (बाबर) का प्राण ले ले। ऐसा ही हुआ। इसके बाद ही बाबर मर गया। हुमायूँ चंगा हो गया।

बाबर की सफलता के कारण

भारत में बाबर की सफलता के निम्नलिखित अनेक कारण थे :—

(१) अनुकूल राजनैतिक स्थिति—हम देख चुके हैं कि १६ वीं शताब्दी के आरम्भ में भारत की राजनैतिक दशा दयनीय थी। देश अनेक स्वतन्त्र राज्यों

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

में बँटा हुआ था। केन्द्रीय सत्ता कमजोर थी। अतः राजनैतिक स्थिति बाबर के लिये बहुत ही अनुकूल थी।

(२) इब्राहिम लोदी की कमजोरियाँ—इब्राहिम लोदी दिल्ली की गद्दी पर सुलतान था। उसमें कई कमजोरियाँ थीं। मनुष्य के रूप में वह संकीर्ण, हठी, अत्याचारी और अहंकारी था। अतः दुर्व्यवहार से उसने अपने सगे-सम्बन्धियों और सरदारों को असन्तुष्ट कर दिया। शासक के रूप में भी लोकप्रिय नहीं था। अतः जनता भी असन्तुष्ट ही थी। सैनिक के रूप में भी वह अयोग्य और अनुभवहीन था। कूटनीतिज्ञ के रुप में वह अदूरदर्शी था। अतः वह राजपूतों और अफगानों को मुगलों के विरुद्ध एक साथ संगठित नहीं कर सका।

(३) राजपूतों की कमजोरियाँ—राजपूतों में भी कई कमजोरियाँ थीं। मुगलों के विरुद्ध सभी राजपूत एक साथ संगठित नहीं हुए थे। सभी हिन्दुओं में एकता की भावना बलवती नहीं थी। खानवा में सलहदी नामक सरदार ने राणा के साथ विश्वासघात किया था। राजपूतों के लड़ने के ढंग और सामान दोनों ही पुराने थे।

(४) बाबर के गुण—बाबर में अनेक गुण भरे हुए थे। उसने जीवन के विद्यालय में अनेक गुणों को प्राप्त किया था। उसे बहुत कष्टों और कठिनाइयों को सहना पड़ा था। अतः वह बहुत ही परिश्रमी, साहसी और धैर्यशील था। वह कुशल वक्ता और योग्य सेनापति था। वह अपने भाषण और उदाहरण से अपने सैनिकों में उत्साह और बलिदान की भावना का संचार कर सकता था। वह अपने सैनिकों का प्यारा था। वह युद्धकला में भी बहुत चतुर था।

मनुष्यों और परिस्थितियों को समझने की भी उसमें अद्‌भुत क्षमता थी। वह दुश्मनों में फूट डालकर भी अपना काम निकालना जानता था।

(५) मुगल सैनिकों की वीरता—अपने सेनानायक की तरह मुगल सैनिक भी बड़े ही वीर और साहसी थे। वे बाबर की बात पर मर-मिट जाने को तैयार रहते थे। उनमें त्याग और अनुशासन की भावना कूट-कूट कर भरी हुई थी। बाबर ने उनकी धार्मिक भावना को भी उत्तेजित किया था। उनमें धन पाने और राज्य कायम करने की लालसा भी भरी हुई थी।

(६) तोपखाने का उपयोग—मुगलों की सफलता का एक रहस्य था तोपखाने का उपयोग। मुगल तोपखाने बहुत ही भारी होते थे और मुगल सैनिक उन्हें चलाने में बहुत ही चतुर थे।

चरित्र और मूल्यांकन

हैवेल महोदय का कथन है कि "अपने चित्ताकर्षक व्यक्तित्व, कलात्मक स्वभाव और रोमांचकारी जीवन के कारण बाबर इस्लाम के इतिहास में सबसे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अधिक आकर्षक व्यक्ति था।"[1] डा० ईश्वरी प्रसाद के शब्दों में भी बाबर एक योग्य तथा महान् व्यक्ति था।

मनुष्य के रूप में—बाबर में दिल एवं दिमाग सम्बन्धी अनेक गुण थे। वह अपने परिवार में अभिरुचि रखता था। माता-पिता, पत्नी तथा बाल-बच्चों से उसका गहरा प्रेम था। उसका हृदय कोमल था। वह दूसरों के प्रति दया एवं सहानुभूति का भाव रखता था। वह अनावश्यक खून-खतरा में अभिरुचि नहीं रखता था।

तुर्की में बाबर का अर्थ शेर होता था और वह सचमुच शेर की तरह वीर एवं साहसी था। जीवन के विद्यालय में उसने बहुत से अनुभवों को प्राप्त किया था। उसे बहुत कष्ट सहने पड़े थे, उसे कई बार पराजित भी होना पड़ा था। फिर भी वह कभी निराश नहीं होता था। वह बहुत ही अध्यवसायी, परिश्रमी और धैर्यशील था। वह विषम परिस्थिति पर काबू पाने की अद्भुत क्षमता रखता था। शरीर से वह बहुत ही मजबूत था। कहा जाता है कि वह दो आदमियों को अपनी दोनों बगलों में दबा कर किसी किले की दीवार पर दौड़ सकता था। वह कई कई मीलों तक लगातार घोड़े की सवारी कर सकता था। वह किसी भी नदी को आसानी से पार कर सकता था। वह थकावट तो जानता ही नहीं था।

बाबर इस्लाम धर्म का सच्चा अनुयायी थी। वह ईश्वर और प्रार्थना में बहुत विश्वास करता था। उसने अपने सैनिकों की धार्मिक भावना को उत्तेजित किया था। वह पहले शराब खूब पीता था, किन्तु खानवा के युद्ध के समय इसे छोड़ देने के लिये प्रतिज्ञा कर ली। उसमें धर्मान्धता का अभाव था। धर्म के आधार पर दूसरे धर्म वालों के साथ वह अनुचित व्यवहार नहीं करता था।

सैनिक के रूप में—बाबर जन्मजात सैनिक था। उसमें सफल सेनानायक के आवश्यक गुण थे। यद्यपि उसे प्रारम्भिक दिनों में पराजित होना पड़ा था फिर भी उसने अपने बाहुबल से हिन्दुस्तान में एक राज्य कायम कर ही लिया। उसने भारत में चार युद्धों में विजय प्राप्त कर ली। सैनिक के रूप में उसकी योग्यता का यह प्रबल सबूत है। वह अपने सैनिकों में आत्मविश्वास और साहस पैदा कर सकता था। अपने सैनिकों का वह प्रिय नेता था। वह युद्धकला में निपुण था। तोपखाना का प्रयोग करने में वह कुशल था। वह चतुर शिकारी, कुशल तीरंदाज और उत्तम घुड़सवार था। अपने कर्त्तव्य-पालन में वह कोई भी

---

1 His engaging personality artistic temperament and romantic career made him one of the mest attractive figures in the history of Islam.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

त्याग और बलिदान करने के लिये सदा तैयार रहता था। वह अनुशासनहीन लोगों को कठोर दंड दिया करता था।

विद्वान् के रूप में—बावर एक सैनिक और विजेता ही नहीं था, वह एक विद्वान् भी था। वह प्रकृति और सौंदर्य का प्रेमी था। उसे कला और भाषा से भी प्रेम था। वह तुर्की भाषा का अच्छा जानकार था। उसकी आत्मकथा—बावरनामा (तुजुके बावरी)—तुर्की भाषा में अद्भुत ग्रन्थ है। इसका अनुवाद अंग्रेजी, फारसी और फ्रांसीसी भाषाओं में हो चुका है। इसमें वह अपनी गाथाओं के अतिरिक्त अन्य बातों का भी उल्लेख करता है। एलफिंस्टन के मतानुसार उसकी शैली सरल, जीवित और चित्रमय है। वह कवि भी था। वह तुर्की तथा फारसी भाषा में कविता लिखा करता था। वह संगीत में भी अभिरुचि रखता था। उसका दृष्टिकोण आलोचनात्मक था।

शासक के रूप में—बावर शासक के रूप में असफल रहा। वह एक महान् विजेता था किन्तु साम्राज्य-निर्माता नहीं था। उसने शासन-प्रणाली के क्षेत्र में कोई सुधार नहीं किया। कोई नया नियम नहीं बनाया गया। शासन का पुराना ढाँचा ही कायम रहा। इस तरह शासक के रूप में उसमें मौलिकता का अभाव था।

बावर ने साम्राज्य को कई भागों में बाँट दिया। सरदारों को गवर्नर के रूप में नियुक्त कर दिया गया। वे वार्षिक कर और सैनिक मदद दिया करते थे। इसके बाद उन पर कोई नियंत्रण नहीं था। अतः बावर के मरने के बाद वे उत्पात मचाने लगे। इस तरह उसने मध्यकालीन सामान्तशाही व्यवस्था को कायम रहने दिया था। अर्सकीन के मतानुसार भारत अब भी एक सुसंगठित राज्य नहीं था बल्कि अनेक राज्यों का समूह था। न्याय और न्यायालय के लिये उचित प्रबन्ध नहीं था।

बावर वित्त का कुशल प्रबन्धक नहीं था। उसने अर्थ या भूमि की कोई समुचित व्यवस्था नहीं की। आर्थिक क्षेत्र में एकरूपता नहीं थी। कृषि, व्यापार और व्यवसाय के विकास के लिये कोई प्रयत्न नहीं हुआ। मुसलमान स्टाम्प कर से मुक्त कर दिये गये। अतः आय के साधन सीमित थे। खजाने की रकम असावधानी के साथ लुटा दी गई। अतः उसने आर्थिक संकट को बढ़ावा दिया।

बावर ने भारत की जनता के सांस्कृतिक विकास के लिये भी कुछ नहीं किया। वह धर्मान्ध तो नहीं था फिर भी मुसलमानों को ही अपना अधिक निकट समझता था। उसने राजपूतों के साथ युद्ध को जेहाद (धर्मयुद्ध) की ही संज्ञा दी थी। वह हिन्दुओं को काफिर ही मानता था। इन

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सभी बातों से भारत की जनता के साथ वह निकट सम्पर्क कायम नहीं कर सका। अतः उसे जनता का सहयोग प्राप्त नहीं हो सका।

इन सभी त्रुटियों के कारण बाबर के उत्तराधिकारी पुत्र हुमायूँ को बहुत कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। रशब्रुक विलियम्स का कथन ठीक ही है कि "बाबर ने अपने बेटे को ऐसा राजतन्त्र दिया जो केवल युद्ध की स्थितियों में ही कायम रह सकता था और जो शान्ति काल में कमजोर, अव्यवस्थित और रीढ़हीन था।"[1]

बाबर का इतिहास में स्थान

लेकिन बाबर की त्रुटियों का उल्लेख करते समय इस बात का ख्याल रखना चाहिये कि उसका अधिकांश समय युद्धों में ही व्यतीत हुआ था। युद्ध से अवकाश मिलने के बाद वह शीघ्र ही मर गया। मृत्यु के समय (१५३० ई०) वह ४७ वर्ष का था। संभव है कि यदि कुछ समय तक और वह जीवित रहता तो कुछ और काम करता। फिर भी जो कुछ त्रुटियाँ बाबर में थीं उन त्रुटियों के रहने पर भी कई महान् इतिहासकारों ने उसकी प्रशंसा ही की है। लेनपूल का कथन है कि "वह मध्य एशिया तथा भारतवर्ष, लुटेरे झुंडों तथा सुसंगठित साम्राज्यवादी शासन-व्यवस्था, तैमूर तथा अकबर को जोड़ने वाली एक कड़ी है।"[2] डा० स्मिथ का मत है कि "वह अपने समय का एशिया का सर्वाधिक प्रतिभाशाली राजकुमार था। वह किसी भी युग या देश के सम्राटों में एक उच्च स्थान के योग्य था।"[3] इस कथन में अत्युक्ति है फिर भी इससे बाबर की महानता का परिचय मिलता है।

कुछ लोग बाबर को मुगल साम्राज्य का वास्तविक संस्थापक नहीं मानते हैं। वह अपनी त्रुटियों के कारण सुदृढ़ साम्राज्य कायम नहीं कर सका। वह साम्राज्य

---

1. Babur bequeathed to his son a monarchy which could be held together only by the continuance of war conditions, which in times of peace was weak, structureless and unvertebrate.
2. Babur is the connecting link between central Asia and India, predatory hordes and imperial government Tamarlane and Akbar.
3. Babur was the most brilliant Asiatic prince of his age and worthy of a high place among the sovereigns of any age or country.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उसके मरने के बाद समाप्त भी हो गया। फिर भी हो मुगल साम्राज्य की स्थापना में उसकी सर्वथा उपेक्षा नहीं की जा सकती। इस सम्बन्ध में लेनपूल का कथन स्मरणीय है कि "वह स्वयं एक भाग्यशाली सैनिक था, साम्राज्य निर्माता नहीं, फिर भी उसने उस शानदार इमारत (साम्राज्य) की नींव में पहला पत्थर रखा जिसे उसके पोते अकबर ने बनवायी।"[1]

1. Himself a soldier of fortune and no architect of empire, he yet laid the first stone of the splendid fabric which his grandson Akbar achieved.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अध्याय ३

हुमायूँ (१५३०--४० ई०, १५५५--५६ ई०)

राज्य रोहण—हुमायूँ बाबर का सबसे बड़ा लड़का था। वह १५०८ ई० में पैदा हुआ था। उसके तीन भाई और थे—कमरान, अस्करी और हिन्दाल। हुमायूँ को अच्छी शिक्षा पाने का अवसर मिला था। वह अरबी, तुर्की और फारसी भाषाओं का अच्छा ज्ञाता था। उसे गणित, ज्योतिष आदि कई विषयों की अच्छी जानकारी थी। उसे कला से भी प्रेम था। वह कलाकारों और विद्वानों का संरक्षक था। इस तरह वह सुशिक्षित व्यक्ति था। वह उदार और सहृदय व्यक्ति भी था। हुमायूँ को सैनिक और राजकीय कामों का भी अनुभव हो चुका था। वह अपने पिता के साथ कुछ युद्धों में भाग ले चुका था। वह अपने पिता को राजकीय कामों में भी मदद देता था।

अतः बाबर ने अपनी जिन्दगी में ही हुमायूँ को अपना उत्तराधिकारी निश्चित कर दिया था। इस तरह उसके मर जाने पर १५३० ई० में हुमायूँ दिल्ली की गद्दी पर बैठा।

हुमायूँ की कठिनाइयाँ—हुमायूँ को जीवन भर कष्टों एवं कठिनाइयों का सामना करना पड़ा था। अतः यह कहा जाता है कि "हुमायूँ जीवन भर ठोकर खाता रहा और ठोकर खाते-खाते ही उसके जीवन का अन्त हुआ।"[१] लेनपूल का कथन है कि हुमायूँ शब्द का अर्थ भाग्यशाली होता है किन्तु किसी भी दुर्भाग्यशाली राजा का ऐसा अनुपयुक्त नाम नहीं पड़ा है।[२] हुमायूँ के दुखमय और दुर्भाग्यपूर्ण जीवन के लिये दो कारण थे—उसकी अपनी भूलें और चारित्रिक दोष तथा प्रतिकूल परिस्थितियाँ। इन दोनों कारणों में भी परिस्थितियों की अपेक्षा हुमायूँ स्वयं ही अधिक उत्तरदायी था। अतः ऐसा भी कहा

---

1. Humayun tumbled through life and he tumbled out of it.
2. His name Humayun means fortunate but never was an unlucky sovereign more miscalled.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जाता है कि 'हुमायूँ स्वयं ही अपना सबसे बड़ा दुश्मन था' या हुमायूँ का सबसे बड़ा दुश्मन हुमायूँ स्वयं था।

अब नीचे प्रकाश डाला जाता है कि हुमायूँ के दुर्भाग्य के लिये कहाँ तक परिस्थिति उत्तरदायी थी और कहाँ तक वह स्वयं उत्तरदायी था।

१५३० ई० में बाबर जिस परिस्थिति मे मरा वह परिस्थिति हुमायूँ के लिये अनुकूल नहीं थी। बाबर अपने पुत्र के लिये फूलों की नहीं, काटों की सेज छोड़कर मरा। हुमायूँ को बहुत सी कठिनाइयाँ एवं समस्याएँ अपने पिता से ही विरासत के रूप में प्राप्त हुई। प्रो० रशब्रुक विलियम्स ने कहा है कि "बाबर ने अपने पुत्र के लिये ऐसा राज्य छोड़ा था जो लगातार युद्ध की ही दशा में टिक सकता था और जो शान्तिकाल में कमजोर, आधारहीन तथा रीढ़हीन था।"

बाबर की त्रुटियाँ

शासक के रूप में बाबर की जो त्रुटियाँ थीं वे हुमायूँ के लिये कठिनाइयाँ थीं। बाबर ने युद्धों में विजय प्राप्त की, प्रदेशों पर अधिकार किया किन्तु शासन का संगठन नहीं किया। शासन की पुरानी, अव्यवस्थित एवं शिथिल प्रणाली कायम रही। मध्यकालीन जागीरदारी व्हवस्था जारी रही। आय के साधन नहीं बढ़ाये गये और राजकोष खाली हो गया। जनता का सहयोग या समर्थन नहीं पाया गया। हिन्दुओं के साथ घनिष्ठ सम्पर्क कायम नहीं हो सका।

पराजित अफगान और राजपूत

बाबर विरासत के रूप में दुश्मनों को भी छोड़ गया। उसने अफगानों और राजपूतों से युद्ध किया और इन्हें पराजित भी किया। किन्तु ये सिर्फ कमजोर हो गये, विनष्ट नहीं हुए। ये स्वाभिमानी जातियाँ थीं। ये अपने गौरवपूर्ण जीवन को याद करते थे और मुगलों को खदेड़ देने के लिये अवसर की प्रतीक्षा करते थे।

त्रुटिपूर्ण सैन्य-व्यवस्था

मुगल सेना मिश्रित सेना थी। इसमें कई जातियों और कई भाषाओं के सैनिक मिले-जुले थे। अतः सैनिकों में भावात्मक एकता नहीं थी। सैनिक सुशिक्षित एवं राजभक्त भी नहीं थे।

गद्दी के लिये षड्यन्त्र

उत्तराधिकार के सम्बन्ध में कोई स्पष्ट विधान नहीं था। राजपद पाने के प्रयत्न में निकट सम्बन्ध का भी कोई ख्याल नहीं किया जाता था।[1] अतः एक

1. Kingship knew no kinship.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

राजा के मर जाने पर उसके पुत्रों में गद्दी के लिये संघर्ष शुरू हो जाता था। पिता के जीवन काल में भी संघर्ष होने लगता था। तलवार के द्वारा ही अधिकार का अन्तिम निर्णय होता था।[2] दरबारी लोग भी षड्यन्त्र में जुट पड़ते थे। इस तरह हुमायूँ के तीनों भाई भी गद्दी के लिये दावेदार थे।

इब्राहिम लोदी का भाई महमूद लोदी, गुजरात का बहादुरशाह और बिहार का शेर खाँ भी दिल्ली की गद्दी के लिये प्रयत्नशील थे। बंगाल का शासक नसरत शाह महमूद लोदी का समर्थक था। इस तरह ये सभी हुमायूँ के प्रबल विरोधी एवं दुश्मन थे।

हुमायूँ को बाबर का अन्तिम आदेश

मरने से पहले बाबर ने हुमायूँ को आदेश दे दिया था कि वह अपने भाइयों के साथ उदारतापूर्वक व्यवहार रखे। हुमायूँ अपने पिता का भक्त था। अतः उसने बाबर के आदेश का पालन करने के लिये भी प्रयत्न किया। उसने अपने भाइयों के प्रति दया दिखलायी किन्तु उसके भाई कृतघ्न और विश्वासघाती निकले।

इस प्रकार हुमायूँ को अपने पिता से विरासत में कठिनाइयाँ प्राप्त हुईं। किन्तु हुमायूँ अपनी भूलों से उनमें वृद्धि की।[3] हुमायूँ के बदले उस समय किसी दूसरे बाबर या अकबर जैसे शासक की जरूरत थी। अकबर को भी विषम परिस्थिति का सामना करना पड़ा था और उसने उस पर विजय प्राप्त की थी। शेरशाह ने भी प्रतिकूल परिस्थिति पर विजय पायी थी। यदि हुमायूँ भी बाबर, अकबर या शेरशाह की तरह योग्य होता तो वह परिस्थितियों पर अधिकार कर आगे बढ़ सकता था।

चारित्रिक दोष

लेकिन हुमायूँ के चरित्र में कई त्रुटियाँ थीं। वह परिश्रमी, अध्यवसायी और दूरदर्शी नहीं था। वह वीर, साहसी, सज्जन और विद्वान् था किन्तु उसमें शासक के गुण नहीं थे। उसमें दृढ़ता एवं निर्णयात्मक शक्ति का अभाव था। वह शराबी और अफीमची था। उसमें लगातार प्रयत्न या परिश्रम करने की क्षमता नहीं थी। वह भोग-विलास में भी लिप्त रहता था। विजय की घड़ी में उतावला बन जाता था। वह अपना अधिकांश समय महल एवं महिलाओं के बीच व्यतीत

---

2. Sword was the grand arbiter of right and every son was prepared to try his fortune against his brothers.

3. "Humayun had a rich legacy of difficulties from his father which he made richer by his own mistakes."

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

करता था। ऐसा आदमी सफल सैनिक एवं निपुण नेता भी नहीं बन सकता था।

हुमायूँ धन और समय की कीमत को नहीं समझता था। अतः वह इन दोनों ही का पर्याप्त मात्रा में दुरुपयोग करता था।

हुमायूँ यह नहीं समझता था कि कब किसके साथ दया का वर्ताव करना चाहिये और कब किसको कितना दंड देना चाहिये। अतः जब दुश्मन को दंड देने की आवश्यकता होती थी तो वह उसके प्रति दया दिखलाने लगता था। इस तरह वह सर्प को दूध पिलाकर पालता था किन्तु बुद्धि और विवेक के अभाव के कारण वह नहीं समझता था कि इससे वह अपने ही पैर में कुल्हाड़ी मार रहा है।

भूलें—इन चारित्रिक दोषों के कारण हुमायूँ ने मनुष्यों और परिस्थितियों को ठीक-ठीक नहीं समझा और उसने अनेक भूलें कर अपनी ही जड़ खोद दी।

साम्राज्य-विभाजन—पठान और मुगलकाल में राजशक्ति के सामने सम्वन्ध (Kinship) का तो कोई मूल्य ही नहीं था। तब फिर भाइयों के प्रति हुमायूँ को दया दिखलाने की क्या जरूरत थी? पिता-भक्त और भाई-भक्त होने के कारण हुमायूँ ने साम्राज्य को ४ भागों में बाँट दिया। कमरान को काबुल और कांधार, अस्करी को संभल और हिंदाल को मेवात दिये गये। दिल्ली, आगरा और आसपास के कुछ अन्य स्थान हुमायूँ ने अपने अधीन रखा। कमरान ने शीघ्र ही पंजाब और हिसार फिरोजा (दिल्ली के निकट) भी दखल कर लिया। हुमायूँ ने विरोध और लड़ाई करने के बदले इन राज्यों पर कमरान का अधिकार मान लिया। काबुल, कन्धार और पंजाब से बेदखल हो जाने के कारण हुमायूँ के लिये सैनिक और घोड़े मिलने का स्रोत (source) ही बन्द हो गया। हिसार फिरोजा पर कमरान का अधिकार होने से दिल्ली और पंजाब के मध्य के राजमार्ग पर भी उसी का प्रभुत्व हो गया। हुमायूँ को आय की भी नुकसानी हुई।

कालिंजर पर धावा—हुमायूँ की दूसरी भूल थी कालिंजर पर धावा बोलना। कालिंजर बुंदेलखंड में स्थित था। यहाँ का शासक विद्रोही अफगानों का सहायक था। अतः १५३१ ई० में हुमायूँ ने कालिंजर के दुर्ग पर धावा बोल दिया। कई महीने तक इसका घेरा जारी रहा। किन्तु हुमायूँ को जब बिहार में अफगानों के बढ़ने का समाचार मिला तो उसने शीघ्र ही दुर्ग पर अधिकार किये बिना ही कालिंजर के शासक से समझौता कर लिया और घेरा उठा लिया।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बिहार पर धावा—बिहार के पठान महमूद लोदी के नेतृत्व में जौनपुर की ओर बढ़ते जा रहे थे। हुमायूँ भी आगरे से एक सेना के साथ उसका अवरोध करने के लिये चला। दोनों की मुठभेड़ दौहरिया (लखनऊ के निकट) नामक स्थान पर हुई। महमूद हारकर बिहार की ओर भाग आया।

हुमायूँ महमूद का पीछा करता हुआ बिहार पहुँचा। बिहार में उसने १५३२ ई० में चुनार के दुर्ग को घेर लिया। चुनार का दुर्ग शेर खाँ के अधीन था। उसकी शक्ति बड़ी तेजी से बढ़ रही थी। चार मास तक चुनार का घेरा जारी रहा। अन्त में शेर खाँ ने उसकी अधीनता मान ली और समझौता के लिये अनुरोध किया। हुमायूँ ने शेर खाँ को पूरा दबाये बिना ही उसकी बात मान ली। हुमायूँ आगरा वापस चला गया और शेर खाँ को बिहार में बढ़ने के लिये सुअवसर प्राप्त हो गया। हुमायूँ की यह तीसरी भूल थी।

गुजरात पर धावा—बिहार से लौटने के बाद हुमायूँ आगरे में मौज और मस्ती में अपना समय बिताने लगा। वह धन भी खूब उड़ाता था। इस तरह उसके दो वर्ष (१५३३-३४ ई०) व्यतीत हुए। यह हुमायूँ की चौथी भूल थी। इसी अवधि में उसका एक दुश्मन बहादुरशाह अपनी शक्ति बढ़ाने में प्रयत्नशील था।

बहादुरशाह गुजरात का शासक था। वह भी दिल्ली का सम्राट् बनने का स्वप्न देख रहा था। वह हुमायूँ के विरोधियों को अपने राज्य में शरण देता था। उसने मालवा और मेवाड़ को भी दखल कर लिया था।

हुमायूँ ने पाँचवीं भूल की कि उसने समय पर बहादुरशाह का डटकर मुकाबला नहीं किया। चुनार का प्रथम घेरा उठाने के बाद उसे आगरा लौटने के बदले गुजरात पर धावा बोलना चाहिये था। किन्तु उसने ऐसा नहीं करके दुश्मन को बढ़ने का मौका दिया।

हुमायूँ ने एक और छठी भूल की। बहादुरशाह ने जब (१५३४ ई०) चित्तौर पर हमला किया था तो रानी कर्णवती ने हुमायूँ से सहायता माँगी थी। यदि मुगल और राजपूत मिल जाते तो वे बहादुरशाह को कुचल देते। किन्तु हुमायूँ ने समय पर मेवाड़ को मदद नहीं दी। बहादुरशाह ने मेवाड़ पर अधिकार कर अपनी शक्ति और अधिक बढ़ा ली।

इसके शीघ्र ही बाद (१५३४ ई०) हुमायूँ को गुजरात पर धावा बोलना ही पड़ा। बहादुरशाह ने मुहम्मदजमां खाँ नामक एक भागे हुए विद्रोही सरदार को शरण दी थी। हुमायूँ ने उसे निकाल देने के लिये आदेश दिया। बहादुरशाह ने उसे नहीं निकाला। अब हुमायूँ ने रंज होकर गुजरात पर चढ़ाई कर दी।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बहादुरशाह ने खुलकर हुमायूँ का मुकाबला नहीं किया। उसने एक बार मांडू में और दूसरी बार चम्पानेर में शरण ली। किन्तु हुमायूँ ने मांडू और चम्पानेर दोनों ही पर (१५३५ ई०) अधिकार कर लिया। अब बहादुरशाह भागकर पुर्तगालियों के राज्य ड्यू में चला गया। हुमायूँ ने मालवा और गुजरात दोनों पर अधिकार कर लिया।

हुमायूँ ने सातवीं भूल की। वह फिर रास-रंग, भोग-विलास में मस्त हो गया। उसने विजित राज्यों के शासन को संगठित करने के लिये कुछ नहीं किया। उसने वहाँ के सरदारों या प्रजा को भी अपनी ओर आकृष्ट करने के लिये कोई प्रयत्न नहीं किया। हुमायूँ ने आठवीं भूल यह की कि उसने न तो बहादुरशाह का ड्यू तक पीछा ही किया और न उसके विरुद्ध पुर्तगालियों को ही अपने पक्ष में मिलाने का प्रयास किया। इन दोनों भूलों का परिणाम यह हुआ कि हुमायूँ की अनुपस्थिति में बहादुरशाह ने फिर (१५३६ ई०) गुजरात और मालवा पर अपना अधिकार जमा लिया।

शेरखाँ से संघर्ष

चुनार की विजय—जब हुमायूँ गुजरात में व्यस्त था तो शेर खाँ बिहार और बंगाल में अपनी शक्ति बढ़ा रहा था। अब उसकी बढ़ती हुई शक्ति को रोकने के लिये हुमायूँ पूर्व की ओर बढ़ा। उस समय शेर खाँ बंगाल में था। इस समय हुमायूँ ने नवीं भूल की। वह सीधे बंगाल की ओर नहीं गया। बीच में वह चुनार के दुर्ग को जीतने में (१५३७ ई०) व्यस्त हो गया। वहाँ हुमायूँ करीब ६ मास तक रुका रहा। इस बीच शेरखाँ ने बंगाल की राजधानी गौड़ को जीत लिया। उसने रोहतास पर भी अधिकार कर लिया था। उसे बहुत धन भी हाथ लगा था। उधर चुनार की विजय से हुमायूँ को कोई विशेष लाभ भी नहीं हुआ।

बंगाल पर हमला—जब हुमायूँ गौड़ पहुँचा तब तक शेरखाँ दूसरे रास्ते से बिहार में वापस चला आया। शेरखाँ ने बनारस, जौनपुर और कन्नौज के आसपास के भूभागों को अपने अधीन कर लिया। उधर हुमायूँ ने गौड़ पर विजय प्राप्त की। अफगानों ने तो गौड़ को पहले ही उजाड़ डाला था। अतः हुमायूँ को गौड़ की विजय से कोई लाभ नहीं हुआ। वह वहाँ करीब आठ महीने तक पड़ा रहा। तब तक वर्षा ऋतु का आरम्भ हो गया। मलेरिया बीमारी फैल गयी। इससे उसके बहुत सैनिक मृत्यु के शिकार हो गये। दिल्ली आगरा से उसका सम्पर्क टूट गये। शेरखाँ पश्चिम को ओर से उसके पास कोई समान भी नहीं जाने देता था। बंगाल (गौड़) में दीर्घकाल तक रुकना हुमायूँ की दसवीं भूल थी।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

चौसा का युद्ध—अन्त में १५३९ ई० में हुमायूँ गौड़ से लौटने के लिये बाध्य हुआ। लेकिन शेरखाँ ने चौसा[1] में हुमायूँ की लौटती हुई सेना पर अचानक हमला कर दिया। हुमायूँ घबड़ा गया। वह अपनी जान बचाने के फेरे में घोड़े पर सवार होकर भागा और गंगा नदी में कूद पड़ा। घोड़ा तो डूब गया किन्तु एक भिश्ती (निजाम) ने उसकी जान बचा ली। इस उपकार के बदले हुमायूँ ने एक दिन के लिये भिश्ती को अपनी राजगद्दी सौंप दी थी। उसी समय भिश्ती ने चमड़े का सिक्का चलवाया था। शेरखाँ को खुले युद्ध का मौका देना हुमायूँ की ग्यारहवीं भूल थी।

चौसा की हार ने हुमायूँ की कमर तोड़ दी। मुगल सेना की हिम्मत टूट गयी। लगभग आठ हजार मुगल सैनिक मार डाले गये थे। शेर खाँ को बहुत सामान हाथ लगे थे। अब शेरशाह का उत्साह बहुत बढ़ गया। उसने शेरशाह की उपाधि धारण कर ली।

बिलग्राम का युद्ध—लेकिन हुमायूँ के दुर्दिन अभी समाप्त नहीं हुए थे। वह अभी भी शेरशाह से अपनी पराजय स्वीकार करने को तैयार नहीं था। यह उसकी मूर्खता थी और यह थी उसकी बारहवीं भयंकर भूल। उसने १५४० ई० में शेरशाह पर हमला कर दिया। कन्नौज के पास बिलग्राम में दोनों में युद्ध हुआ। हुमायूँ फिर बुरी तरह परास्त हो गया।

अब दिल्ली और आगरे पर शेरशाह का अधिकार हो गया। वह भारत का सम्राट् बना और कुछ समय के लिये (१५४०--५५ ई०) मुगल राजसत्ता का अन्त हो गया।

हुमायूँ की असफलता के कारण

प्रतिकूल परिस्थितियाँ—परिस्थितियाँ प्रतिकूल थीं। हम देख चुके हैं कि उसे अपने पिता से विरासत में अनेक कठिनाइयाँ और समस्याएँ प्राप्त हुई थीं।

चारित्रिक दुर्बलताएँ—हम यह भी देख चुके हैं कि उसके चरित्र में कई दोष थे। वह शराबी और अफीमची था। वह विलासी था। उसे महल और महिलाओं से विशेष प्रेम था। वह रति की भक्ति करता था जिससे उसकी शक्ति की क्षति हुआ करती थी। वह समय और धन दोनों का दुरुपयोग करता था। उसमें विवेक और संकल्प शक्ति का अभाव था। उसमें सफल शासक या सैनिक की योग्यता नहीं थी। वह बहुत ही अधिक उदार और सज्जन था।

---

१ चौसा गंगा नदी के किनारे बक्सर के पास एक स्थान है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नेपोलियन प्रथम का मत था कि यदि जिस राजा को लोग नेक कहें तो समझना चाहिये कि वह असफल शासक है।

भूलें—चारित्रिक दुर्बलताओं के कारण हुमायूँ ने अनेक भूलें कीं। इसके पूर्व हम उसकी विभिन्न भूलों पर दृष्टि पात कर चुके हैं।

आर्थिक संकट—हुमायूँ को धन का भी अभाव था। बाबर ने राजकोष खाली कर दिया था। हुमायूँ को जो धन मिलता था उसे वह पानी की तरह भोग-विलास पर खर्च करता था।

भाइयों की कृतघ्नता—हुमायूँ ने अपने तीन भाइयों के प्रति उदारता दिखलायी थी किन्तु तीनों भाई कृतघ्न निकले। हुमायूँ को किसी ने समय पर सहायता नहीं दी।

शेरखाँ की योग्यता—शेरखाँ में अनेक गुण थे। हुमायूँ से उसकी कोई तुलना ही नहीं थी। वह महान् सैनिक, सफल सेनापति और चतुर कूटनीतिज्ञ था।

हुमायूँ का निर्वासन—हुमायूँ बिलग्राम के युद्ध में हार कर मारा-मारा फिरने लगा। वह पंजाब पहुँचा और उसने कमरान से मदद माँगी। कमरान ने अंगूठा दिखा दिया। अब निराश हो हुमायूँ राजपूताना होता हुआ सिन्ध पहुँचा। वहीं पर अमरकोट में अकबर का जन्म (१५४२ ई०) हुआ और बैरमखाँ से हुमायूँ का साथ हुआ।

अन्त में हुमायूँ ईरान पहुँचा। वहाँ के शाह (तहमसिप) ने उसे मदद देना स्वीकार किया। इसके लिये हुमायूँ को दो शर्तें माननी पड़ीं। शिया धर्म मानने और कान्धार शाह को सौंपने के लिये हुमायूँ को राजी होना पड़ा। शाह ने उसकी सहायता में चौदह हजार की सेना दी। हुमायूँ ने काबुल और कन्धार पर ईरानी सेना की मदद से विजय प्राप्त की।

अब कमरान की आँखें फोड़कर उसे मक्का भेज दिया गया। असकरी को भी वहीं भेजा गया। हिंदाल युद्ध में मार दिया गया।

हुमायूँ की वापसी—१५४५ ई० में शेरशाह की मृत्यु हो गयी। उसके उत्तराधिकारी दुर्बल थे। अतः अनुकूल स्थिति पाकर हुमायूँ ने १५५५ ई० में लाहौर पर अधिकार कर लिया। उसी साल उसने सिकन्दर सूर को सरहिन्द के युद्ध में पराजित कर दिया। इसके बाद दिल्ली-आगरा पर भी हुमायूँ का अधिकार हो गया। इस प्रकार उसने अपने खोये हुए राज्य को फिर प्राप्त कर लिया।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हुमायूँ की सफलता के कारण

हुमायूँ का अध्यवसाय—हुमायूँ अध्यवसायी और साहसी था। उसमें धैर्य भरा हुआ था। अनेक कठिनाइयों और पराजयों के बाद भी उसने हिम्मत नहीं हारी। उसने राज्य-प्राप्ति का प्रयत्न जारी रखा और अन्त में उसे सफलता मिली।

शेरशाह की मृत्यु—१५४५ ई० में शेरशाह की मृत्यु हो गयी।

दुर्बल अफगान शासक—शेरशाह के उत्तराधिकारी दुर्बल थे। वे आपस में लड़ने-झगड़ने लगे।

ईरानी सहायता—ईरान के शाह ने हुमायूँ को सैनिक सहायता दी थी।

बैरमखाँ का सहयोग—बैरम खाँ योग्य और चतुर व्यक्ति था। उसने भी हुमायूँ को सहायता दी।

हुमायूँ की मृत्यु—लेकिन हुमायूँ अपने राज्य का सुख बहुत दिनों तक नहीं भोग सका। पुस्तकालय भवन की सीढ़ी से गिरकर १५५६ ई० में वह इस संसार से चल बसा।

इस तरह उसके जीवन की समस्त घटनाओं पर अवलोकन करने से स्पष्ट हो जाता है कि वह बड़ा ही अभागा सम्राट् था। लेनपूल के शब्दों में "हुमायूँ के गिरने की यदि कोई सम्भावना होती थी तो वह इससे बच नहीं सकता था।"[1]

⊙

1. If there was a possibility of falling, Humayun was not the man to miss it.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अध्याय ४

सूर वंश

शेरशाह (१५४०-५५ ई०)

भूमिका—हम कह चुके हैं कि पानीपत और गागरा के युद्धों में अफगानों की पराजय हुई किन्तु उनका सर्वथा विनाश नहीं हुआ। अभी उनमें जीवनीशक्ति कायम रही। शेरशाह ने अफगानों का एक बार फिर संगठन किया और मुगलों के हाथ से शासनसूत्र छीन लिया। इस तरह उसने सूरवंश स्थापित किया। इस वंश ने १५ वर्षों तक (१५४०-५५ ई०) भारत में राज्य किया।

शेरशाह का प्रारंभिक जीवन—शेरशाह के पूर्वज गोमल नदी पर स्थित पेशावर के निकट रोह के पहाड़ी प्रदेश में रहते थे। शेरशाह का प्रारंभिक नाम फरीद था। उसके पिता का नाम हसन और दादा का नाम इब्राहिम था। इब्राहिम घोड़े का व्यापार करता था। किन्तु इस व्यापार में उसे पूरी सफलता नहीं मिली। अतः वह अपने पुत्र हसन को लेकर नौकरी की खोज में भारत चला आया। उस समय दिल्ली में बहलोल लोदी का शासन था। हरयाना और बाखला (होशियार पुर) के जागीरदारों के यहाँ इब्राहिम को नौकरी भी मिल गयी। दिल्ली के निकट ही हिसार फिरोजा में १४८६ ई० में फरीद का जन्म हुआ था।

कुछ समय के बाद हसन ने जौनपुर के गवर्नर जमाल खाँ के यहाँ नौकरी शुरू की। जमाल खाँ ने हसन को ससराम, खासपुर और टांडा की जागीरें दे दीं। हसन को चार पत्नियाँ थीं। वह अपनी छोटी पत्नी से बहुत अधिक प्रेम करता था और उसी के हाथ का खिलौना बन गया था। किन्तु वह फरीद से बहुत डाह करती थी। हसन भी फरीद की माँ को प्यार नहीं करता था। फरीद के साथ अपमानजनक व्यवहार होता था। अतः ससराम में पिता और सौतेली माँ के साथ उसका मन नहीं लगता था। २२ वर्ष की उम्र में वह घर छोड़ कर जौनपुर चला गया।

जौनपुर में शिक्षा-दीक्षा—जौनपुर शिक्षा और इस्लामी संस्कृति का प्रमुख केन्द्र था। फरीद विद्याध्ययन में बड़ी तत्परता से जुट गया। वह पढ़ने में तेज

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

निकला। उसने अरबी, फारसी भाषाओं में विद्वत्ता प्राप्त कर ली। जमाल उसकी विद्वत्ता और प्रतिभा से बहुत ही प्रभावित हुआ। उसने पिता और पुत्र में समझौता करा दिया। उसी के प्रभाव से हसन ने ससराम की जागीर भी अपने पुत्र के हाथ सौंप दी।

जागीर का प्रबन्धकर्त्ता—अब फरीद ससराम पहुँचा। वह जागीर का प्रबन्ध करने लगा। ससराम की जागीर उसके लिए एक उत्तम विद्यालय सिद्ध हुई। वह करीब २१ वर्षों तक जागीर का प्रबन्ध करता रहा और उसने उसे एक आदर्श जागीर के रूप में बदल दिया। उस जागीर में बसने वाले लोग सुख और शान्ति का अनुभव करते थे। फरीद ने वहीं पर शासन सम्बन्धी कई अनुभवों को प्राप्त किया जो बाद में भी लाभदायक सिद्ध हुए।

आगरे में फरीद का आगमन—ससराम में फरीद की प्रतिभा और सफलता को देखकर उसकी सौतेली माँ और उसके सौतेले भाई उससे जलने लगे थे। फरीद को बहुत तंग किया जाने लगा। अतः वह ससराम छोड़ कर (१५१८) आगरे चला गया। उसने अपने पिता की जागीर के लिये इब्राहिम लोदी से अनुरोध किया। इब्राहिम लोदी हसन के विरुद्ध कोई कार्यवाही करना उचित नहीं समझता था। अतः शुरू में इब्राहिम लोदी ने कोई अभिरुचि नहीं दिखलायी। लेकिन कुछ समय के बाद (१५२० ई०) हसन की मृत्यु हो गयी। अब इब्राहिम लोदी ने पिता की जागीर पर एक फरमान के द्वारा फरीद का अधिकार मान लिया। अब फरीद फिर ससराम लौट आया।

ससराम के वातावरण में कोई सुधार नहीं हुआ था। उसके एक सौतेले भाई ने जागीर के विभाजन का प्रश्न उठाया। फरीद ने ऊब कर ससराम फिर छोड़ दिया (१५२२ ई०)।

बहार खां लोहानी की नौकरी में—अब फरीद ने दक्षिण बिहार के एक स्वतंत्र शासक बहारखां लोहानी के यहाँ शरण ली। बहारखां ने फरीद को अपने यहाँ काम दिया। उसकी प्रतिभा देखकर बहारखां बहुत प्रभावित था। एक दिन फरीद ने एक शेर को मार डाला। तब से उसका नाम शेरखाँ पड़ गया। लेकिन फरीद के बढ़ते हुए प्रभाव को देखकर दूसरे अफगान बेचैन होने लगे और बहार खाँ से उसकी शिकायत करने लगे। बहारखां दूसरों के बहकावे में पड़कर फरीद को अपने यहाँ से निकाल दिया। वह पैतृक जागीर से भी बेदखलकर दिया गया।

बाबर की नौकरी में—अब शेरखां फिर आगरा चला गया। वहाँ उसने बाबर से भेंट की और उसके यहाँ नौकरी पकड़ ली। बाबर ने उसे अपनी सेना

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

में एक काम दे दिया। शेरखां ने बड़ी ईमानदारी से सवा वर्षों तक बाबर की सेवा की। अन्त में बाबर की मदद से फिर शेरखाँ को पैतृक जागीर मिल गयी और वह (१५२८ ई०) ससराम वापस चला आया। बाबर के यहाँ भी शेरखां ने सेना और शासन सम्बन्धी बहुत सी बातें सीखी थीं।

बिहार का उपसूबेदार—शेरखां ने १५२८ ई० में फिर बहार खां (सुलतान मुहम्मद) लोहानी के यहाँ नौकरी शुरू की। शेरखां बहार खां के पुत्र जलाल खां का शिक्षक और संरक्षक बन गया। कुछ समय के बाद बहारखाँ की मृत्यु हो गयी। जलाल खाँ अभी नाबालिग था। अतः उसकी विधवा माता (दुदु बीबी) संरक्षक के रूप में कार्य करने लगी। उसने शेरखाँ को बिहार का उपसूबेदार (डिप्टी गवर्नर या वकील) बना दिया। इस तरह व्यावहारिक रूप में बिहार के शासन का भार शेरखाँ के हाथ में आ गया।

कुछ समय के बाद दुदु बीबी की भी मृत्यु हो गयी। अब शेरखाँ धीरे-धीरे राज्य की सारी शक्ति अपने हाथों में कर ली। बालिग हो जाने पर जलालखाँ अपने हाथों में शासन सूत्र ले लेना चाहता था। अन्य लोहानी सरदार भी इसके लिये जलाल खाँ को उत्साहित करते थे। जलाल खाँ ने बंगाल के सूबेदार नसरत शाह से भी सहायता माँगी। नसरत शाह सहायता देने के लिये तैयार था।

बिहार पर अधिकार—बंगाल का सूबेदार नसरत शाह जलाल खाँ की मदद में बिहार पहुँचा। किन्तु १५२९ ई० में शेरखाँ ने उसे परास्त कर दिया। अब नसरत शाह बंगाल भाग कर चला गया। जलाल खाँ भी अपने कई सरदारों के साथ वहीं चला गया। अब शेरखाँ बिहार का वास्तविक शासक बन गया। उसने हजरते आला की उपाधि धारण की और सुचारू रूप से वह राज्य सम्भालने लगा। १५३० ई० में उसने चुनार के भूतपूर्व सूबेदार (ताज खाँ) की विधवा (लाड मलिका) से विवाह कर लिया। इससे चुनार पर शेरखाँ का अधिकार हो गया और उसे धन भी प्राप्त हुआ। १५३२ ई० में जब हुमायूँ ने चुनार पर हमला किया तो शेरखाँ ने बड़ी बुद्धिमानी के साथ आत्म-समर्पण कर दिया और अपने दुर्ग तथा धन को बर्बाद होने से बचा लिया। हुमायूँ लौटकर चला गया।

बंगाल पर हमला—बंगाल का शासक जलाल खाँ के सहायक थे। चुनार के घेरे के समय भी उन्होंने शेरखाँ के प्रति कोई सहानुभूति नहीं दिखलायी थी। शेरखाँ की बढ़ती हुई शक्ति को देखकर बंगाल के नये सूबेदार महमूद शाह और जलाल खाँ दोनों ही चिन्तित और भयभीत थे। अब १५३३ ई० में शेरखाँ ने बंगाल पर हमला कर दिया। शेरखाँ और महमूद शाह की सेनाओं में सूरजगढ़ में (१५३४ ई०) घमासान युद्ध हुआ। शेरखाँ विजयी हुआ। इस विजय से शेरखाँ

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

के नाम में चार चाँद लग गये। इसके परिणाम बड़े ही महत्वपूर्ण हुए। डा० कानूनगो के मतानुसार इस विजय ने शेरखाँ को हिन्दुस्तान के राजनैतिक क्षेत्र में उतार दिया।

हुमायूँ के साथ युद्ध[१]—बंगाल के सूबेदार महमूद शाह ने हुमायूँ से सहायता माँगी। हुमायूँ भी शेरखाँ की बढती हुई शक्ति का समाचार सुनकर चिन्तित था। हुमायूँ गुजरात के अभियान को अधूरा ही छोड़ कर बंगाल की ओर चल पड़ा। रास्ते में उसने चुनार का घेरा डाला (१५३७ ई०) और ६ मास तक वहीं पड़ा रहा। तब तक शेरखाँ ने बंगाल की राजधानी गौड़ और रोहतासगढ़ पर भी अधिकार कर लिया। जब हुमायूँ गौड़ पहुँचा तो शेरखाँ बिहार चला आया। हुमायूं को चुनार और गौड़ पर अधिकार करने से कोई लाभ नहीं हुआ। शेरखाँ अपना धन लेकर रोहतासगढ़ चला गया था। जब हुमायूँ गौड़ में ८ महीने तक पड़ा रहा तब शेरखाँ ने उत्तरी भारत में जौनपुर, बनारस, कन्नौज आदि स्थानों पर अधिकार कर लिया।

हुमायूँ जब बंगाल से लौटने लगा तो शेर खाँ ने उसकी सेना पर चौसा नामक स्थान पर हमला कर दिया (१५३९ ई०)। हुमायूँ बुरी तरह हार कर अपनी जान लेकर भागा। दूसरे साल हुमायूं ने कन्नौज के पास शेर से फिर युद्ध किया और वह फिर हार गया। चौसा की विजय के बाद ही शेरखाँ ने शेरशाह की उपाधि धारण की। उसके नाम में सिक्के जारी हुए और फतवा पढ़े जाने लगे। १५४० ई० में शेरशाह भारत का सम्राट् बन गया। हुमायूं इधर-उधर भटकने लगा।

अन्य विजय—शेरशाह हुमायूँ का पिछा करता हुआ पंजाब पहुँच गया। उसने पंजाब में स्थित गक्खड़ प्रदेश के अधिकांश भागों को जीत लिया। उसी समय बंगाल के गवर्नर (खिजर खां) ने विद्रोह किया। शेरशाह ने विद्रोह को दबाकर उसे कैद कर लिया। इसके बाद उसने मालवा पर (१५४२ ई०) विजय प्राप्त की। उसने रायसीन (मध्य भारत) के किले पर भी धावा बोल दिया। यह उस समय पूरन मल के अधिकार में था। कुछ समय के बाद पूरनमल ने भी हथियार डाल दिया। शेरशाह ने सिन्ध और मुलतान पर भी अधिकार कर लिया था।

१५४३ ई० में शेरशाह ने जोधपुर (मारवाड़) के मालदेव पर हमला किया। शेरशाह राजपूतों की वीरता देखकर आश्चर्यचकित था। वह तलवार के द्वारा उन्हें जीतने में असफल रहा। अतः उसने धोखाबाजी का सहारा लेकर

१ विस्तृत अध्ययन के लिये अध्याय ३ भी देखिये।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

राजपूतों में फूट पैदा की। इस तरह वह सफल हुआ। किन्तु यह विजय बहुत महंगी पड़ी थी। शेरशाह के धन-जन की बहुत हानि हुई थी। २ वर्षों के वाद जोधपुर फिर स्वतन्त्र भी हो गया। जोधपुर की विजय के सम्वन्ध में चिन्ता करते हुए उसने एक वार कहा भी था कि 'मैंने मुट्ठीभर बाजरे के लिये हिन्दुस्तान के राज्य को प्रायः खो ही दिया था।'

कालिंजर की विजय और उसकी मृत्यु—१५४५ ई० में शेर शाह ने कालिंजर पर आक्रमण किया। दुर्ग को घेर लिया गया। लेकिन बारूदखाने में आग लग गयी और उसी में शेर शाह की मृत्यु हो गया। किन्तु उसके सैनिकों ने दुर्ग पर विजय प्राप्त कर ली।

इस प्रकार शेरशाह एक योग्य सेनानायक और महान् विजेता था।

शासन-प्रबन्ध

केन्द्रीय शासन—दिल्ली के अन्य मुसलमान शासकों की तरह शेरशाह भी एक निरंकुश और शक्तिशाली शासक था। शासन का वह केन्द्रबिन्दु था और सारी शक्ति उसके ही हाथों में केन्द्रित थी। उसे सहायता देने के लिये मंत्री होते थे। किन्तु आधुनिक मंत्रिमण्डल और शेरशाह के मंत्रिमंडल में कोई समता नहीं है। शेरशाह ने सुविधा के लिये केन्द्रीय प्रशासन कई विभागों में संगठित कर दिया था। प्रत्येक विभाग के लिये मंत्री नियुक्त होता था। लेकिन मंत्रिमंडल का वही प्रधान था। सम्राट् के ही आदेश से मंत्री अपने विभाग का कोई काम करता था। मंत्री न तो कोई नई नीति अपना सकता था और न शासन के ढांचे में कोई हेरफेर कर सकता था। मंत्री हर तरह से सम्राट् के ही प्रति उत्तरदायी थे।

केन्द्र में निम्नलिखित प्रमुख विभाग थे :—

(१) दीवाने वजारत—इस विभाग के मंत्री को वजीर कहा जा सकता है। उसका काम वित्त मंत्री और प्रधान मंत्री का होता था। वह साम्राज्य की आय और व्यय की जाँच करता था। वह दूसरे मंत्रियों के कामों का भी निरीक्षण करता था।

(२) दीवाने आरिज—इस विभाग का मंत्री आरिजेम मालिक कहलात था। वह सेना-सचिव का काम करता था। सेना की भर्ती, सेना का वेतन, संगठन आदि काम उसी के अधीन थे।

(३) दीवाने रसालत—उस विभाग के मंत्री को परराष्ट्र मंत्री कह सकते हैं। वह देश से बाहर गये हुए और देश में बाहर से आये हुए राजदूतों की

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

देखभाल करता था। वही राजनैतिक पत्र व्यवहार की भी देखरेख करता था।

(४) दीवाने इन्शा—इस विभाग का मंत्री गृह तथा सूचना मंत्री का काम करता था। वह प्रान्तीय सूबेदारों तथा अन्य अधिकारियों से पत्राचार करता था। सरकारी रेकर्ड वगैरह भी उसी के अधीन थे। वह शाही घोषणाओं और आदेशों का भी प्रचार करता था।

ऐसे ही कुछ अन्य प्रमुख विभाग थे। दीवाने कजा का अध्यक्ष प्रधान काजी था। वह साम्राज्य की न्याय-व्यवस्था की देखरेख करता था। दीवाने वारिद गुप्तचर विभाग था। यही विभाग शाही डाक का भी प्रबन्ध करता था। शाही घराने की देखरेख करने के लिये भी एक विभाग था।

प्रान्तीय शासन—सम्पूर्ण साम्राज्य ४७ भागों में विभाजित था। प्रत्येक भाग को इकता कहा जाता था। यह आधुनिक प्रान्त की तरह था। लेकिन सभी इकता क्षेत्र में एक समान नहीं थे। डा० कानूनगो तथा डा० ईश्वरी प्रसाद जैसे इतिहासकारों का मत है कि सरकार साम्राज्य की सबसे बड़ी इकाई थी और समस्त साम्राज्य ४७ सरकारों में ही विभाजित था।

जो भी मत ठीक हो किन्तु सरकार साम्राज्य का प्रमुख विभाजन था। सरकार को आधुनिक जिले से तुलना की जा सकती है। प्रत्येक सरकार में दो प्रमुख अधिकारी रहते थे—प्रधान शिकदार (शिकदारे शिकदारान) और प्रधान मुन्सिफ (मुन्सिफे मुन्सिफान)। प्रधान शिकदार सरकार का सबसे बड़ा सैनिक पदाधिकारी था। सरकार में शान्ति-व्यवस्था कायम रखना उसका मुख्य कार्य था। वह फौजदारी मामलों की भी देखभाल करता था। प्रधान मुन्सिफ के अधीन दीवानी मामले दोनों पदाधिकारी परगनों के सीमा सम्बन्धी झगड़ों का भी निर्णय करते थे। वे अपने क्षेत्र में परगनों के कर्मचारियों के ऊपर निगरानी रखते थे। और विद्रोहात्मक कार्यों का दमन करते थे।

सरकार परगनों में विभाजित था। प्रत्येक परगने में एक शिकदार होता था। उसका प्रमुख काम था परगने में शान्ति व्यवस्था की देखभाल करना। शिकदार के सिवा परगना में एक मुन्सिफ, एक खजांची, एक अमीन और हिन्दी तथा फारसी के एक-एक लिपिक (क्लर्क) भी रहते थे। अमीन का प्रधान काम लगान वसूल करना था। वह सीधे सम्राट् के प्रति उत्तरदायी था।

परगना ग्रामों में विभाजित था। प्रत्येक ग्राम में एक पटवारी, एक चौधरी और एक मुकदम हुआ करते थे। ग्रामीणों की स्वतंत्रता सुरक्षित थी। प्रत्येक ग्राम में पंचायत थी। यह ग्राम की समस्याओं की देखभाल करती थी।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बदली का सिद्धान्त—एक ही स्थान पर एक अफसर के कई वर्षों तक लगातार रहने से उसका प्रभाव बहुत बढ़ सकता है और वह सरकार के लिये सिरदर्द उत्पन्न कर सकता है। अतः शेरशाह ने २-३ वर्षों के अन्तर पर सरकारी कर्मचारियों को एक स्थान से दूसरे स्थान पर बदल देने का सिद्धान्त अपनाया।

आर्थिक व्यवस्था—शेरशाह अपने पिता के समय में और पिता के मरने के बाद भी अपनी जागीर का बड़ी कुशलता के साथ प्रबन्ध कर चुका था। अतः उसने पर्याप्त अनुभव प्राप्त कर लिया था। आर्थिक क्षेत्र में उसे टोडरमल से भी बहुमूल्य सहायता प्राप्त हुई थी। अतः उसने आर्थिक क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण सुधार किया।

भूमि-सुधार—शेर शाह ने सारी भूमि की पैमाइश करा दी। उपजाऊ शक्ति के आधार पर भूमि का ३ श्रेणियों में विभाजन हुआ। उसी आधार पर लगान भी निश्चित कर दिया गया। उपज का $\frac{1}{3}$ भाग कर के रूप में देने के लिये निश्चित हुआ। यह कर अन्न या रुपये दोनों रूप में अपनी सुविधा के अनुसार दिया जा सकता था। प्रत्येक किसान को सरकार की ओर से पट्टा (Title deed) लिख कर दिया जाता था। इसमें भूमि की मात्रा और लगान की रकम का उल्लेख रहता था। किसान को कबूलियत (Agreement) लिख देनी पड़ती थी। इसमें किसान के द्वारा लगान की निश्चित रकम को चुकाते रहने की प्रतिज्ञा करनी पड़ती थी। लगान वसूल करने के लिये जमींदार या ठीकेदार नियुक्त नहीं किये गये थे। किसान सीधे सरकारी खजाने में लगान की रकम जमा कर सकता था। इस तरह किसान तथा सरकार के बीच सीधा सम्बन्ध स्थापित हो गया।

लगान लगाते समय उदारता दिखलाई जाती थी किन्तु वसूली के समय कड़ाई की जाती थी। ईश्वरीय या प्राकृतिक प्रकोप के कारण किसानों को जब नुकसानी पहुँचती थी तब उन्हें राज्य की ओर से सुविधाएँ दी जाती थीं। सैनिकों को कड़ा आदेश था कि वे किसानों को किसी प्रकार की क्षति नहीं पहुँचावें। ऐसा करने पर सैनिकों को दंड और किसानों को हर्जाना (क्षतिपूर्ति) दिये जाते थे।

वेतन देने की प्रथा—पहले जागीरदारी प्रथा थी। सरकार की ओर से लोगों को जागीर दी जाती थी। जागीरदार सुलतानों को निश्चित कर और सेना दिया करते थे। किन्तु इस प्रथा में बहुत दोष थे। शेरशाह ने जागीरदारी प्रथा उठा दी। उसने सरकारी कोष से सरकारी कर्मचारियों को नगद वेतन देने की प्रथा चलायी।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आय के साधन—आय के साधनों में भूमिकर का प्रमुख स्थान था। किन्तु कुछ अन्य साधनों द्वारा भी आय होती थी। व्यापार के सम्बन्ध में चुंगी वसूल होती थी। जजिया तथा कुछ अन्य कर भी लगते थे।

मुद्रा-सुधार—शेरशाह ने मुद्रा में भी सुधार किया। मुद्रा पद्धति में कई दोष आ गये थे। सिक्के घिस गये थे। विभिन्न धातुओं के सिक्कों के मध्य निश्चित अनुपात नहीं था। सिक्कों में एकरूपता का भी अभाव था। दिल्ली सल्तनत के अन्तिम समय में सिक्कों का मूल्य भी गिरने लगा था। शेरशाह ने इन दोषों को दूर किया। उसने सोने, चांदी और तांबे के सिक्के चलाये। इनका अनुपात भी नियत किया गया। तांबे के पैसे और चांदी के रुपये चलाये गये। सिक्कों पर सम्राट् के नाम, उसकी पदवी और टकसाल-स्थान के नाम लिखे हुए होते थे। उसके चलाये हुए रुपये मुगल और अंग्रेजी शासनकाल में भी काफी समय तक प्रचलित रहे। डा० स्मिथ के मतानुसार शेरशाह का चालू किया हुआ "रुपया ब्रिटिश मुद्रा-पद्धति का आधार था"[1]

वाणिज्य-व्यापार का भी विकास हुआ। मुद्रा सुधार से वाणिज्य-व्यापार को बहुत प्रोत्साहन मिला। साम्राज्य में शान्ति-व्यवस्था भी कायम रहने से व्यापार के विकास में सुविधा हुई। पहले जगह-जगह पर चुंगियाँ लगती थीं जिनके कारण व्यापार में बाधा होती थी। शेरशाह ने उन चुंगियों को हटा दिया। अब केवल राज्य की सीमाओं और बिक्री के स्थानों पर ही चुंगी जारी रखी गई।

सैनिक संगठन—शेरशाह स्वयं योग्य सैनिक, कुशल सेनानायक था। वह सैनिक-संगठन के महत्त्व को अच्छी तरह समझता था। सल्तनत काल में सैन्य-व्यवस्था जागीरदारी प्रथा पर आधारित थी। सुलतान सेना के लिए जागीरदारों पर निर्भर करते थे। सैनिक सम्राट् की अपेक्षा अपने जागीरदार के प्रति अधिक भक्त होता था।

शेरशाह ने जागीरदारी प्रथा को समाप्त कर दिया। उसने मनसबदारी प्रथा भी नहीं चलायी। उसने आधुनिक ढंग की एक स्थायी सेना का निर्माण किया। उसकी सेना के चार अंग थे—पैदल, घुड़सवार, हाथी और तोपखाना। सैनिकों की भर्ती में शेरशाह स्वयं बहुत अभिरुचि रखता था। योग्यता के आधार पर सैनिकों की भर्ती की जाती थी। उन्हें नगद वेतन भी मिलता था।

---

१ It was the basis of the Britsih Currency,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शेरशाह ने घोड़ों को दागने की प्रथा चलायी थी। घोड़े को दागने से कोई उसे बेच या बदल नहीं सकता था। सैनिकों का पूरा विवरण रखा जाता था। इन नियमों को चलाने में वह अलाउद्दीन से प्रभावित हुआ था।

सेना कई भागों में बँटी होती थी। देश के प्रमुख भागों में छावनियाँ होती थीं। वहाँ सैनिकों के रहने की व्यवस्था थी। छावनी में सेना की जो टुकड़ी रहती थी उसे फौज कहते थे। उसके ऊपर एक फौजदार रहता था। दिल्ली और रोहतास की छावनियाँ बहुत प्रसिद्ध थीं।

सैनिक संगठन में धर्म या जाति का कोई ख्याल नहीं किया जाता था। उसकी सेना में हिन्दू भी भर्ती होते थे। ब्रह्मजीत गौड़ उसका एक प्रधान और विश्वसनीय सेनापति था।

सैनिक अनुशासनप्रिय होते थे। वे अनावश्यक रक्तपात करने या उत्पात मचाने में अभिरुचि नहीं रखते थे। उन्हें सम्राट् की ओर से आदेश था कि वे किसानों को किसी प्रकार से हानि नहीं पहुँचावें और औरतों को अपमानित न करें। सैनिक अपने सेनापति के प्रति बहुत भक्ति रखते थे।

पुलिस—शेरशाह का पुलिस-प्रबन्ध भी सराहनीय था। स्थानीय अपराधों के लिये स्थानीय अधिकारियों को उत्तदायी समझा जाता था। यदि कहीं चोरी या हत्या होती थी तो उस इलाके के मुकदम का कर्त्तव्य था कि वह अपराधी को खोज निकाले। यदि वह अपराधी का पता नहीं लगा सकता था तो उसे ही दंड भोगना पड़ता था। घूसखोरी की प्रथा नहीं थी। इस तरह साम्राज्य में अमन-चैन कायम रखने में पुलिस का बहुमूल्य सहयोग प्राप्त था। इससे यात्रियों और व्यापारियों को बहुत सुविधा थी। कहा जाता है कि शेरशाह के राज्य में एक बुढ़िया भी अपने सिर पर सोने से भरी हुई टोकरी रखकर शान्तिपूर्वक यात्रा कर सकती थी। किसी चोर या डाकू को उसके पास जाकर लूट-पाट करने की हिम्मत नहीं होती थी। पकड़े जाने पर अपराधियों को कठोर सजा दी जाती थी।

गुप्तचर विभाग—हम कह चुके हैं कि केन्द्र में एक गुप्तचर विभाग भी होता था। यह विभाग भी खूब ही संगठित था। साम्राज्य के विभिन्न भागों में गुप्तचर रहते थे और वे सम्राट् को विविध सूचनाएँ भेजा करते थे। मुहतसिब नामक अफसर प्रजा तथा कर्मचारियों के चरित्र पर ध्यान रखते थे।

न्याय—शेरशाह न्यायप्रिय सम्राट् था। वह निष्पक्ष और शीघ्र न्याय का समर्थक था। न्याय करने में वह जाति, धर्म या हैसियत से प्रभावित नहीं होता था। कानून और न्याय की दृष्टि में सभी एक समान थे। वह अपने निकट सम्बन्धियों के साथ भी पक्षपात नहीं करता था। कोई भी अपराधी हो

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अनुसार उसे दंड मिलना निश्चित था । दुर्बलों और गरीबों के साथ भरसक अन्याय नहीं किया जाता था ।

सब जगह न्यायालय थे । परगना में काजी और अदल दीवानी मामलों का निर्णय करते थे । शिकदार फौजदारी मामलों का और मुन्सिफ लगान सम्बन्धी मामलों को देखते थे । ऊपर के न्यायालयों में अपील भी होती थी । हिन्दू सम्पत्ति, उत्तराधिकार आदि से सम्बन्धित झगड़ों का निर्णय पंचायतों में कराते थे । लेकिन फौजदारी मामलों में राज्य के कानून उन पर भी लागू थे ।

दंड-विधान कठोर था । बहुत से अपराधों में फाँसी की भी सजा होती थी । चोरी-डाके के अपराध में भी प्राणदंड दिया जाता था । अपराधियों में भय उत्पन्न करने के उद्देश्य से ही दंड दिया जाता था ।

जनहित के अन्य कार्य—शेरशाह अपनी प्रजा का शुभचिन्तक था । उसने जनहित सम्बन्धी अनेक कार्यों को किया । उसने साम्राज्य में चार प्रमुख सड़कों का निर्माण किया । सबसे प्रमुख और बड़ी सड़क पूर्व में सुनारगाँव (बंगाल) से पश्चिम में सिन्ध नदी तक (पंजाब) गई थी । इसकी लम्बाई लगभग ३००० मील (१५०० कोस) थी । सड़कों के दोनों ओर छायादार वृक्ष लगाये गये । चार-चार मीलों की दूरी पर सरायों का निर्माण हुआ । सराय के पास एक कुआं और एक मस्जिद का भी प्रबन्ध था । कुछ कर्मचारी भी रहते थे । सरायों में हिन्दू और मुसलमान दोनों के रहने का प्रबन्ध था । सरायों के साथ जमीनें भी होती थीं । उन जमीनों से जो आय होती थी उसी से कर्मचारियों का खर्च भी चलाया जाता था ।

सड़कों और सरायों से बहुत फायदे हुए । शान्ति-सुरक्षा स्थापित करने में सुविधा हुई । व्यापार को प्रोत्साहन मिला । साम्राज्य के सभी भाग एक दूसरे से और फिर राजधानी से सम्बन्धित हो गते । प्रो० कानूनगो के शब्दों में "ये सड़कें साम्राज्य की वास्तविक नसें थीं जिनके कारण उसके निर्जीव अंगों में एक नई जान आ गयी ।"[1] सराय डाकचौकी के रूप में भी उपयोगी थी ।

डाक का भी प्रबन्ध था । घोड़े के द्वारा डाक भेजी जाती थी । उसके मरने के बाद भी उसकी डाक-व्यवस्था लगभग दो शताब्दियों तक जारी रही ।

शेरशाह का मूल्यांकन

चरित्र—मध्यकालीन भारत के मुसलमान शासकों में शेरशाह का स्थान बहुत ही उच्च है । वह एक साधारण जागीरदार का लड़का था । उसे लड़कपन

---

१ These were the veritable arteries of the empire diffusing a new life amog its hitherto benumbed limbs. Shershah—Page—392

RajGuru Math Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

में बहुत से कष्टों और कठिनाइयों का सामना करना पड़ा था। न तो उसे पिता का प्यार प्राप्त था और न माता का दुलार। अतः उसने जीवन के विद्यालय में बहुत से अनुभवों को प्राप्त किया और बहुत सी शिक्षाओं को ग्रहण किया। वह साहसी, धैर्यशील और परिश्रमी था। वह गरीबों, असहायों और औरतों के प्रति उदार था। वह मित्रों के प्रति सच्चा और दुश्मनों के प्रति कठोर था। वह अपनी योग्यता, प्रतिभा और बुद्धिमत्ता के ही कारण साधारण जागीरदार से भारत का सम्राट् हो गया। वह मस्तिष्क और हृदय के अनेक गुणों से ओत-प्रोत था। अतः एक सेनापति, विजेता तथा शासक के रूप में उसने बहुत प्रसिद्धि पायी।

शेरशाह विद्वान् था और वह विद्वानों का आदर करता था। वह शिक्षा की प्रगति के लिये प्रयत्न करता था। शिक्षण संस्थाओं को अनुदान मिलता था। योग्य छात्रों को आर्थिक सहायता मिलती थी। वह कला का भी प्रेमी था। उसके शासन काल में वास्तु कला में एक नयी शैली का आरंभ हुआ। बिहार राज्य के अन्दर सहसराम में निर्मित उसका मकबरा वास्तुकला का उत्तम उदाहरण है। उसने दिल्ली में पुराने किले के भीतर एक अच्छी मस्जिद का भी निर्माण कराया था।

शेरशाह में दानशील भावना थी। उसने राज्य में कई अनाथालय और भोजनालय स्थापित किया। असहाय व्यक्तियों के लिये मुफ्त दवा, भोजन आदि देने की व्यवस्था की गई थी।

सैनिक के रूप में—शेरशाह योग्य सैनिक और सेनानायक था। वह अपने सैनिकों को खूब मानता था। उसके सैनिक भी उसमें बहुत विश्वास रखते थे। इस तरह शेरशाह ने अपने सैनिकों की मदद से और अपने बाहुबल से एक विशाल साम्राज्य का निर्माण किया।

शासक के रूप में—शेरशाह एक महान् विजेता ही नहीं था, कुशल शासक भी था। कीन का मत है कि "किसी भी सरकार ने यहाँ तक कि ब्रिटिश सरकार ने भी इतनी बुद्धिमत्ता नहीं दिखलायी है जितनी कि इस पठान ने दिखलायी है।"[1] प्रो० कानूनगों के शब्दों में "शेरशाह अफगानों में सर्वश्रेष्ठ शासक और सैनिक था।"[2]

शेरशाह आधुनिक ढंग का शासक था। उसे आधुनिक शासक माना जाता है। उसकी शासन-प्रणाली में आधुनिकता के बहुत सिद्धान्त और तत्त्व पाये

1. No government, not even the British have shown so much wisdom as this Pathan.

2. Shershah was the greatest administrative and military genius among the Afgans.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जाते हैं। श्री कानूनगो का कथन है कि उसकी शासन प्रणाली आधुनिक शासन प्रणाली की आधारशिला है।

१. शक्तिशाली केन्द्र—शेरशाह शक्तिशाली केन्द्र का महत्व समझता था। अतः उसने सबल केन्द्रीय शासन स्थापित किया। सारी शक्ति उसी के हाथ में केन्द्रित थी। शासन का वही सर्वेसर्वा था। वही नीति निर्धारित करता था। वही सभी विभागों और सभी कर्मचारियों पर निगरानी रखता था। इस तरह उसका शासन निरंकुश और एकात्मक (unitary) था।

२. प्रजा की भलाई—निरंकुश शासक होते हुए शेरशाह अपनी प्रजा का शुभचिन्तक था। उसके शासन काल में सर्वसाधारण के हित को प्रमुखता दी जाती थी। हम देख चुके हैं कि शेरशाह ने जनहित के अनेक उपयोगी कार्य किये।

३. सुदृढ़ आर्थिक स्थिति—शेरशाह ने राज्य की आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ किया। उसने कृषि और व्यापार के विकास पर जोर दिया।

४. धार्मिक सहिष्णुता—प्रो० श्री राम शर्मा के मतानुसार शेरशाह एक कट्टर सुन्नी मुसलमान था और उसके धार्मिक विचार संकुचित थे। उसने कई हिन्दू राज्यों पर हमला भी किया था। लेकिन शेरशाह को धर्मांध नहीं कहा जा सकता। डा० कानूनगो ने उसके धार्मिक विचार की प्रशंसा की है। शेरशाह ने धर्म को राजनीति से अलग रखा। वह हिन्दुओं की आकांक्षाओं एवं भावनाओं का ख्याल रखता था। राज्य की नौकरी देने में धर्म के आधार पर भेद-भाव नहीं किया जाता था। सब को धार्मिक स्वतन्त्रता थी। इस तरह वह मुसलमानों में सबसे पहला राष्ट्रीय शासक था।

५. निष्पक्ष न्याय—निष्पक्ष न्याय करना शेरशाह राजा का परम पवित्र कार्य समझता था। अतः वह न्याय और कानून के लिये सब को एक समान समझता था।

६. राजकीय विभाजन—शेरशाह ने शासन की सुविधा के लिये अपने साम्राज्य को कई इकाइयों (units) में बाँट दिया था। सभी इकाइयों में सरकारी पदाधिकारी होते थे। गांव में पंचायतें होती थीं। आजकल भी हम देखते हैं कि भारत कई प्रशासनिक इकाइयों में विभाजित है। परगना, अमीन, पटवारी आदि कई नाम अभी भी प्रचलित हैं। वर्त्तमान काल में जिलाधीश (कलक्टर) को शिकदरे शिकदारान का ही आधुनिक नवीन संस्करण कह सकते हैं।

शेरशाह के कई सुधार भी मुगलों तथा अंग्रेजों के लिये आधारशिला सिद्ध हुए जैसे भूमि सुधार, मुद्रा सुधार, सैन्यसंगठन, यातायात आदि।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

७. **वेतन और बदली के सिद्धान्त**—शेरशाह सरकारी पदाधिकारियों को एक स्थान पर २-३ वर्षों से अधिक समय तक नहीं रहने देता था। २-३ वर्षों पर उनकी एक स्थान से दूसरे स्थान पर बदली कर दी जाती थी।

सरकारी पदाधिकारियों, कर्मचारियों तथा सैनिकों को नियमित रूप से वेतन दिया जाता था।

वेतन देने और बदली करने के सिद्धान्त आजकल भी कार्य रूप में पाये जाते हैं।

८. **शान्ति एवं सुरक्षा**—जो सरकार अपने राज्य में शान्ति एवं सुरक्षा का समुचित प्रवन्ध नहीं कर सकती है वह कभी भी लोकप्रिय और स्थायी नहीं हो सकती है। किसी दिशा में कोई प्रगति भी नहीं हो सकती है। अतः शेरशाह ने अपने राज्य में शान्ति एवं सुरक्षा के लिये पूरा प्रवन्ध किया। उसके राज्य में किसी समय कोई यात्री कहीं से कहीं वहुमूल्य सामान लेकर बिना किसी भय के आ-जा सकता था।

अकबर के अग्रदूत के रूप में—अकबर मुगल शासकों में सबसे बड़ा शासक समझा जाता है। लेकिन उसके लिये भी शेरशाह ने बहुत से कार्यों में अग्रदूत का काम किया था। अकबर शासन प्रवन्ध में कई बातों में शेरशाह से ही प्रभावित हुआ था। अर्स्किन का कथन है कि "अकबर से पहले किसी भी दूसरे राजा में शेरशाह की तरह व्यवस्थापक और अपनी प्रजा के संरक्षक की भावना नहीं थी।"[1]

इस प्रकार शेरशाह वहुत ही योग्य व्यक्ति था। यदि वह कुछ समय तक और जीवित रहता तो भारत का इतिहास कुछ दूसरा ही होता। डा० स्मिथ का भी मत है कि "यदि शेरशाह अधिक समय तक जीवित रहता तो महान् मुगल इतिहास के रंगमंच पर नहीं आते। गद्दी के लिये उसका अधिकार हुमायूँ से कम नहीं था।"[2]

शेरशाह की सफलता के कारण

शेरशाह की सफलता के निम्नलिखित अनेक कारण थे:—

१. **हुमायूं की कठिनाइयाँ**—हुमायूं की कठिनाइयों से शेरशाह को सुविधाएँ प्राप्त हुई। हम देख चुके हैं कि हुमायूं को प्रतिकूल परिस्थितियों का सामना करना पड़ा था और इसके चलते उसे अनेक कठिनाइयाँ हुई थीं।

---

1. Shershah had more of the spir't of a legislator and of a guardian of his people than any prince before Akbar.

2. If Shershah had been shared, the great Mughals would not have appeared on the stage of history. His right to the throne was quite as good as that of Humayun.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

२. हुयायूं की भूलें—हुमायूं ने अनेक भूलें कीं। शेरशाह ने उन भूलों से पर्याप्त लाभ उठाया।

३. हुमायूं के चारित्रिक दोष—हुमायूं के चरित्र में कई कमजोरियाँ थीं। उसे भोग-विलास से शौक था। उसमें दृढ़ता का अभाव था। वह आवश्यकता से अधिक सज्जन एवं दयालु था।

४. भाइयों की कृतघ्नता—हुमायूं के अन्य तीन भाई कृतघ्न थे। उन्होंने समय पर हुमायूं की सहायता नहीं की।

५. धन का अभाव—हुमायूं के पास धन का अभाव था। धन के अभाव में कई कामों में रुकावट पैदा होती है।

६. प्रजा का असहयोग—हुमायूं अपनी प्रजा का शुभचिन्तक नहीं था। उसने जनहित सम्बन्धी कामों में अभिरुचि नहीं दिखलायी। अतः उसे प्रजा का सहयोग नहीं मिला।

७. शेरशाह के गुण—शेरशाह में हृदय और मस्तिष्क सम्बन्धी अनेक गुण थे। वह महान् योद्धा, अद्भुत साहसी, कुशल सेनापति और योग्य शासक था। वह अपनी प्रजा के हित का बहुत ख्याल रखता था।

शेरशाह के उत्तराधिकारी

शेरशाह के मरने के बाद उसका लड़का जलाल खां (इस्लामशाह-सलीम शाह) गद्दी पर बैठा। उसने ६ वर्षों तक (१५४५-५४) सफलतापूर्वक शासन किया। उसके बाद उसका पुत्र फिरोज गद्दी पर बैठा। वह नाबालिग था। अतः उसके चाचा उसे मार कर मुहम्मद आदिल शाह के नाम से गद्दी पर बैठा। वह अयोग्य था। अतः उसका मंत्री हेमू शासन सूत्र संचालित करता था। राज्य में जहाँ-तहाँ विद्रोह होने लगे। पंजाब के सूबेदार (अहमद खां सूर) ने सिकन्दर शाह के नाम से अपनी स्वतन्त्रता घोषित कर ली।

उधर हुमायूं भी भारत पहुँच गया। उसने सिकन्दर शाह सूर को सरहिन्द के पास हरा दिया और दिल्ली, आगरा तथा लाहौर पर (१५५५ ई०) अधिकार कर लिया। सूरवंश का अन्त हो गया।

सूरवंश के पतन के कारण

सूरवंश के पतन के अनेक कारण थे—(१) शेरशाह के द्वारा स्थापित किये हुए साम्राज्य को कायम रखने के लिये दूसरे शेरशाह की आवश्यकता थी। किन्तु शेरशाह के उत्तराधिकारी अयोग्य एवं दुर्बल निकले। (२) शेरशाह का उत्तराधिकारी इस्लाम शाह अपने अफगान सरदारों के साथ सहानुभूतिपूर्वक व्यवहार

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नहीं करता था। अतः अफगान सरदार असन्तुष्ट हो गये। उनमें फूट पैदा होने लगी। अफगान सरदार अपनी स्वतन्त्रता घोषित करने लगे। (३) केन्द्रीय शासन को कमजोर पाकर प्रान्तीय शासक स्वतन्त्र होने लगे। इस तरह साम्राज्य विभाजित होने लगा। (४) धन को पानी की तरह बहाया जाने लगा। अतः राजकोष खाली पड़ने लगा। (५) शेरशाह के उतराधिकारी हिन्दुओं के प्रति भी सम्मान एवं सहानुभूति के साथ व्यवहार नहीं करते थे। अतः उन्हें हिन्दुओं का समर्थन नहीं मिला। (६) हुमायूं को ईरान के शाह ने सेना से मदद दी और उसकी शक्ति बढ़ने लगी। वह राज्य-प्राप्ति के लिये बराबर प्रयत्न भी करता रहा और अन्त में सफल भी हुआ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अध्याय ५

मुगल साम्राज्य का विस्तार

अकबर (१५५५-१६०५ ई०)

भूमिका—हम देख चुके हैं कि हुमायूँ को १५५५ ई० में दिल्ली की गद्दी प्राप्त हो चुकी थी किन्तु दूसरे साल के आरम्भ में ही उसकी मृत्यु हो गयी। उसके बाद अकबर, जहाँगीर, शाहजहाँ और औरंगजेब—चार प्रमुख बादशाह हुए। इन चारों बादशाहों के समय में मुगल साम्राज्य का पर्याप्त विस्तार हुआ। लेकिन औरंगजेब के मरने के बाद (१७०७ ई०) मुगल साम्राज्य पतनोन्मुख हो गया।

प्रारम्भिक जीवन—अकबर का प्रारम्भिक जीवन कष्ट एवं कठिनाइयों के बीच व्यतीत हुआ था। जब हुमायूँ बेघर-बार का भटक रहा था उसी समय १५४२ ई० में अमरकोट नामक स्थान पर अकबर का जन्म हुआ था। उसकी माता का नाम हमीदा बानु बेगम था। पुत्र-जन्म की खुशी में हुमायूँ के पास बाँटने के लिये कुछ भी नहीं था। उसने केवल कस्तूरी बाँटी और कामना प्रकट की कि कस्तूरी की सुगन्ध की तरह उसके पुत्र के यश का प्रचार हो। उसकी कामना पूरी हुई। अकबर एक महान् सम्राट् हुआ।

हुमायूँ की मृत्यु के समय अकबर १४ वर्ष का नाबालिग था। उस समय वह पंजाब में था। उसे अपने बचपन में कुछ समय तक हुमायूँ के भाइयों की शरण में रहना पड़ता था। अकबर को पढ़ाने के लिये प्रबन्ध हुआ था किन्तु वह बहुत पढ़-लिख कर विद्वान् नहीं बन सका। लेकिन बैरम खाँ उसका संरक्षक था। बैरम खाँ योग्य एवं ईमानदार व्यक्ति था। उसके पथ-प्रदर्शन में अकबर ने बहुत सी व्यावहारिक शिक्षाएँ एवं अनुभव प्राप्त किये। जब अकबर बैरम खाँ के साथ सिकन्दर सूर का पीछा करने में व्यस्त था उसी समय उन्हें हुमायूँ के मरने का समाचार मिला। उस समय दोनों गुरदासपुर जिले में कलानौर नामक स्थान पर थे। बैरम खाँ ने शीघ्र ही सरदारों और सैनिकों को इकट्ठा किया और अकबर का राज्याभिषेक कर दिया। बैरम खाँ स्वयं उसका संरक्षक घोषित हुआ। (१५५६ ई०)।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

१५५६ ई० में राजनैतिक स्थिति—अकबर के राज्याभिषेक के समय भारत की राजनैतिक स्थिति बहुत ही खराब थी। शेरशाह के अयोग्य उत्तराधिकारियों के समय में केन्द्रीय शक्ति कमजोर हो गयी थी। हुमायूँ ने दिल्ली और आगरा पर अधिकार कायम कर लिया था किन्तु उसके शीघ्र ही मर जाने से साम्राज्य संगठित नहीं हो सका और प्रजा की गहरी सहानुभूति नहीं मिल सकी। भारत फिर कई स्वतन्त्र राज्यों में बँट चुका था। काश्मीर, सिन्ध, मुलतान, मालवा, गुजरात, गोंडवाना (मध्य भारत), उड़ीसा आदि सभी स्वतन्त्र राज्य थे। काबुल में अकबर का सौतेला भाई मिर्जा हकीम स्वतन्त्र शासक के रूप में राज्य कर रहा था। पश्चिम में समुद्र के किनारे पुर्त्तगाल वासियों ने अपना आधिपत्य कायम कर लिया था। राजपूत राज्यों ने स्वतन्त्रता पाने के अतिरिक्त अपनी शक्ति भी बढ़ा ली थी।

बिहार-बंगाल पर सूरवंशी शासक राज्य कर रहा था। मुहम्मद आदिलशाह तो योग्य सुलतान नहीं था किन्तु उसका मंत्री हेमू बड़ा ही योग्य और महत्त्वाकांक्षी था। वह मुगलों को भारत से खदेड़ कर सत्ता हथियाना चाहता था। दक्षिण में बहमनी राज्य पाँच टुकड़ों में बँट गया था—अहमदनगर, गोलकुंडा, बीदर, बरार और खानदेश। इन राज्यों पर मुसलमानों का शासन था। कृष्णा नदी के दक्षिण विजयनगर का हिन्दू साम्राज्य था। दक्षिण के इन राज्यों का दिल्ली से सम्बन्ध नहीं था।

दिल्ली के आसपास के भूभाग ही अकबर के अधीन थे। वह स्वयं १४ वर्ष का नाबालिग था। उसे अभी देश-दुनिया का कोई अनुभव नहीं था। उस समय अकबर में सेना की भक्ति भी संदेहात्मक थी।

देश की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं थी। उसी समय एक भारी अकाल पड़ा था। महामारी का भी प्रकोप था। भूख और बीमारी के कारण लोग बहुत बड़ी संख्या में मृत्यु के शिकार हो रहे थे।

इस प्रकार अकबर भयंकर कठिनाइयों से घिरा हुआ था। लेकिन वह घबरानेवाला व्यक्ति नहीं था। उसका संरक्षक बैरम खाँ भी साहसी और धैर्यशील था। डा० स्मिथ के कथनानुसार "सही अर्थ में सम्राट् होने के पहले अकबर को यह सिद्ध करना था कि दिल्ली की गद्दी के लिये संघर्ष करने वाले अपने प्रतिद्वंद्वियों से वह अधिक योग्य था। इस अधिकार का अन्तिम निर्णय तलवार के द्वारा ही हो सकता था।"[1]

---

१ अकबर—पृष्ठ ३१

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पानीपत का दूसरा युद्ध

कारण—१५५६ ई० में पानीपत का दूसरा युद्ध आरम्भ हुआ। हेमू नाम का एक बनिया था। वह बड़ा ही योग्य था, साथ ही चतुर एवं अध्यवसायी भी था। अपनी योग्यता के बल पर वह आदिलशाह सूर का मंत्री और सेनापति हो गया। इतना ही नहीं, शासन का वास्तविक संचालक वही बन बैठा। वह बड़ा ही महत्त्वाकांक्षी था। उसका अन्तिम उद्देश्य था मुगलों को खदेड़ कर भारत में हिन्दू राज्य स्थापित करना। हुमायूँ के मरने का समाचार मिलते ही उसने एक सेना के साथ दिल्ली की ओर प्रस्थान कर दिया। उसने आगरा पर अधिकार कर दिल्ली पर भी हमला कर दिया।

दिल्ली का मुगल सूबेदार तारदीबेग था। वह दिल्ली छोड़ कर भाग चला। हेमू ने दिल्ली पर अधिकार कर लिया और विक्रमादित्य की उपाधि धारण की।

युद्ध—हेमू की सफलता देखकर मुगल सरदार भयभीत हो गये। वे अकबर को काबुल भाग जाने के लिये सलाह देने लगे। किन्तु बैरम खाँ इसके पक्ष में नहीं था। उसने युद्ध के लिये तैयारी की। पानीपत के मैदान में अकबर और हेमू की सेनाओं में मुठभेड़ हुई। १५५६ का साल था। हेमू की सेना विशाल थी। प्रारम्भ में उसे सफलता भी मिल रही थी किन्तु भाग्य ने उसका साथ नहीं दिया। उसकी आँख में एक तीर अचानक लग गया। हेमू बेहोश होकर अपने हाथी पर से नीचे गिर गया। उसके सैनिक उसे मरा हुआ समझकर मैदान से भागने लगे। हेमू पकड़ लिया गया। मुगल विजयी हो गये।

परिणाम—पानीपत का यह दूसरा युद्ध महत्वपूर्ण और निर्णायक सिद्ध हुआ। हेमू के द्वारा अफगान या हिन्दू साम्राज्य कायम करने का प्रयत्न समाप्त हो गया। आगरा और दिल्ली पर अकबर का अधिकार हो गया।

अब अकबर का कोई विरोधी नहीं रह गया। सिकन्दर सूर ने आत्मसमर्पण कर दिया। उसके जीवन निर्वाह के लिये उसे कुछ जागीर दे दी गई। मुहम्मद आदिलशाह बंगाल के सूबेदार से लड़ते हुए मुंगेर में मारा गया। इब्राहिम सूर भी उड़ीसा की ओर भाग गया जहाँ उसकी हत्या कर दी गई (१५६६ ई०)। सिकन्दर भी बहुत समय तक जागीर का उपभोग न कर सका और मर गया। इस तरह सूर वंश के सभी विरोधी समाप्त हो गये। अब अफगानों की शक्ति भी समाप्त हो गयी।

अकबर के साहस और धैर्य में वृद्धि हुई। उसके सैनिकों के उत्साह और प्रतिष्ठा में भी वृद्धि हुई। अकबर ने भारत में मुगल साम्राज्य को बढ़ाने और सुदृढ़ करने का निश्चय किया।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अकबर की आर्थिक स्थिति भी अच्छी हो गयी। उसे हेमू की सेना के सामान तथा धन हाथ लगे। उसे बहुत से हाथी भी प्राप्त हुए।

बैरम खाँ के उत्साह और प्रतिष्ठा में भी वृद्धि हुई। अकबर उससे बहुत खुश हुआ और उसे खानखाना की उपाधि दी गई।

तारदीबेग और हेमू की हत्या—तारदी बेगदिल्ली का सूबेदार था। जब हेमू ने दिल्ली पर चढ़ाई की तो तारदी हेमू का सामना करने के बदले भाग चला। वह पकड़ा गया और उसे मार डाला गया।

तारदी बैरम का दुश्मन था। अतः बैरम ने उसे मरवा डाला। यदि तारदी बैरम का दुश्मन नहीं भी होता तो भी उसे कायरता के लिए दंड मिलना ही था। यदि दंड नहीं मिलता तो दूसरों पर भी इसका बुरा प्रभाव पड़ता। डा० स्मिथ के मतानुसार "यदि तारदी को कर्त्तव्यच्युत होने के लिये सजा नहीं दी जाती तो अकबर को अपने सिंहासन और जीवन दोनों से हाथ धोना पड़ता।"[1]

हम देख चुके हैं कि हेमू पानीपत की लड़ाई में आँख में तीर लग जाने से बेहोश हो गया था। वह अपने हाथी पर से नीचे गिर पड़ा था। उसे अकबर के सामने लाया गया। बैरम ने अकबर को उसे (हेमू) मार डालने की आज्ञा दी। अकबर ने अपने संरक्षक की आज्ञा मानकर हेमू का सिर काट दिया और गाजी की उपाधि धारण कर ली। कुछ लेखकों का कहना है कि अकबर ने एक असहाय एवं घायल बन्दी पर हाथ उठाने से अस्वीकार कर दिया। तब बैरम ने स्वयं ही हेमू का सिर काट डाला। किन्तु डा० स्मिथ ने इस मत को स्वीकार नहीं किया है। इनका कहना है कि उस समय बैरम जैसे संरक्षक की आज्ञा का उल्लंघन करना अकबर के लिये संभव नहीं था। यह भी संभव नहीं मालूम पड़ता है कि उतनी कम अवस्था में इतना सोच सका होगा कि असहाय व्यक्ति पर हाथ नहीं उठाना चाहिये।

बैरम खाँ का पतन—बैरम खाँ एक तुर्कवंशीय सरदार था। वह बड़ा ही योग्य, अध्यवसायी और व्यावहारिक व्यक्ति था। उसने बहुत ही विषम परिस्थिति में हुमायूँ का साथ दिया था। वह भारत से भागने के बाद भी हुमायूँ के ही साथ था। उसके प्रयास से हुमायूँ को ईरान से मदद मिली थी और फिर भारत की गद्दी प्राप्त हो सकी। उसने अकबर की बाल्यावस्था में संरक्षक का काम किया। हुमायूँ के मरने पर भी बैरम खाँ अकबर की सेवा करता रहा। पानीपत के दूसरे युद्ध और उसमें मुगल-विजय के लिये भी बैरम खाँ को ही श्रेय प्राप्त

---

१ अकबर पृ० ३६

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

है। उसके बाद भी करीब चार वर्षों तक (१५५६–६०) बैरम खाँ के ही हाथ में शक्ति कायम रही थी। इस अवधि में उसने मुगल साम्राज्य के विस्तार में भी सहयोग दिया था।

लेकिन धीरे-धीरे बैरम के चरित्र के दोष लोगों को दिखाई पड़ने लगे। उसमें शक्ति की वृद्धि के साथ-साथ अहंकार एवं अमानुषिकता की भावना बलवती होने लगी। वह अपने को मुगल राज्य के स्थायित्व के लिये अनिवार्य समझने लगा। अब वह दरबारियों के साथ अनुचित एवं अत्याचारपूर्ण व्यवहार करने लगा। अतः दरबार के लोग उससे अप्रसन्न होने लगे। अकबर की माता भी उससे नाखुश होने लगी थी। राजमहल की अन्य औरतें भी रंज हो गयी थीं। अतः सभी मिलकर बैरम के विरुद्ध अकबर के कान भरने लगे।

बैरम शिया मत का अनुयायी था। अतः वह शियों के साथ पक्षपात करने लगा। इससे सुन्नी लोग भी उससे बिगड़ने लगे थे।

अकबर भी अब १८ वर्ष का बालिग हो गया। उसकी सूझ बूझ की शक्ति अद्भुत थी। अब वह मनुष्यों और परिस्थितियों को समझने लगा था। वह भी बैरम खाँ के व्यवहार से असन्तुष्ट होने लगा था। उसे बैरम खाँ की सच्ची भक्ति में भी शंका होने लगी थी।

उपर्युक्त सभी बातों के कारण १५६० ई० में अकबर ने बैरम को पदच्युत कर शासनसूत्र को अपने हाथों में ले लिया। बैरम को मक्का चले जाने के लिये आदेश मिला। उसकी निगरानी करने के लिये एक व्यक्ति (पीर मुहम्मद) को भार सौंपा गया किन्तु बैरम उस व्यक्ति को बहुत ही नापसन्द करता था। अतः बैरम ने विद्रोह कर दिया। अकबर ने उसके विद्रोह को दबा दिया। बैरम को पकड़ा गया किन्तु अकबर ने उसकी पुरानी सेवाओं का ख्याल कर उसे क्षमा कर दी। अब बैरम ने मक्का के लिये प्रस्थान किया लेकिन रास्ते में (पाटन के पास) एक पुराने शत्रु ने उसकी हत्या कर दी (१५६१ ई०)।

साम्राज्य विस्तार

अकबर की धमनियों में तैमूर और बाबर का ही रक्त प्रवाहित होता था। अतः अपने कई पूर्वजों की तरह अकबर भी महत्वाकांक्षी और साम्राज्यवादी था। उसका ख्याल था कि राजा को विजयों के लिये सदा प्रयत्नशील रहना चाहिये। ऐसा नहीं करने से पड़ोसी विद्रोह कर सकते हैं और सैनिक आलसी बन सकते हैं। अतः शुरू से अन्त तक अकबर अपने राज्य का विस्तार करने के लिये प्रयत्न करता रहा। इस तरह उसने पश्चिम में काबुल से लेकर पूर्व में बंगाल तक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

और उत्तर में काश्मीर से लेकर दक्षिण में खानदेश तक एक विशाल साम्राज्य स्थापित किया। उसने इस विस्तृत भूभाग पर अपना शासन भी संगठित किया।

अजमेर, ग्वालियर और जौनपुर—सिकन्दर सूर को हराने के बाद मेवात और अजमेर पर अकबर ने अधिकार कर लिया। ये दोनों ही दो व्यक्तियों को जागीर के रूप में दे दिये गये। इसके बाद ग्वालियर और जौनपुर पर भी अधिकार कर लिया गया। ग्वालियर पर अधिकार होने से अकबर के बल और गौरव दोनों में वृद्धि हुई। वहाँ का दुर्ग बहुत ही प्रसिद्ध था।

मालवा—१५५६ ई० में बाजबहादुर मालवा का शासक नियुक्त हुआ था। वह योग्य व्यक्ति था किन्तु भोग-विलास में लिप्त रहता था। अकबर ने मालवा जीतने के लिये अधम खाँ और पीरमुहम्मद को भेजा। बाज बहादुर की हार हो गयी। युद्ध के बहुत सामान हाथ लगे। किन्तु अधम खाँ के लोभ और व्यवहार से अकबर असन्तुष्ट हो गया। अकबर ने उसे क्षमा कर दी। लेकिन मालवा का राज्य पीर मुहम्मद को सौंप दिया गया। किन्तु पीर मुहम्मद स्थिति को संभाल नहीं सका। बाज बहादुर ने फिर मालवा पर अधिकार कर लिया। लेकिन अन्त में उसने आत्मसमर्पण कर दिया। उसे एक हजार का मन्सब बना दिया गया।

गोंडवाना—गोंडवाना आधुनिक मध्य प्रान्त के उत्तर में स्थित था। यहाँ का शासक वीरनारायण था किन्तु वह अल्पवयस्क था। अतः उसकी माता दुर्गावती राज-काज संभालती थी। वह महोबा के चंदेल वंश की कन्या थी। वह बहुत कुशलता के साथ राज्य का काम कर रही थी। किन्तु अकबर उसके स्वतंत्र राज्य को पसन्द नहीं करता था। उसने आसफ खाँ को गोंडवाना पर विजय करने के लिये एक सेना के साथ भेजा। दुर्गावती ने मुगलों के साथ संघर्ष करने में बड़ी वीरता दिखलायी। किन्तु अन्त में वह हार गयी। उसने मुगलों के अपमान से बचने के लिये आत्महत्या कर ली। गोंडवाना पर अकबर का अधिकार हो गया।

रानी दुर्गावती ने मुगलों के विरुद्ध कोई कार्य नहीं किया था। फिर भी उसके राज्य पर हमला करना और उस पर अधिकार कर लेना बहुत अनुचित कार्य थे। स्मिथ के मतानुसार गोंडवाना पर अकबर का अभियान आक्रमण था जिसे किसी भी हालत में न्यायोचित नहीं कहा जा सकता।

राजपूत राज्य—१५६२ ई० में अकबर ने अम्बर (जयपुर) के कछवाहा राजा बिहारीमल की पुत्री से शादी कर ली और उसके पुत्र भगवानदास तथा उसके पोते मानसिंह को उच्च पद दिया।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अब उसकी दृष्टि मेवाड़ की ओर गई। मेवाड़ की राजधानी चित्तौर में थी। यहाँ सिसोदिया वंश के राजपूतों का राज्य था। मेवाड़ पर मुगल हमले के कई कारण थे। मेवाड़ राजपूताने का सबसे प्रसिद्ध और शक्तिशाली राज्य था। इस पर अधीनता हो जाने से अन्य राजपूत राज्यों के अधीन हो जाने की संभावना थी। दूसरे, मेवाड़ दिल्ली और गुजरात के बीच के रास्ते में स्थित था। तीसरे, मेवाड़ में मालवा के भगोड़े राजा वाज वहादुर को शरण मिली थी।

अब १५६७ ई० में अकबर ने चित्तौर पर चढ़ाई कर दी। उदय सिंह मेवाड़ का राणा था किन्तु उसमें साहस, वीरता एवं धैर्य का अभाव था। वह भयभीत हो अपनी राजधानी छोड़कर भाग गया। किन्तु उसके दो सरदार जयमल और पत्ता ने किले की भरपूर रक्षा की। लेकिन भाग्य ने साथ नहीं दिया। एक रात जयमल किले की टूटी हुई दीवाल की मरम्मत करा रहा था। उसी समय अकबर ने उस पर गोली चला दी और वह घायल हो गया। अभी भी वह दूसरों के कन्धों पर बैठकर युद्ध करता रहा किन्तु अन्त में मार दिया गया। दुर्ग का एक-एक राजपूत मुगलों से लड़ता हुआ मारा गया। लगभग ३०,००० नर-नारी मृत्यु के शिकार हुए। चित्तौर पर मुगलों की विजय हो गयी।

चित्तौर के पतन के वाद अन्य राजपूत राज्यों को जीतना सहज हो गया। अकबर ने रणथंभोर पर हमला किया। वहाँ के शासक हाड़ा सरदार राय सुर्जन ने शीघ्र ही अकबर की अधीनता मान ली। कालिंजर के राजा रामचन्द्र ने भी समर्पण कर दिया। जोधपुर, बीकानेर और जैसलमेर के राजाओं ने भी अकबर की अधीनता कबूल कर ली। बीकानेर और जैसलमेर के राजाओं ने अपनी पुत्रियों का विवाह भी अकबर से कर दिया। अकबर ने बीकानेर के राजा (कल्याणमल) के पुत्र को मनसबदार बना दिया।

इस तरह अनेक राजपूत राजाओं ने अकबर की शक्ति और नीति के सामने अपनी हार मान ली। उन्होंने अकबर के साथ बेटी-रोटी का भी सम्बन्ध कायम कर लिया। उन्हें अकबर के दरबार में स्थान मिला। कितने को नौकरियाँ मिलीं और सम्मान मिले।

मेवाड़ का राणा प्रताप—लेकिन धन्य है मेवाड़ का सिसोदिया राजपूत-वंश और उस वंश में उत्पन्न राणा प्रताप। राणा प्रताप में स्वाभिमान कूट-कूट कर भरा हुआ था। वह वीरता और देशभक्ति, त्याग एवं बलिदान की भावना से ओत-प्रोत था। उसे स्वाधीनता अपने प्राण से भी बढ़कर प्रिय थी। उसे अपनी जाति एवं अपने वंश के गौरव का ख्याल था। वह अयोग्य पिता का योग्य पुत्र था। चित्तौर की पराजय के बाद उदय सिंह ने उदयपुर (कुंभलगढ़)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

में अपनी राजधानी बनायी। वह संकट और अपमान के बीच १५७२ ई० में इस संसार से चल बसा। लेकिन प्रताप ने अपने पिता के अपमान का मुगलों से बदला चुकाने का निश्चय कर लिया। उसने अकबर के सामने अपना मस्तक झुकाने से अस्वीकार कर दिया। उसने प्रतिज्ञा की कि चित्तौड़ पर फिर जबतक अधिकार नहीं हो जायगा तबतक सोने-चांदी के वर्त्तनों और पलंगों का व्यवहार नहीं किया जायगा। उसने अपनी प्रतिज्ञा का पालन भी ि या।

जब अकबर अपनी शक्ति एवं कूटनीति के बल पर प्रताप को नहीं झुका सका तो उसने युद्ध का सहारा लिया। प्रताप भी युद्ध से मुँह मोड़ने वाले नहीं थे। हल्दीघाटी के मैदान में दोनों में संघर्ष (१५७६ ई०) हुआ। राजपूतों ने बड़ी वीरता के साथ मुगलों का मुकाबला किया। किन्तु अन्त में राजपूत हार गये। राणा प्रताप अपने परिवारसहित जंगल की ओर निकल गये। बहुत समय तक भटकते रहे। अन्त में उन्होंने एक सेना तैयार की और मेवाड़ के कई स्थानों को जीत लिये। किन्तु चित्तौर पर पुनः अधिकार नहीं हो सका।

राणा प्रताप अपनी प्रतिज्ञा को पूरी न कर सके। धैर्य एवं सम्मान के साथ वे कष्ट एवं कठिनाइयों को झेलते रहे। १५६७ ई० में उनकी मृत्यु हो गयी।

राणा प्रताप के कार्य को उसके उत्तराधिकारी अमर सिंह ने जारी रखा। किन्तु अमर सिंह भी योग्य व्यक्ति नहीं थे। मानसिंह ने उसे लड़ाई में (१५६६ ई०) पराजित कर दिया।

गुजरात—किसी भी साम्राज्य के लिये गुजरात पर अधिकार करना आवश्यक था। गुजरात समुद्र के निकट है। यहाँ अच्छे-अच्छे बन्दरगाह हैं। उस समय भी गुजरात व्यापार का उत्तम केन्द्र था। उस पर अधिकार होने से अच्छी आमदनी हो सकती थी। अतः प्रत्येक शासक उस पर अधिकार करना चाहता था। हुमायूँ ने भी प्रयत्न किया था किन्तु वह सफल नहीं हुआ।

अकबर ने भी गुजरात के महत्व को समझा। उसके समय में मुजफ्फर शाह तीसरा वहाँ का शासक था। वह अयोग्य था। अतः अकबर ने गुजरात पर (१५७२) हमला कर दिया। मुजफ्फर शाह ने शीघ्र ही अपनी हार मान ली। अकबर ने उसे पेंशन देकर हटा दिया। शासन प्रबन्ध के लिये एक सूबेदार (खाने आजम मिर्जा) बहाल कर दिया गया।

गुजरात की विजय से अकबर को बड़ा लाभ हुआ। आय में वृद्धि हुई। समुद्र तक जाने के लिये एक मार्ग मिल गया। पुर्त्तगीजों से भी सम्पर्क हुआ। व्यापार की उन्नति हुई।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

लेकिन अकबर की अनुपस्थिति में गुजरात में फिर विद्रोह हो गया। अकबर फिर गुजरात पहुँचा। अहमदाबाद के निकट विद्रोहियों को पराजित किया गया। उन्हें दंड भी दिया गया। गुजरात की आर्थिक व्यवस्था के लिये टोडरमल को भार सौंपा गया।

बंगाल, बिहार, उड़ीसा—बंगाल दिल्ली के शासकों को प्रायः सिरदर्द पैदा करता रहता था। इस पर अफगानों का राज्य था। १५६४ ई० में सुलेमान कररानी ने बंगाल पर अधिकार कर लिया। वह दक्षिण बिहार का सूबेदार था। उसने गौड़ के स्थान पर टाँडा में अपना राजधानी बनायी। उसने उड़ीसा पर भी अधिकार कर लिया था। वह अकबर की प्रभुता को मानता था। किन्तु १५७२ ई० में उसके मर जाने पर उसके पुत्र दाऊद ने अपनी स्वतन्त्रता घोषित कर ली।

अकबर ने मुनोम खाँ के नेतृत्व में दाऊद के खिलाफ एक सेना भेजी। कुछ समय के बाद वह स्वयं भी आ पहुँचा। दाऊद ने हार मान ली। मुनीम खाँ को बंगाल का सूबेदार बना दिया गया किन्तु एक साल के अन्दर ही (१५७५ ई०) मुनीम खाँ की मृत्यु हो गई। दाऊद ने फिर उत्पात मचाना शुरू कर दिया। राजमहल के निकट मुगलों से युद्ध हो गया। दाऊद युद्ध में मारा गया। बंगाल और बिहार पर अकबर का अधिकार (१५७६ हो गया।

उड़ीसा बहुत समय तक अफगानों के अधीन रहा। १५९० ई० में मानसिंह के नेतृत्व में उड़ीसा पर हमला हुआ। दो वर्ष के बाद उड़ीसा पर मुगलों का अधिकार हो गया। उसे बंगाल में ही शामिल कर लिया गया।

काबुल और काश्मीर—काबुल अकबर के सौतेला भाई मिर्जा मुहम्मद हकीम के अधीन था। वह अकबर का प्रतियोगी था और स्वयं सम्राट् भी बनना चाहता था। उसने मौका पाकर पंजाब पर (१५८०) हमला कर दिया। अकबर ने उसका मुकाबला करने के लिये एक बड़ी फौज के साथ प्रस्थान किया। हकीम डर कर पंजाब से भागकर काबुल चला गया। अकबर ने हकीम का काबुल तक पीछा किया। हकीम ने अन्त में अकबर की अधीनता मान ली। अकबर ने उसे माफ कर काबुल का राज्य लौटा दिया लेकिन हकीम के मर जाने पर (१५८५) काबुल मुगल साम्राज्य में मिला लिया गया।

काश्मीर की प्राकृतिक सुन्दरता से अकबर बहुत प्रभावित था। अतः अकबर की नजर उसपर भी लगी हुई थी। उसने भगवानदास और कासिम खाँ को एक फौज के साथ काश्मीर की विजय करने के लिये भेजा। काश्मीर के शासक यूसुफ खाँ ने अकबर की अधीनता कबूल कर ली। लेकिन उसका लड़का याकूब खाँ अकबर की अधीनता मानने के लिये तैयार नहीं था। याकूब ने युद्ध जारी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रखा किन्तु अन्त में उसे भी पराजित होना पड़ा। यूसुफ और याकूब दोनों को कैद कर लिया गया। काश्मीर मुगल साम्राज्य का अंग बन गया (१५८७)।

काबुल और काश्मीर की विजय से उत्तर-पश्चिमी सीमा सुरक्षित हो गई। १५६८ ई० में अकबर का प्रबल विरोधी अब्दुल्ला उजबेग मर गया। अब मध्य एशिया की ओर से भी कोई भय नहीं रह गया।

सिन्ध और बलुचिस्तान—दक्षिणी सिन्ध (थट्टा) में मिर्जा जानी बेग का राज्य था। अकबर ने अब्दुर रहीम खानखाना को (१५६०) उसके विरुद्ध भेजा। मिर्जा ने मुगलों का डटकर मुकाबला किया किन्तु अन्त में वह हार गया। अकबर ने उसके साथ भी अच्छा ही व्यवहार किया। उसने मिर्जा को जागीर के रूप में राज्य सौंप दिया। अकबर ने उसे मनसबदार भी बना दिया। कुछ समय के बाद मिर्जा की मृत्यु हो गई।

मीरमासूम को (१५६५) बलुचिस्तान जीतने के लिये भेजा गया। बलुचिस्तान उस समय अफगानों के अधीन था। अफगानों ने मुगलों का मुकाबला किया किन्तु अन्त में वे हार गये। बलुचिस्तान मुगल साम्राज्य में मिला लिया गया। अब मुगल साम्राज्य की सीमा कन्धार तक चली गई।

कन्धार—उत्तर-पश्चिमी सीमान्त किसी भी भारतीय सरकार के लिये एक विकट समस्या रहा है। १६ वीं--१७ वीं शताब्दियों में मुगलों के साथ भी यही बात थी। कन्धार पर विजय करना मुगलों के लिये बहुत ही आवश्यक था। पहली बात थी कि काबुल मुगलों के अधिकार में था। उसकी सुरक्षा के लिये कन्धार पर मुगल अधिकार जरूरी था। दूसरे, भारत पर कन्धार की ओर से हमला करना सहज था। अतः भारतीय साम्राज्य तथा दिल्ली की रक्षा के लिये भी कन्धार पर मुगल आधिपत्य आवश्यक था। तीसरे, कन्धार उत्तर-पश्चिम में व्यापार का प्रमुख केन्द्र था। वहाँ पश्चिमी एशिया के विभिन्न भागों से व्यापारी इकट्ठे होते थे। हर साल सामान से लदे हुए हजारों ऊँट तथा घोड़े कन्धार होकर आते-जाते थे।

अतः मुगल बादशाहों ने कन्धार पर विजय प्राप्त करने के लिये प्रयत्न किया। बाबर ने १५२२ ई० में इस पर अधिकार कर लिया था। हुमायूँ ने इसे कमरान को सौंप दिया था। कन्धार प्राप्त होने की शर्त पर ही ईरान के शाह ने हुमायूँ को मदद दी थी, किन्तु सफलता मिल जाने के बाद हुमायूँ ने कन्धार शाह को नहीं दिया। हुमायूँ के मरने के बाद शाह ने (१५५८) कन्धार पर अधिकार कर लिया।

अकबर के समय में मिर्जा मुजफ्फर हुसेन कन्धार में ईरान के शाह का सूबेदार था। वह उजबेगों के हमले से तंग था। वह शाह से भी खुश नहीं था। अतः उसने

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(१५९४) कन्धार को मुगलों के हाथ में सौंप दिया। इससे अकबर की शक्ति और प्रतिष्ठा दोनों में बहुत वृद्धि हुई।

उत्तर पश्चिम में पहाड़ी इलाकों के उपद्रवी जातियाँ रहती थीं। उनमें उजबेग और यूसुफजाई के नाम अधिक प्रसिद्ध हैं। उन्हें भी शान्त रखना आवश्यक था। अकबर ने उजबेगों को लड़ाई में परास्त किया। इसके बाद उजबेग नेता अब्दुल्ला ने अकबर के प्रति मैत्री भाव कायम रखा। १५९८ ई० में उसकी मृत्यु हो गई।

अकबर ने यूसुफजाई कबीलों के विरुद्ध बीरबल को भेजा। बीरबल लड़ाई में मारा गया। इसके बाद टोडरमल उनसे लड़ने के लिये भेजा गया। टोडरमल ने उन्हें परास्त किया। बहुत से कबीले मारे गये।

दक्खिन भारत की विजय—अकबर का ध्यान दक्खिन भारत की ओर भी गया। उस समय दक्खिन में ४ प्रमुख राज्य थे—अहमदनगर, बीजापुर, गोलकुंडा और खानदेश। अहमदनगर ने बरार को (१५७५) अपने अधीन कर लिया था। बीदर महत्वहीन समझा जाता था। अकबर चारों राज्य में अपनी अधीनता कबूल करवाने के लिये राजदूत भेजा। खानदेश ने अकबर की अधीनता मान ली। लेकिन अन्य राज्यों ने अस्वीकार कर दिया। अब अकबर ने युद्ध के द्वारा अपना उद्देश्य पूरा करने का निश्चय किया।

अहमदनगर में गद्दी के लिये दो दावेदारों में तनाव चल रहा था। अकबर ने उसपर धावा (१५९३) बोल दिया। अहमदनगर की गद्दी पर एक नाबालिग (बहादुरशाह) था और चाँद बीबी संरक्षिका थी। अब्दुर रहीम और शाहजादा मुराद मुगल सेना का नेतृत्व कर रहे थे। चाँद बीबी ने डटकर मुगलों का सामना किया। लेकिन अन्त में उसे झुकना पड़ा। मुगलों से सन्धि कर लेना पड़ी। मुगलों को बरार दे दिया गया और अकबर की अधीनता मान ली गई (१५९६)।

लेकिन अकबर और चाँद बीबी में जो सन्धि हुई वह स्थायी सिद्ध नहीं हो सकी। मुगलों से बरार ले लेने का प्रयत्न होने लगा। अतः फिर युद्ध शुरू हो गया। आन्तरिक कलह एवं दलबन्दी के कारण अहमदनगर की स्थिति अच्छी नहीं थी। लड़ाई में चाँद बीबी भी मार डाली गई। अब अहमदनगर की हार (अस्ती के युद्ध में) हो गई। बरार पर मुगलों का अधिकार कायम रह गया।

जब अकबर अहमदनगर में व्यस्त था तभी खानदेश के नये शासक मियाँ बहादुरशाह ने अपनी स्वतन्त्रता घोषित कर ली। अकबर ने उसपर (१५९९) हमला कर दिया। खानदेश की राजधानी बरहानपुर पर मुगलों का अधिकार हो गया। लेकिन असीरगढ़ के किले को जीतने में मुगलों को बड़ी परेशानी उठानी पड़ी। ६ महीने तक वे घेरा डाले रहे। अन्त में अकबर ने मियां बहादुरशाह

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

को धोखेबाजी से कैद कर लिया। उसने किले के रक्षकों को रिश्वत देकर अपने पक्ष में किया। इस तरह असीरगढ़ के दुर्ग पर कब्जा हुआ। अब खानदेश अकबर की अधीनता मान लेने के लिये बाध्य हुआ (१६०१)। अकबर की यह अन्तिम विजय थी।

अकबर ने दक्खिन के जीते हुए भूभागों को तीन प्रान्तों में बाँट दिया—अहमदनगर, खानदेश और बरार। शाहजादा दानियाल को सूबेदार बना दिया गया।

इस तरह अकबर ने एक विशाल साम्राज्य कायम किया। यह उत्तर में काश्मीर से लेकर दक्खिन में गोदावरी नदी तक और पश्चिम में अफगानिस्तान से लेकर पूर्व में बंगाल तक फैला हुआ था। यह एक महान् उपलब्धि थी। इससे सिद्ध होता है कि अकबर एक महान् साम्राज्य-निर्माता था।

अकबर की धार्मिक नीति

भूमिका—अकबर के पहले और बाद भी दिल्ली के कई बादशाह धार्मिक दृष्टि से संकीर्ण एवं कट्टर थे। वे इस्लाम धर्म को स्वयं मानते थे और दूसरों को भी मानने के लिये बाध्य करते थे। वे अन्य धर्म वालों के साथ अत्याचार करते थे। वे धर्म के आधार पर मुसलमानों और गैरमुसलमानों में भेदभाव करते थे। इससे गैरमुसलमानों की सहानुभूति उन्हें नहीं मिली। शासक और शासित के बीच खाई पैदा होने लगी। इससे साम्राज्य की नींव कमजोर होने लगी।

अकबर की नीति—अकबर इस्लाम धर्म का अनुयायी था। वह सुन्नी मुसलमान था। लेकिन उसमें कट्टरता और संकीर्णता नहीं थी। वह धर्मान्धता से मुक्त था। उसके विचार उदार एवं व्यापक थे। अतः उसने मुसलमानों और गैरमुसलमानों में कोई भेदभाव नहीं रखा। वह अपनी सभी प्रजा को एक भाव से देखता था। यहाँ तक कि उसने हिन्दुओं के साथ वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित किया।

अकबर स्वभाव से उदार तो था ही, वह दूरदर्शी और व्यावहारिक राजनीतिज्ञ भी था। भारत में गैरमुसलमान ही अधिक संख्या में थे। हिन्दुओं में राजपूत अपनी वीरता एवं बहादुरी के लिये प्रसिद्ध था। वह भलीभाँति समझता था कि सफल शासक बनने के लिये समूची प्रजा की सहानुभूति एवं प्रेम प्राप्त करना चाहिये। अतः उसने राष्ट्रीय नीति अपनायी। उसने जाति या धर्म के आधार पर अपनी प्रजा में कोई भेदभाव नहीं किया। उसने सभी प्रजा को एक दृष्टि से देखा।

अकबर ने हिन्दुओं को अपने राज्य में बहुत सुविधाएँ दीं। उसने उन्हें यात्रा और जजिया करों से मुक्त कर दिया था। उसने उन्हें राजनैतिक अधिकार

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रदान किया। उन्हें राज्य की कोई नौकरी प्राप्त हो सकती थी। वे दरबार में सम्मानपूर्वक स्थान पाते थे। अ..बर ने राजपूतों के साथ वैवाहिक सम्बन्ध कायम किया। उसने हिन्दुओं को पूरी धार्मिक स्वतन्त्रता दे दी। उसके महल में भी हिन्दू नारियाँ अपने ही धर्म को मानती थीं। वह मन्दिरों को भी बनवाता था और हिन्दू उत्सवों में भी भाग लेता था।

इस तरह अकबर एक महान् उदार शासक था। वह इतिहास में अपनी विजयों के कारण नहीं बल्कि अपनी उदार नीति के ही कारण अधिक प्रसिद्ध है।

अकबर पर प्रभाव डालने वाले कारण—अकबर अपने जीवन काल में कई बातों से प्रभावित हुआ। अनेक बातों एवं परिस्थितियों के प्रभाव से ही अकबर की नीति उदार हो गई थी।

परिवार का प्रभाव—सबसे पहले अकबर पर अपने परिवार का प्रभाव पड़ा। अकबर की माता (हमीदा बानु) एक ईरानी विद्वान् की लड़की थी। अतः उसमें उदार विचारों की प्रधानता थी। अकबर का पिता हुमायूँ भी कट्टर मुसलमान नहीं था। जब वह बेघर-बार का भटक रहा था तब उसने एक हिन्दू सरदार के यहाँ शरण ली थी और उसी सरदार के घर में अकबर पैदा हुआ था। अकबर ने अपने बचपन का कुछ समय वहीं पर व्यतीत किया। बाबर भी जो अकबर का बाबा था, बर्बर या जंगली नहीं था। यह भी याद रहे कि हुमायूँ सुन्नी था और उसकी पत्नी यानी अकबर की माँ शिया थी।

संरक्षक एवं गुरु का प्रभाव—बैरम खाँ अकबर का संरक्षक था। अब्दुल लतीफ उसका गुरु था। अकबर सुन्नी था किन्तु बैरम खाँ और अब्दुल लतीफ शिया थे। अतः अकबर में लड़कपन से ही सहिष्णुता की भावना का विकास हुआ।

सूफीमत का प्रभाव—अकबर का युग सूफी मत और भक्ति का युग था। सूफी सरल धर्म, ईश्वर भक्ति एवं सदाचार पर जोर देते थे। उनका मत था कि ईश्वर एक ही है और प्रत्येक धर्म में उसे विविध रूप में देखा जाता है। भक्ति आन्दोलन में समन्वय (synthesis) पर जोर दिया जाता था।

अकबर का अनेक सूफी विद्वानों के साथ सम्पर्क हुआ। शेख मुबारक और उसके दो पुत्र—अबुल फैजल और फैजी प्रसिद्ध सूफी थे। शेखमुबारक से अकबर का सम्पर्क हुआ था। अबुल फैजल और फैजी तो अकबर के परम प्रियमित्र ही थे।

हिन्दुओं से निकट सम्पर्क—अकबर के दरबार में बहुत स हिन्दू रहते थे। उसने राजपूतों से घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित किया था। उसने राजपूत औरतों से वैवाहिक सम्बन्ध कायम किया था। अकबर के महल में जाने पर भी राजपूत

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रमणियों ने अपना ही धर्म कायम रखा था। इस तरह अकबर हिन्दू दर-बारियों और हिन्दू महिलाओं के सम्पर्क से बहुत ही प्रभावित हुआ।

राजनैतिक स्थिति—राजनैतिक स्थिति ने भी अकबर को उदार बनने में मदद दी। भारत में हिन्दुओं की प्रधानता थी। अकबर महान् शासक बनना चाहता था। अतः इसके लिये हिन्दुओं का समर्थन भी आवश्यक था। इतिहास से भी उसने शिक्षा पायी थी। इतिहास ने उसे बतलाया था कि धर्मांध शासकों को हिन्दुओं का समर्थन नहीं मिला था। अतः वे अप्रिय एवं असफल शासक सिद्ध हुए थे।

धार्मिक वाद-विवाद—अकबर स्वभाव से जिज्ञासु था। उसमें सत्य जानने की उत्कट इच्छा थी। अतः उसने १५७७ ई० में फतेहपुर सीकरी में एक इबादत खाना बनवाया। वहाँ उसने दार्शनिक तथा धार्मिक विषयों पर वाद-विवाद के लिये व्यवस्था की। पहले केवल मुसलमान विद्वान् (उलेमा) ही बुलाये गये। किन्तु उन्होंने अकबर पर बहुत ही बुरा प्रभाव डाला। वे आपस में लड़ने-झगड़ने लगे। उन्हें गाली-गलौज करने में भी जरा सा संकोच नहीं होता था। अतः बाद में अकबर ने सबके लिये दरवाजा खोल दिया। अब सम्मेलन में मुसलमानों के अलावा हिन्दू, जैन, बौद्ध, पारसी, ईसाई, सूफी—सभी तरह के विद्वान् भाग लेने लगे। हिन्दुओं और ईसाइयों से अकबर बहुत ही प्रभावित हुआ।

निर्भान्तता का आदेश— अब अकबर ने उलेमाओं से अपने को मुक्त करने का प्रयत्न किया। वह किसी तरह का हस्तक्षेप पसन्द नहीं करता था। वह राजनैतिक और धार्मिक दोनों क्षेत्रों में अपना आधिपत्य चाहता था। १५७९ ई० में उसने फतहपुर सीकरी के इमाम को पदच्युत कर दिया। वह खुतबा स्वयं पढ़ने लगा। अब अकबर धार्मिक क्षेत्र में भी प्रधान हो गया। उलेमाओं ने भी अकबर के हाथ में सारी शक्ति सौंप दी। अब अकबर को धार्मिक प्रश्न पर भी निर्णय देने का पूरा अधिकार मिल गया। इस आदेश को निर्भान्तता का आदेश (The Infallibility Decree) कहते हैं।

दीनइलाही की स्थापना— १५८१ ई० में अकबर ने एक धर्म स्थापित किया। इसे दीनइलाही की संज्ञा दी गई। इसमें सभी धर्मों का सार था। उसके साम्राज्य में कई धार्मिक सम्प्रदाय के लोग थे। उनके बीच एकता लाने के उद्देश्य से उसने सभी धर्मों की अच्छाइयों के आधार पर दीनइलाही की स्थापना की। इसके मुख्य नियम थे—ईश्वर एक है और वही सभी प्राणियों का सृजन करता है। सभी प्राणी एक समान हैं चाहे वे किसी धर्म के अनुयायी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हों। दीनइलाही के सदस्यों में भाइचारे का सम्बन्ध था। भेंट होने पर वे अल्ला-हो-अकबर और जल्ला-जलाल-हू कहकर एक दूसरे का अभिवादन करते थे। समय-समय पर वे दावत का आयोजन करते थे। कसाइयों के साथ बैठकर भोजन करना या मांस खाना वर्जित था। अपना धन, मान, धर्म और जीवन अकबर के लिये त्यागने को तैयार रहना पड़ता था।

दीनइलाही का प्रचार— कुछ लोगों ने दीनइलाही को कबूल किया किन्तु इसका पूरा प्रचार नहीं हुआ। इसके प्रचार के लिये अकबर ने कोई विशेष प्रयत्न नहीं किया। उसने इसका अनुयायी बनाने के लिये किसी पर कोई दबाव भी नहीं डाला। अतः इसके अनुयायियों की संख्या बहुत कम रही। अकबर की मृत्यु के साथ इसका अन्त भी हो गया।

दीनइलाही की आलोचना— दीनइलाही की स्थापना के लिये कुछ इतिहासकारों ने अकबर की कड़ी आलोचना की है। बदायूनी का मत है कि अकबर ने इस धर्म को चलाकर इस्लाम के साथ अन्याय किया। किन्तु वह एक कट्टर मुसलमान था। अतः उसके मत को महत्त्व नहीं दिया जा सकता। आधुनिक इतिहासकारों में डा० स्मिथ ने भी अकबर की कटु आलोचना की है। उसके मतानुसार "दीनइलाही अकबर के अहंकार और उसकी निरंकुशता की भावना की उपज थी। यह उसकी बुद्धिमत्ता का नहीं, उसकी मूर्खता का चिन्ह था।"

सभी आधुनिक इतिहासकार स्मिथ के मत से सहमत नहीं हैं। दीनइलाही कोई नवीन धर्म नहीं था बल्कि इसमें सभी प्रमुख धर्मों का सार पाया जाता था। इसकी स्थापना के उद्देश्य अच्छे थे। वह सभी धार्मिक सम्प्रदायों में एकता लाकर राजनैतिक एकता को सुदृढ़ करना चाहता था। उसे सफलता नहीं मिली किन्तु उसके प्रयत्न सराहनीय हैं। वह सरल धर्म और राष्ट्रीय एकता में विश्वास करता था। दीनइलाही की स्थापना इसी विश्वास का परिणाम थी।

अकबर की शासन प्रणाली

अकबर स्वयं बहुत पढ़ा-लिखा नहीं था किन्तु वह योग्य, प्रतिभाशाली और दूरदर्शी था। उसने केवल साम्राज्य ही स्थापित नहीं किया, उसने शासन का भी संगठन किया। अतः वह साम्राज्य निर्माता था तो कुशल शासक भी था। उसने इतिहास से शिक्षा ग्रहण की। उसने शासन में सल्तनत काल के शासकों की संकीर्णता का परित्याग किया और प्राचीन काल के हिन्दू राजाओं के व्यापक दृष्टिकोण को अपनाया। शासन-संगठन में वह शेरशाह से भी बहुत प्रभावित हुआ था। वह पहला मुगल बादशाह था जिसने शासन को सुसंगठित किया था। बाबर और हुमायूँ को तो इसके लिये मौका ही नहीं मिला था।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शासन के मौलिक सिद्धान्त— अकबर का शासन कई सिद्धान्तों पर आधारित था। सबसे पहले अकबर में लोकहित की भावना कूट-कूटकर भरी हुई थी। वह हर तरह से प्रजा की भलाई करना चाहता था। वह राजा और प्रजा के स्वार्थों में संघर्ष नहीं देखता था। वह समझता था कि सुदृढ़ शासन के लिये प्रजा का सन्तोष एवं सहयोग आवश्यक है। अतः उसने प्रजा की भलाई कर प्रजा को सन्तुष्ट रखने की भरपूर कोशिश की। दूसरे, वह धार्मिक स्वतन्त्रता एवं सहिष्णुता में विश्वास करता था। अतः उसने जाति या धर्म के आधार पर मनुष्य-मनुष्य में कोई भेदभाव नहीं किया। उसने इस्लाम के अनुयायियों के साथ कोई पक्षपात नहीं किया और दूसरे सभी धर्मों को आदर की दृष्टि से ही देखा। राज्य की नौकरी देने में उसने धर्म की अपेक्षा योग्यता को ही महत्त्व दिया। इस तरह अकबर ने अपने शासन काल में धर्मनिरपेक्षता को ही प्रोत्साहन दिया। अतः अकबर को राष्ट्रीय शासक कहें तो कोई अनुचित नहीं। तीसरे, अकबर न्याय का बहुत बड़ा समर्थक था। वह कानून एवं न्याय की दृष्टि में सबको एक समान समझता था। वह निष्पक्षता (impartiality पर बहुत जोर देता था।

इस प्रकार अकबर ने सुदृढ़ एवं सुसंगठित शासन स्थापित किया जो दीर्घकाल तक कायम रही।

केन्द्रीय शासन

सम्राट— राज्य और शासन का प्रधान सम्राट था। सिद्धान्त के रूप में वह निरंकुश था। उसकी शक्ति असीमित थी और उसके ऊपर कोई वैधानिक नियंत्रण नहीं था। फिर भी अकबर उदार सम्राट था। वह अपनी प्रजा के हित का ख्याल रखता था। वह अपने योग्य सलाहकारों की बातों पर भी ध्यान देता था।

अन्य अधिकारी— सम्राट को मदद करने के लिये कई पदाधिकारी होते थे। सबसे बड़ा पदाधिकारी वजीर था। वह सम्राट के नीचे उसका प्रधान सलाहकार था। दूसरे पदाधिकारी वजीर के सहयोगी नहीं होते थे। उनका स्थान वजीर के समान नहीं बल्कि उसके नीचे था। वजीर के हाथ में महत्वपूर्ण अधिकार था। वजीर के अतिरिक्त भी अन्य कई पदाधिकारी थे। प्रत्येक पदाधिकारी के अधीन एक या अधिक विभाग होते थे जैसे दीवान (राजकोष), बख्शी (हिसाब एवं सैनिक वेतन), खान-ए-सामा (शाहीपरिवार), मुख्यसदर (कानून एवं दान विभाग), मुहतासिब (लोक-आचार निरीक्षण), मीरआतिश (तोपखाना), कोतवाल (पुलिस एवं गुप्तचर विभाग)।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रान्तीय शासन— शासन की सुविधा के लिये साम्राज्य प्रान्तों में बँटा हुआ था। प्रसिद्ध इतिहासकार डा० जदुनाथ सरकार के शब्दों में "मुगल शासन काल में प्रान्तीय शासन केन्द्रीय शासन का ही छोटा रूप था।" प्रत्येक प्रान्त एक उच्च पदाधिकारी के अधीन था। उसे सूबेदार या निजाम कहते थे। वह प्रान्त में सम्राट का प्रतिनिधि था और सम्राट की ही तरह उसका रहन-सहन था। वह प्रान्त में नागरिक और फौजी शासन का प्रधान था। प्रान्त में केन्द्रीय सरकार के आदेशों को लागू करना उसीका उत्तरदायित्व था। लगान वसूल कराना और प्रान्त में शान्ति-व्यवस्था कायम रखना भी उसके मुख्य कार्य थे।

सूबेदार न्याय विभाग का भी प्रधान था। वह काजियों के निर्णयों के विरुद्ध अपील भी सुनता था।

सूबेदार को मदद करने के लिये उसके अधीन अन्य कई पदाधिकारी होते थे जैसे दीवान, फौजदार, सेतपाल आदि। दीवान को केन्द्रीय दीवान बहाल करता था और वह उसी के प्रति उत्तरदायी भी था।

शक्तिशाली और महत्वाकांक्षी सूबेदार अपने पद का अनुचित लाभ उठाकर विद्रोह भी कर सकता था। इसे रोकने के लिये सूबेदार के पद को वंशानुगत नहीं किया गया। थोड़े-थोड़े समय पर सूबेदार की एक प्रान्त से दूसरे प्रान्त में बदली भी हुआ करती थी।

सूबा सरकारों में और सरकार परगनों में बँटा हुआ था। प्रत्येक सरकार और प्रत्येक परगना में भी एक-एक उच्च अधिकारी रहता था। ग्राम सबसे नीचे की इकाई था। कोतवाल शहर में शान्ति-व्यवस्था कायम रखता था।

प्रान्तीय शासन संगठित तो था फिर भी मौका मिलने पर दूर के प्रान्तों में सूबेदार मनमानी करने से बाज नहीं आते थे। १५८० ई० में प्रान्तों की संख्या १२ थी किन्तु दक्षिण विजय के बाद यह संख्या १५ तक हो गई।

राजस्व विभाग— अकबर के समय में राजस्वविभाग भी बड़ा ही सुव्यवस्थित था। इस सम्बन्ध में उसने शेरशाह के सुधारों से लाभ उठाया था। इस कार्य में अकबर को राजा टोडरमल से बहुमूल्य सहायता मिली थी। टोडरमल ने शेरशाह के समय भी आर्थिक सुधार किया था। उसने अकबर के समय में बहुत ही सुन्दर वैज्ञानिक ढंग पर राजस्व विभाग का संगठन किया।

राजस्व विभाग के संगठन में तीन बातों पर विशेष ध्यान दिया गया। साम्राज्य की आय का प्रधान साधन भूमिकर (Land revenwe) था। अतः इस कर की प्राप्ति के लिये समुचित उपाय किये गये। सबसे पहले भूमि की नाप करायी गई। पहले भूमि की नाप रस्सी से होती थी। यह तरीका ठीक नहीं था।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रस्सी भींगी रहने पर सिकुड़ जाती थी और सूखी रहने पर बढ़ जाती थी। ऐसी रस्सी से नाप जोख करने पर जमीन का क्षेत्रफल भा घट-बढ़ जाता था। इससे संघर्ष को प्रोत्साहन मिलता था। टोडरमल ने अब नापने के लिये जरीब चलायी और उसे जंजीर से बाँध दिया जिससे कि उसकी लम्बाई घट-बढ़ नहीं सके।

भूमि की नाप के बाद इसका वर्गीकरण किया गया। राज्य की सारी जमीन दो भागों में बँटी थी—जागीर जो बड़े-बड़े सरदारों को दी गई थी और खालसा जो सम्राट के अधीन समझी जाती थी। उपजाऊपन के आधार पर भूमि को ४ भागों में बाँटा गया—पोलज जो भूमि हर साल जोती-बोयी जाती थी, परोती जो भूमि एक-दो साल के लिये परती रही थी; चाचर जो भूमि ३-४ सालों से परती थी और बंजर जो भूमि ५ या अधिक सालों से परती थी। परती जमीन को जोतने लायक बनाने के लिये किसानों को प्रोत्साहन किया गया।

भूमि के क्षेत्रफल और उपजाऊपन के आधार पर लगान भी निश्चित कर दिया गया। लगान वसूल करने के लिये जमींदार या ठीकेदार नहीं होते थे। इसके लिये रैयतवाड़ी प्रथा प्रचलित थी। यह किसानों का कर्त्तव्य था कि वे हर साल निश्चित लगान निश्चित समय पर जमा कर दें। लगान वसूलने के लिये सरकारी अफसर नियुक्त थे। अफसरों को सम्राट का आदेश था कि वे किसी तरह से किसानों को तंग न करें। उपज का $\frac{1}{3}$ भाग कर के रूप में राज्य को देना पड़ता था। यह लगान अधिक मालूम पड़ता था फिर भी अकबर ने प्रजा को कई अन्य सुविधाएँ दी थीं। अकाल या विशेष परिस्थिति में किसानों से लगान वसूली में सुविधा दी जाती थी। जरूरत पड़ने पर राज्य की ओर से किसानों को कर्ज भी दिया जाता था और छोटी-छोटी किश्तों में उसे वसूला जाता था। सम्राट अपने आदेशों के पालन के लिये प्रयत्नशील रहता था। माल विभाग से सम्बन्धित अधिकारी यदि सम्राट के आदेशों के पालन में ढिलाई करते थे तो उन्हें भी दंड दिया जाता था।

अकबर की राजस्व व्यवस्था पूर्व मुस्लिम शासकों की तु ना में बहुत ही अच्छी थी। यह व्यवस्था दीर्घ काल तक कायम रही। डा० स्मिथ के शब्दों में "राजस्व प्रणाली सराहनीय थी। सिद्धान्त ठीक थे और अधिकारियों को जो व्यावहारिक आदेश दिये गये थे वे सन्तोष जनक थे।"[1]

आय के अनेक साधन— भूमिकर के अलावा आय के कुछ अन्य साधन भी थे—उपहार, आयात-निर्यात कर, खनिज पदार्थ आदि।

सैनिक संगठन— अकबर की सेना चार प्रकार की थी—अधीन राजाओं की सेना, मनसबदारों की सेना, दाखिली और अहदी।

---

१. अकबर (अंग्रेजी) पृ० ३६६।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अकबर के अधीन कई करद राज्य थे। ये सम्राट की अधीनता मानते थे किन्तु आन्तरिक मामले में स्वतन्त्र थे। ये साम्राज्य को निश्चित वार्षिक कर एवं उपहार देते थे। ये युद्धकाल में सैनिक सहायता भी देते थे और युद्ध में जाते थे।

मनसबदारी प्रथा— अकबर के शासन काल में मनसबदारी प्रथा प्रचलित थी। मनसब से एक सैनिक पद का बोध होता था। ३३ प्रकार के मनसब थे। सबसे बड़ा मनसब १०,००० का और सबसे छोटा मनसब २० का होता था। सम्राट स्वयं मनसबदारों को नियुक्त करता था। वही उन्हें पदच्युत भी कर सकता था। उनकी पदोन्नति भी सम्राट की ही इच्छा पर निर्भर करती थी। वह किसी को भी मनसबदार बना सकता था। उच्च-स्तर का मनसबदार होना बड़ी प्रतिष्ठा की बात मानी जाती थी।

मनसबदार सम्राट को सैनिक सहायता देता था। उसे राज्य से वेतन मिलता था। साम्राज्य की सैनिक सेवा के लिये उसे सेना रखनी पड़ती थी। अश्वारोही सेना मनसबदारों से ही प्राप्त होती थी। मनसबदारों को ही सेना का सारा खर्च ढोना पड़ता था।

लेकिन मनसबदारी प्रथा त्रुटिपूर्ण थी। पहले तो सभी मनसबदार एक समान ईमानदार नहीं होते थे। कितने ऐसे थे कि अपनी स्थिति एवं पद के अनुसार सैनिक नहीं रखते थे। दूसरे, सभी मनसबदार अलग-अलग सैनिकों को शिक्षित करते थे। अतः सैनिकों के शिक्षण-प्रशिक्षण में एकरूपता का अभाव था। तीसरे, सैनिक अपने-अपने मनसबदार को ही अधिक मानते थे। अतः यदि युद्ध में कई मनसबदार जाते थे तो उनमें परस्पर एकता का अभाव पाया जाता था। चौथे, मनसबदारों के सैनिकों पर सम्राट का भी पूरा रोब-दाब नहीं रहता था।

सम्राट अकबर इन त्रुटियों से परिचित था। अतः उसने कुछ सुधार भी किया था। वह मनसबदारों की सेनाओं का कभी-कभी निरीक्षण किया करता था। दूसरे, उसने अलाउद्दीन की तरह घोड़ों पर दाग लगवाने की प्रथा चलवायी। तीसरे, उसने प्रत्येक मनसबदार का पूरा विवरण रखने का प्रबन्ध किया।

दाखिली सेना में वे सैनिक थे जो राज्य की ओर से निश्चित वेतन पर भर्ती किये जाते थे। लेकिन वे भी मनसबदारों के ही अधीन रहते थे। इन मनसबदारों को निजी सैनिक नहीं होते थे। अहदी सेना में सम्राट के निजी सैनिक होते थे। इन्हें सम्राट स्वयं भर्ती करता था। ये उसके अंगरक्षक के रूप में काम करते थे और युद्धकला में बहुत ही कुशल होते थे।

मुगल सेना के चार प्रधान अंग थे—पैदल, घुड़सवार, तोपखाना और नौसेना। इनमें भी घुड़सवार को ही अधिक महत्व दिया जाता था।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अकबर के सैन्य संगठन में कुछ दोष भी थे जिससे उसके उत्तराधिकारियों को हानि सहनी पड़ी। पैदल सेना सुसंगठित नहीं थी। इस सेना में ऐसे लोग भी सम्मिलित हो जाते थे जिनमें शिक्षा एवं अनुभव का अभाव था। तोपें भी विशाल होती थीं और उन्हें एक जगह से दूसरी जगह ढोने में परेशानी होती थी। पुर्त्तगीज तोपखाने मुगल तोपखाने से अधिक रण कुशल थे। मुगल तोपखाने में बहुत से विदेशी भी थे। नौसैनिक विभाग के संगठन पर भी समुचित ध्यान नहीं दिया गया। डा० स्मिथ के मतानुसार "मौलिक दृष्टि से अकबर का सैन्य संगठन कमजोर था यद्यपि उसके पड़ोसियों की तुलना में अच्छा था। समकालीन यूरोपीय सेनाओं के आगे उसकी सेना एक क्षण भी नहीं टिक सकती थी।"[1] डा० स्मिथ के कथन में कुछ अत्युक्ति मालूम पड़ती है फिर भी इससे स्पष्ट है कि अकबर के सैनिक संगठन में कुछ कमजोरी अवश्य थी।

न्याय— अकबर न्यायप्रिय शासक था। उसे ही न्याय का स्रोत समझा जाता था। वह महत्वपूर्ण मौलिक मामलों और अपीलों को सुनता था। वह न्याय पर जोर देता था। किन्तु अमानुषिक कठोर दंड का समर्थक नहीं था। निश्चित दिन पर लोग सम्राट का कचहरी में उपस्थित होते थे।

दीवानी मामलों में मुसलमानों को इस्लाम के अनुसार और हिन्दुओं को अपने धर्मशास्त्र के अनुसार निर्णय दिया जाता था। किन्तु फौजदारी नियम दोनों पर एक समान लागू होते थे।

न्याय से सम्बन्धित कई अधिकारी होते थे। काजीउलकुज्जात न्याय विभाग का सर्वोच्च पदाधिकारी था। सदर-ए-सुदूर और मीर अर्ज भी प्रमुख पदाधिकारी थे। काजी, मुफ्ती और मीर अदल भी न्याय-कार्य में प्रमुख भाग लेते थे। काजी मुकदमें की जाँच करने, मुफ्ती कानून की व्याख्या करने और मीर अदल निर्णय सुनाने का काम करते थे। प्रान्तों, सरकारों, परगनों और नगरों में काजी की नियुक्ति हुआ करती थी। ग्रामों में पंचायतों के द्वारा फैसला हुआ करता था।

आजकल की तरह न्याय विभाग संगठित नहीं था। नियमित न्यायालय, लिखित कानून एवं निश्चित कार्यविधि का अभाव था। कुछ स्तर पर अधिकारियों में घुसखोरी की प्रथा भी प्रचलित थी।

अपराधों को रोकने के लिये शेरशाह की चलायी हुई व्यवस्था को कायम रखा गया था। शान्ति व्यवस्था के लिये सरकार में फौजदार और नगर में कोतवाल विशेषरूप से उत्तरदायी थे। कोतवाल के जीम्मे अनेक कार्य सौंपे गये थे।

अकबर के अन्तिम दिन— अकबर को अपने जीवन के अन्तिम दिनों में बहुत दुख हुआ होगा। अकबर के एक प्रिय मित्र फैजी का देहावसान हो

१. अकबर दि ग्रेट मुगल—पृ० ३६७

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

गया। उसके दो पुत्रों की भी मृत्यु हो गयी। उसके एक पुत्र सलीम का व्यवहार अच्छा नहीं था। सलीम ने अकबर के दूसरे प्रिय मित्र अबुलफजल को भी मरवा डाला। वह स्वयं गद्दी पर बैठने के लिये भी विद्रोही एवं बेचैन हो गया था। ऐसी ही परिस्थिति में १६०५ ई० में ६३ वर्ष की उम्र में अकबर की मृत्यु हो गई। आगरे के पास सिकन्दरा में उसे दफना दिया गया।

मूल्यांकन

अकबर में अनेक मानवीय गुण भरे पड़े थे। उसका व्यक्तित्व बड़ा ही आकर्षक था। वह शरीर से सुडौल था। वह दाढ़ी नहीं किन्तु मूँछ रखता था। वह शरीर से सुन्दर और मजबूत था। वह व्यायाम, शिकार तथा परिश्रम में अभिरुचि रखता था। उसमें साहस कूट-कूट कर भरा हुआ था। वह दुख में घबड़ाता नहीं था और सुख में उतावला भी नहीं होता था। वह नदी में घोड़े सहित कूद कर पार कर जाता था। प्रमुख युद्धों में वह स्वयं नेतृत्व करता था। उसे अपने पिता, पुत्रों, भाइयों तथा प्रजा से प्रेम था। उसमें उदारता एवं नम्रता थी। वह विद्या, कला तथा सहनशीलता का प्रेमी था।

लेकिन अकबर अपने समय के दुर्गुणों से मुक्त नहीं था। वह भोग-विलास की ओर से उदासीन नहीं था। उसके महल में भी हजारों औरतें रहती थीं। उसे मादक वस्तुओं से भी परहेज नहीं था। कभी-कभी वह आवेश में आकर अनुचित काम भी कर देता था। साम्राज्य विस्तार में वह कभी-कभी छल-कपट का भी सहारा लेता था।

लेकिन यह याद रहे कि अकबर सम्राट था, साधु नहीं था; राजनीतिज्ञ था, धर्म गुरु नहीं था। गुणों की तुलना में उसके अवगुण फीके पड़ जाते हैं।

अकबर सफल सेनानयक, महान् साम्राज्य निर्माता और निपुण शासकथा। हम देख चुके हैं कि उसने कई युद्धों में भाग लिया और शानदार सफलता प्राप्त की। यह भी हम देख चुके हैं कि पूर्वकालीन मुसलमान शासकों की संकीर्णताओं से ऊपर उठकर अकबर ने राष्ट्रीयता के आधार पर एक सुदृढ़ शासन स्थापित किया। उसने धर्म और राजनीति में सम्बन्ध नहीं रखा और अपनी प्रजा के साथ उदार व्यवहार किया। उसने सहयोग एवं सहिष्णुता के सिद्धान्तों के आधार पर साम्राज्य कायम किया। उसने किसी भी क्षेत्र में प्रतिभा का सम्मान किया

अकबर स्वयं बहुत पढ़ा-लिखा नहीं था किन्तु वह विद्या का प्रेमी था। उसकी सूझ-बूझ की शक्ति अद्भुत थी। वह दूरदर्शी और व्यावहारिक था। वह दूसरों से पढ़वा कर बहुत चीजों को सुना और समझा करता था। उसने अनेक विद्यालयों और पुस्तकालयों की स्थापना करायी। उसका दरबार विद्वानों और कलाकारों से भरा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रहता था। उनमें नौ व्यक्ति प्रसिद्ध थे जिन्हें नवरत्न कहते थे। गायकों में तानसेन का नाम प्रसिद्ध है। सूरदास और तुलसीदास जैसे सन्त कवियों का उसी के समय में उदय हुआ।

कला का भी विकास हुआ। चित्रकला के क्षेत्र में भारतीय एवं ईरानी शैलियों के मिश्रण से एक नयी शैली का उदय हुआ। वास्तुकला को बहुत प्रोत्साहन मिला। अनेक इमारतें बनीं। फतहपुर सीकरी इमारतों के लिये ही प्रसिद्ध है। प्रसिद्ध सन्त शेख सलीम चिश्ती की स्मृति में ही उन इमारतों का निर्माण हुआ था। उनमें बुलन्द दरवाजा विशेष उल्लेखनीय है। दिल्ली के पास हुमायूँ का मकबरा भी प्रसिद्ध इमारत है।

इस तरह अकबर एक महान सम्राट था। संसार के महान सम्राटों में उसकी गणना की जाती है। कई इतिहासकारों ने अकबर की बड़ी प्रशंसा की है। डा० ईश्वरी प्रसाद के शब्दों में "अकबर अपने समकालीन शासकों से चरित्र और बुद्धि में कहीं ऊँचा था और उसकी नीति उनकी नीति से कहीं अधिक मानवतापूर्ण थी। ......बहुत सी बातों में वह अपने समकालीन यूरोपीय सम्राटों से बहुत बड़ा था।"[१] एडवर्ड्स एवं गैरेट के शब्दों में "अकबर एक साहसी सैनिक, महान सेनानायक और बुद्धिमान शासक था। ...... उसके शासनकाल में मुगलों ने, जो केवल सैनिक पदाधिकारी थे, भारत के स्थायी-राजवंश का पद प्राप्त किया।"[२]

⊙

१ ए शौर्ट हिस्ट्री ऑफ मुस्लिम रूल इन इंडिया

२ मुगल रूल इन इंडिया

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अध्याय ६

मुगल साम्राज्य का विस्तार

जहाँगीर (१६०५-१६२७ ई०)

अरंभिक जीवन—जहाँगीर का जन्म १५६६ ई० में हुआ था। उसका प्रारंभिक नाम मुहम्मद सलीम था। उसकी माता अम्बर नरेश विहारीमल की पुत्री मरियम उज्जमानी थी। १५६८ ई० तक अकबर के कई बच्चे मर चुके थे। अतः अकबर को उत्तराधिकार के लिये बड़ी चिन्ता लगी थी। एक पुत्र के लिये बड़ी श्रद्धा एवं भक्ति से प्रार्थना की जाती थी। अन्त में कहा जाता है कि अजमेर के शेख सलीम चिश्ती के अशीर्वाद से मरियम को पुत्र पैदा हुआ। उसी संत के नाम के आधार पर अकबर ने अपने पुत्र का नाम सलीम रखा। अकबर उसे प्यार से प्रार्थनाओं का पुत्र और शेखो बाबा भी कहा करता था।

सलीम में माता-पिता की बड़ी ममता थी। उसका बड़े चाव से पालन-पोषण हुआ। उसकी शिक्षा-दीक्षा के लिये समुचित प्रबन्ध किया गया। अब्दुर्रहीम खानखाना तथा कई अन्य शिक्षकों की देखरेख में सलीम ने कई भाषाओं तथा कई विषयों का ज्ञान प्राप्त किया। उसे हिन्दी, अरबी, फारसी आदि कई भाषाओं की अच्छी जानकारी थी। उसे इतिहास, भूगोल, गणित आदि कई विषयों का भी अच्छा ज्ञान था। १६ वर्ष की उम्र में अम्बर (जयपुर) नरेश भगवानदास की पुत्री मीना बाई के साथ सलीम का विवाह कर दिया गया। इसी विवाह से सलीम को एक लड़का हुआ। उसका नाम शाहजादा खुसरो था।

सलीम अपने समय के दोषों का भी शिकार था। वह मद्यपान करता था। उनके रनिवस में सैकड़ों उपपत्नियाँ थीं। कानूनी ढंग पर विवाहित पत्नियों की संख्या बीस तक थी। वह गद्दीलोलुप था और पिताद्रोही भी था। जब अकबर दक्षिण में गया था तो सलीम ने गद्दी पाने के लिये विद्रोह कर दिया था। पहली बार समझौता हो गया किन्तु सलीम के दिल-दिमाग में कोई सुधार नहीं हुआ। उसने फिर दोबारे विद्रोह किया। इतना ही नहीं, अपने पिता के परम मित्र अबुल फजल को मरवा दिया। इससे अकबर के दिल को बड़ी चोट पहुँची।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अब अकबर ने रंज होकर खुसरो को अपना उत्तराधिकारी बनाने का निश्चय किया। राजा मानसिंह, मिर्जा अजीज कोका आदि कुछ सरदारों ने भी अकबर का समर्थन किया। किन्तु अन्त में अकबर को अपना निर्णय बदल देना पड़ा। कुछ शक्तिशाली सरदारों ने सलीम का भी पक्ष लिया। अकबर ने सलीम को क्षमा प्रदान कर दी। अतः १६०५ ई० में अकबर के मरते ही सलीम को राजगद्दी प्राप्त हो गयी।

राज्यारोहण—इस तरह १६०५ ई० में ३६ वर्ष की उम्र में सलीम का राज्यारोहण हुआ। गद्दी पर बैठते ही उसने नूरुद्दीन मुहम्मद जहाँगीर बादशाह गाजी की उपाधि ग्रहण की। उसने उदारता की नीति अपनायी और अनेक उदारतापूर्ण कार्य किये। उसने उदारता पर आधारित १२ आदेशों को लागू किया। इन आदेशों के अन्तर्गत कई कर उठा दिये गये और मादक द्रव्यों की खरीद-बिक्री पर रोक लगा दी गई। सड़कों को सुरक्षित रखने और व्यापारियों के साथ सद्व्यवहार करने का आदेश दिया गया। सैनिकों और अफसरों को किसी के घर में बलात् प्रवेश करने और अपने इलाके में वैवाहिक सम्बन्ध करने के लिये मना किया गया। बहुत से कैदियों को मुक्त किया गया और अंग-भंग जैसे कठोर दंड देने के लिये मना किया गया। कुछ विशेष अवसरों पर पशु-वध का रोका गया और रोगियों की देखभाल के लिये चिकित्सकों तथा अस्पतालों की व्यवस्था की गई। भूमि पर कृषकों का और सम्पत्ति पर निकट उत्तराधिकारियों का अधिकार सुरक्षित कर दिया गया।

जहाँगीर ने गैरमुसलमानों के साथ भी उदारता दिखलायी। उसने उन लोगों को भी माफ कर दिया जिन लोगों ने गद्दी पर खुसरो को बैठाने का प्रयास किया। उसने आगरे के किले में स्थित शाहबुर्ज से लेकर यमुना के किनारे तक एक सुनहरी जंजीर लगवा दी। इसके सिरों पर घंटियाँ बँधी हुई थीं। यह न्याय की जंजीर थी। कोई भी व्यक्ति इसे खींचकर अपनी शिकायतों को बादशाह के कानों तक पहुँचा सकता था।

खुसरो का विद्रोह

हम कह चुके हैं कि एक समय अकबर ने खुसरो को ही गद्दी पर बैठाने के लिये सोचा था। कुछ सरदारों ने भी उसका पक्ष लिया था। अतः उसका मन बढ़ा-चढ़ा था। जब अकबर के मरने पर उसे गद्दी नहीं मिली तो उसे बड़ा दुख हुआ। मौका मिलते ही उसने एक साल के अन्दर ही विद्रोह कर दिया। बहुत से अफसरों और जागीरदारों ने भी उसका समर्थन किया। सिक्ख गुरु अर्जुन ने भी उसे मदद दी।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

लेकिन खुसरो सुन्दर एवं लोकप्रिय होते हुए अनुभवहीन युवक था। जहाँगीर ने उसका सामना किया। दोनों में युद्ध (भैरोंवाल में) हुआ। खुसरो युद्ध में हार गया। अब वह पकड़ लिया गया। उसे अन्धा बना कर जेल में रख दिया गया। जेल में ही कुछ वर्षों के बाद (१६२२ ई०) उसकी मृत्यु हो गयी। खुसरो के समर्थकों को भी कठोर दंड दिया गया। गुरु अर्जुन को भी फाँसी दे दी गई।

जहाँगीर के शासनकाल की मुख्य घटनाएँ

बंगाल की विजय— १५७५ ई० में अकबर ने अफगानों को दबा कर बंगाल पर अधिकार किया था। लेकिन उसके बाद भी अफगान उत्पात मचाते रहते थे। जहाँगीर के शासन काल के प्रारंभ (१६१२ ई०) में उस्मान खाँ के नेतृत्व में अफगानों ने विद्रोह कर दिया। लेकिन बंगाल के मुगल सूबेदार इस्लाम खाँ ने विद्रोह को दबा दिया। उस्मान खाँ मारा गया। अब अफगानों की शक्ति पूर्ण रूप से नष्ट हो गयी। लेकिन जहाँगीर ने अफगानों से अच्छा व्यवहार किया। अब वे मुगलों के दोस्त हो गये।

मेवाड़—राणा प्रताप सिंह के नेतृत्व में मेवाड़ के राजपूतों ने अकबर के सामने सिर नहीं झुकाया। अब जहाँगीर ने मेवाड़ को अधीन करने की कोशिश की। इस उद्देश्य से शाहजादा खुर्रम के अधीन एक सेना मेवाड़ के राणा अमर सिंह के विरुद्ध भेजी गई। अमर सिंह ने मुगल सेना का डट कर सामना किया। किन्तु अन्त में उसने हथियार डाल दिया। दोनों में सन्धि (१६१५ई०) हुई। जहाँगीर ने अमर सिंह के साथ सम्मान-पूर्वक व्यवहार किया। उसे चित्तौर का किला वापस कर दिया गया। उसपर दरबार में हाजिर होने और वैवाहिक सम्बन्ध कायम करने के लिये दबाव नहीं डाला गया।

कांगड़ा—यह पंजाब में एक शक्तिशाली पहाड़ी दुर्ग था। इसे अकबर भी नहीं जीत सका था। इसे जीतने के लिये जहाँगीर ने पंजाब के गवर्नर मुर्तजा खाँ को भेजा। किन्तु प्रथम अभियान असफल रहा। उसके बाद यह कार्य खुर्रम को सौंपा गया। उसने कांगड़ा पर विजय प्राप्त कर ली।

अहमदनगर—अकबर ने अहमदनगर पर विजय प्राप्त कर ली थी किन्तु जहाँगीर के समय में मलिक अंबर ने मुगलों की अधीनता अस्वीकार कर दी। वह अबीसीनिया में पैदा हुआ था और अपनी योग्यता से अहमदनगर राज्य का प्रधान मंत्री बन गया था। उसे दबाने के लिये खुर्रम को भेजा गया। खुर्रम

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ने उसे दवाया फिर भी मलिक अम्बर चुपचाप नहीं रहा। वह अशान्ति पैदा करता रहा।

कन्धार की क्षति— अकबर ने कन्धार को मुगल साम्राज्य में मिला लिया था किन्तु जहाँगीर के समय में (१६२० ई०) यह मुगलों के हाथ से निकल गया।

नूरजहाँ—उसकी जीवनी एवं प्रभाव

प्रारंभिक जीवन

नूरजहाँ का प्रारंभिक नाम मेहरुन्निसा था। वह मिर्जा गयासवेग नामक एक ईरानी की पुत्री थी। उसकी आर्थिक स्थिति खराब थी। अतः वह अपने परिवार के साथ अपने भाग्य की परीक्षा करने के लिये भारत की ओर चला। कन्धार में ही मेहरुन्निसा का जन्म हुआ। बहुत ही गरीबी थी। गयासवेग को अकबर ने अपने यहाँ एक साधारण नौकरी दे दी। धीरे-धीरे वह अपनी योग्यता के बल पर उच्च पद पर पहुँच गया। उसे काबुल में दीवान बना कर भेज दिया गया। १७ वर्ष की उम्र में मेहरुन्निसा का विवाह अलीकुली नामक एक युवक से कर दिया गया।

अलीकुली की सलीम की सेवक-मंडली में भर्ती कर दी गई। एक बार उसने एक शेर को मार दिया। अतः सलीम ने उसे शेर अफगन की उपाधि दी। राजा होने के बाद जहाँगीर ने शेर अफगान को बर्दवान में एक जागीर देकर वहीं भेज दिया। कुछ समय के बाद (१६०७ ई०) जहाँगीर को पता चला कि शेर अफगन उसके विरुद्ध षड्यन्त्र कर रहा है। अतः उसने बंगाल के गवर्नर कुतुबुद्दीन को उसे दवाने के लिये भेजा। लड़ाई के फलस्वरूप कुतुबुद्दीन और शेर अफगन दोनों ही मारे गये। शेर अफगन की विधवा पत्नी मेहरुन्निसा और उसकी पुत्री लाड़ली बेगम को शाही दरबार में भेज दिया गया। जहाँगीर ने मेहरुन्निसा को महल में रखा और चार वर्षों के बाद (१६११ ई०) उससे शादी कर ली। शादी के बाद जहाँगीर ने उसे नूरमहल (महल की रोशनी) की उपाधि दी। बाद में वह नूरजहाँ (संसार की रोशनी) कहाने लगी।

जहाँगीर और नूरजहाँ के विवाह के सम्बन्ध में विभिन्न मत

कुछ इतिहासकारों का मत है कि मेहरुन्निसा के विवाह होने के पहले ही से सलीम उस पर मोहित हो गया था और उससे विवाह कर लेना चाहता था किन्तु अकबर ने ऐसा नहीं होने दिया। बाद में सलीम ने शेर अफगन को मरवा कर मेहरुन्निसा से विवाह कर लिया। एक तत्कालीन डच इतिहास लेखक (डोलेट) इन बातों का समर्थन करता है किन्तु अन्य तत्कालीन

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इतिहासकारों ने इन बातों की कहीं चर्चा नहीं की है। आधुनिक इतिहासकारों में डा० बेनी प्रसाद इन बातों से सहमत नहीं होते हैं। लेकिन डा० स्मिथ और डा० ईश्वरी प्रसाद डा० बेनी प्रसाद के तर्कों का खंडन करते हैं और शेर अफगन के वध के लिये सलीम को भी दोषी ठहराते हैं। शेर अफगान की मृत्यु चाहे जैसे हुई हो, इतना तो निश्चय है कि उसके मरने के चार वर्षों के बाद जहाँगीर ने मेहरुन्निसा से अपना विवाह कर लिया।

नूरजहाँ की प्रभुता और उसका प्रभाव

१६११ ई० में जहाँगीर और नूरजहाँ की शादी एक महत्वपूर्ण घटना हुई। अब राज्य में नूरजहाँ की शक्ति उत्तरोत्तर बढ़ने लगी। अब जहाँगीर अपनी मृत्यु के समय तक नूरजहाँ के प्रभाव में रहा। इस काल को नूरजहाँ के प्रभुत्व का काल कहते हैं। इस काल को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है— पहला १६११ से १६२२ ई० और दूसरा १६२२ ई० से १६२७ ई० तक। दोनों भागों में नूरजहाँ शक्तिशाली थी किन्तु पहले भाग में जहाँगीर का भी कुछ प्रभाव था और दूसरे भाग में जहाँगीर एकदम प्रभावशून्य हो गया था। दूसरे भाग में जहाँगीर राज्य के कामों से मुँह फेर लिया था और शराब पीकर भोग-विलास में मस्त रहने लगा था।

इस तरह जहाँगीर नूरजहाँ के सुन्दरता-पाश में बुरी तरह फँस गया। साम्राज्य के शासन की बागडोर उसीके हाथ में धीरे-धीरे चली गई। जहाँगीर उसके हाथ की कठपुतली बन गया। नूरजहाँ योग्य और चतुर औरत थी। वह राजकीय कामों को बड़ी अभिरुचि से करने लगी। अपने प्रभुत्व के प्रथम काल में उसने एक गुट कायम कर लिया। इसे नूरजहाँ गुट (junta) कहते थे। इसमें नूरजहाँ के अतिरिक्त उसके पिता गयासुद्दीन (इतमादुद्दौला), उसके भाई आसफ खाँ, शाहजादा खुर्रम (आसफ खाँ का दामाद) और उसकी माता अस्मत बेगम सम्मिलित थे। यही गुट सर्व-शक्तिशाली था और इसकी कुंजी नूरजहाँ के हाथों में ही थी। सर टामसरो के मतानुसार सम्पूर्ण शक्ति नूरजहाँ के गुट के हाथ में थी और इसकी सहायता के बिना कोई भी कार्य होना असम्भव था।"

सगे-सम्बन्धियों के साथ पक्षपात

अब नूरजहाँ मनमाना कार्य करने लगी। वह अपने सगे-सम्बन्धियों को ऊँचे पदों पर नियुक्त करने लगी। उसका पिता गयासुद्दीन प्रधान मंत्री

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

के रूप में कार्य करता था। उसका भाई आसफ खाँ अर्थमंत्री के पद पर नियुक्त था। आसफ खाँ का दामाद खुर्रम ही सभी प्रमुख अभियानों का पथ-प्रदर्शन करता था। मेवाड़, कांगड़ा, अहमदनगर— के अभियानों का उसी ने नेतृत्व किया था और विजय भी पायी थी।

अब जिसपर भी नूरजहाँ की कृपा होती थी उसका जीवन उन्नत हो जाता था। उसकी रंजगी से किसी का जीवन बर्बाद भी हो सकता था। बड़े-बड़े शक्तिशाली अमीर भी उससे डरते थे। नूरजहाँ स्वयं शाही अधिकारों का व्यवहार करने लगी। वह जहाँगीर के साथ झरोखे में बैठ कर जनता को दर्शन देने लगी। उसके नाम से शाही फरमान जारी होने लगे। सिक्कों पर बादशाह के साथ नूरजहाँ का भी नाम अंकित होने लगा और मुहम्मद हादी के शब्दों में यह बात मुसलमानों के इतिहास में अद्वितीय (unparallel) थी।

शौक-शृंगार के क्षेत्र में नेतृत्व

नूरजहाँ तड़क-भड़क बहुत पसन्द करती थी। उसने शृंगार, वेश-भूषा, पहनावे, सजावट आदि क्षेत्रों में नवीन नमूनों को जारी किया। इन क्षेत्रों में कई पुराने आदर्श बदल गये और उसके द्वारा चलाये गये नये आदर्शों की नकल होने लगी। बड़े-बड़े प्रतिष्ठित एवं प्रगतिशील परिवारों में उसके नमूनों का प्रचार होने लगा।

दान-पुण्य के कार्य

नूरजहाँ ने एक और क्षेत्र में नाम किया। उसके दिल में दीन-दुखियों के लिये दर्द था। वह गरीबों और असहायों के प्रति बहुत सहानुभूति रखती थी। उन्हें आर्थिक सहायता दिया करती थी। निराश्रित लड़कियों की शादी के लिये वह दिल खोल कर मदद दिया करती थी। वह दान देने में बड़ी उदार थी।

नूरजहाँ की प्रभुता से हानि

कहावत है कि अति सर्वत्र वर्जयेत यानी अति का सब जगह परित्याग करना चाहिये। नूरजहाँ ने इस तथ्य को नहीं समझा था। उसकी शक्ति चरमसीमा पर पहुँच गयी और उसकी स्वेच्छाचारिता तथा उसके स्वार्थ भी पराकाष्ठा पर पहुँच गये। इससे दलबन्दी और गृह-कलह को प्रोत्साहन मिला। यह साम्राज्य के लिये हानिकारक सिद्ध हुआ। खुर्रम और महाबत खाँ ने विद्रोह का झंडा खड़ा किया और कन्धार मुगलों के हाथ से निकल गया।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

खुर्रम का विद्रोह—खुर्रम (शाहजहाँ) बहुत ही योग्य एवं महत्वाकांक्षी व्यक्ति था। उसने कई अभियानों में सफलता भी प्राप्त की थी। वह अपने को जहाँगीर का उत्तराधिकारी मानता था। किन्तु नूरजहाँ उसे उत्तराधिकार से वंचित करने के लिये कुचक्र रचने लगी। नूरजहाँ को शेर अफगन से लाड़िली बेगम नामक एक पुत्री थी। शहरयार के साथ लाड़िली बेगम का विवाह कर दिया गया था। अब नूरजहाँ अपने दामाद शहरयार को ही जहाँगीर का उत्तराधिकारी बनाना चाहती थी। इस बात से खुर्रम को बड़ा दुख हुआ। वह गुट से अलग हो गया और विरोधी दल में जा मिला। उसने विद्रोह कर दिया। किन्तु साम्राज्य की सारी शक्ति नूरजहाँ के हाथों में थी। अतः दिल्ली के पास विलोचपुर की लड़ाई में शाहजहाँ की हार हो गयी। उसे अपने दो पुत्रों को दरबार में बंधक के रूप में रखना पड़ा। वह स्वयं नासिक चला गया।

कन्धार की रक्षा करने और राजधानी से दूर रहने के लिये खुर्रम को कहा गया था किन्तु उसने आदेश का पालन नहीं किया। अतः कन्धार मुगलों के हाथ से निकल गया।

आसफ खाँ से मनमुटाव—आसफ खाँ नूरजहाँ का भाई था और खुर्रम आसफ खाँ का दामाद था। नूरजहाँ की स्वार्थपूर्ण नीति के कारण आसफ खाँ से भी उसका मनमुटाव हो गया। अब वह भी नूरजहाँ के गुट से अलग हो गया। १६२२ ई० में उसकी माता और पिता की भी मृत्यु हो चुकी थी। अतः गुट टूट गया।

महावत खाँ का विद्रोह—महावत खाँ एक बहुत ही प्रभावशाली एवं प्रतिष्ठित सरदार था। वह सम्राट् का सच्चा सेवक था। खुर्रम के विद्रोह को दबाने में उसने प्रमुख भाग लिया था। लेकिन नूरजहाँ उसकी बढ़ती हुई शक्ति को देखकर उससे डाह करने लगी। जब महावत खाँ गद्दी पर बैठाने के लिये परवेज का समर्थन करने लगा तो नूरजहाँ आगबबूला हो गयी। अब महावत खाँ को दरबार में बुलाया गया। उस पर चोरी, रिश्वत आदि के अनेक झूठे दोष लगाये गये। उसे अपमानित किया जाने लगा। स्वाभिमानी महावत खाँ ने भी बगावत कर दी।

एक बार झेलम नदी पार करते समय महावत खाँ ने जहाँगीर को गिरफ्तार ही कर लिया। नूरजहाँ किसी तरह भाग चली। शाही सेना बादशाह को मुक्त करने में असफल रही। आसफ खाँ लड़ाई के मैदान से भाग चला। पीछे नूरजहाँ ने भी महावत खाँ के हाथ में अपने को सौंप दिया। महावत खाँ ने दोनों को पहरेदारों की देखरेख में कैद रखा। किन्तु एक समय मौका पाकर दोनों कैद से

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भाग निकले। उसके बाद महावत खाँ कुछ कर न सका किन्तु उसके विद्रोह से बादशाह और बेगम दोनों की प्रतिष्ठा को गहरा धक्का लगा।

नूरजहाँ का चरित्र

स्वस्थ एवं सुन्दर—मध्यकालीन भारत के इतिहास में नूरजहाँ का व्यक्तित्व बहुत ही आकर्षक था। वह बहुत ही स्वस्थ एवं सुन्दर महिला थी। उसके अंग-अंग में सुन्दरता दीख पड़ती थी। उसमें प्रकृति के किसी भी उपहार का अभाव नहीं था। जहाँगीर के साथ विवाह के समय वह ३४ वर्ष की थी और जहाँगीर ४२ वर्ष का था। जहाँगीर उसे देखकर उसे अपनी संगिनी बनाने के लिये उतावला हो गया था। वह शृंगारप्रिय भी थी। अतः कृत्रिम वेशभूषा एवं प्रसाधनों के द्वारा भी वह अपने शरीर को आकर्षक बनाया करती थी।

योग्य एवं परिश्रमी—सुन्दर महिला होते हुए भी नूरजहाँ बहुत ही परिश्रमी और योग्य थी। उसे शिकार का भी शौक था। वह धैर्य, उत्साह एवं अभिरुचि के साथ राज्य के कामों को किया करती थी। घबराना तो वह जानती ही नहीं थी। उसकी बुद्धि तेज थी। वह किसी भी बात को शीघ्र समझ लेती थी। उसे निर्णय लेने में कोई हिचकिचाहट नहीं होती थी। डा० बेनी प्रसाद के शब्दों में "एक महान् योद्धा और कुशल कूटनीतिज्ञ के हाथों में बन्दी होने पर भी उसने अपूर्व चतुरता एवं कार्यक्षमता का प्रदर्शन किया। उसने परदा-प्रथा को जो पूर्वी स्त्रियों में प्रचलित थी बड़े साहस के साथ तिलांजलि दे दी। उसने बाहर आकर चीजों को स्वयं देखा और प्रजा पर बड़े रोब के साथ शासन किया।"[१]

शिक्षित एवं कलाप्रेमी

नूरजहाँ शिक्षित थी। वह फारसी भाषा में कविता भी किया करती थी। उसे संगीत और चित्रकला से भी प्रेम था। वह वेशभूषा, सजावट तथा प्रीतिभोज के सम्बन्ध में नये-नये नमूनों को पेश किया करती थी। वह विद्वानों और कलाकारों को आश्रय भी दिया करती थी।

---

1. "A close prisoner in the hands of a great warrior and astute diplomat she displayed infinite tact and management. With her usual boldness she tore the conventions which relegated her sense to seclusion in the east. She came out of the purdah, saw things with her own eyes, ruled and commanded in the public."

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कोमल एवं दानी

नूरजहाँ की प्रकृति उदारतापूर्ण थी। उसे दान देने में बड़ी रुचि थी। वह दीन-दुखियों के प्रति सहानुभूति रखती थी। कहा जाता है कि उसने अपनी प्रभुता के १६ वर्षों में लगभग ५०० असहाय लड़कियों के विवाह का सारा खर्च दिया था।

चारित्रिक दोष

कई गुणों से विभूषित होने पर भी नूरजहाँ में कुछ बड़े दोष थे। उसकी महत्वाकांक्षा प्रबल थी। उसमें अहंकार की भावना कूट-कूट कर भरी हुई थी। वह बहुत ही स्वार्थी एवं संकीर्ण भी थी। हाथ में सत्ता आने पर उसने अपने सगे-सम्बन्धियों को ही ऊँचे-ऊँचे पदों पर भर दिया। वह दूसरों पर रोब गाँठने के लिये बहुत उत्सुक रहा करती थी। उसकी संकुचित एवं स्वार्थपूर्ण नीति के ही कारण खुर्रम और महावत खाँ विद्रोह करने के लिये बाध्य हुए थे। इस तरह उसकी नीति से साम्राज्य को हानि उठानी पड़ी थी।

जहाँगीर का चरित्र

विरोधी मत—जहाँगीर के चरित्र एवं व्यक्तित्व के सम्बन्ध में दो विरोधी मत हैं। कुछ आधुनिक यूरोपीय विद्वानों के विचारानुसार जहाँगीर चंचल और प्रजापीड़क था। वह महल एवं महिलाओं, सुरा एवं सौन्दर्य में ही अधिक अभिरुचि रखता था। वह राजा और मानव दोनों रूपों में असफल था। किन्तु इसके विपरीत कुछ आधुनिक भारतीय इतिहासकारों के मतानुसार जहाँगीर कुलीन और न्यायप्रिय शासक था। सत्यता दोनों मतों के मध्य में है। उसमें अच्छाइयों और बुराइयों दोनों का अद्भुत सम्मिश्रण था।

डा० स्मिथ के शब्दों में "उसमें कोमलता एवं कठोरता, न्याय एवं चपलता, शिष्टता एवं निर्दयता और विवेक एवं छिछोरेपन का विचित्र सम्मिश्रण था।"[1] लेनपूल के मतानुसार जहाँगीर ने अपने प्रारंभिक जीवन में योग्यता, कर्त्तव्य-परायणता और नीतिज्ञता का अच्छा परिचय दिया था। डा० बेनी प्रसाद के मतानुसार सामूहिक रूप से जहाँगीर के व्यक्तित्व एवं कार्यों पर दृष्टिपात करने से पता चलता है कि वह व्यावहारिक, चतुर, दानशील और दयालु सम्राट् था। उसे मानवता से प्रेम था।

विद्या एवं कला का अनुरागी एवं संरक्षक—जहाँगीर शिक्षित व्यक्ति था। उसे हिन्दी, तुर्की और फारसी भाषाओं का अच्छा ज्ञान था। वह लेखक

1. "A strange compound of tenderness & cruelty, justice and caprice, refinement and brutality, goodness and childness."

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भी था। उसने अपनी जीवनी लिखी जिसे तुजके जहाँगीर कहते हैं। उसे कई विषयों की अच्छी जानकारी थी। उसे साहित्य से तो प्रेम था ही, औषधिशास्त्र, जन्तु-विज्ञान, वनस्पति-विज्ञान जैसे गंभीर विषयों में भी उसकी रुचि थी। उसे कलाओं से भी बहुत प्रेम था। वास्तु, संगीत और चित्रकलाओं में उसकी विशेष अभिरुचि थी। वह स्वयं चित्रकार था। उस्ताद मनसूर नामक प्रसिद्ध चित्रकार उसी के दरबार को सुशोभित करता था। जहाँगीर विद्वानों, लेखकों और कलाकारों का संरक्षक भी था।

मानवता से प्रेम—जहाँगीर मानवतावादी था। वह स्वभाव से ही जन्मजात निर्दयी नहीं था। अधिक मद्यपान कर लेने से उसमें जब-तब उग्रता आ जाती थी। उसे अपने पिता के विरुद्ध किये गये विद्रोह के लिये दुख था। अकबर के मरने पर वह सिकन्दरा में स्थित उसकी दरगाह पर जाकर वहाँ की धूल को अपने सिर पर रखा करता था। अपनी पहली पत्नी जयपुर की राजकुमारी की मृत्यु पर वह बहुत दुखी हुआ था और एकाध दिन तक अन्न-जल भी उसने छोड़ दिया था। नूरजहाँ से तो उसे अगाध प्रेम ही था। उसने अपने पुत्र खुर्रम के अपराध को भी क्षमा कर दिया था।

धार्मिक नीति—जहाँगीर की धार्मिक नीति के सम्बन्ध में भी विद्वानों में मतभेद है। कोई उसे नास्तिक कहता है, कोई उसे कट्टर मुसलमान कहता है तो कोई उसे सहिष्णु कहता है। यहाँ भी हम सभी मतों में सत्य का कुछ अंश पाते हैं। साधारणतया उसने अकबर की धार्मिक नीति पर चलने की कोशिश की किन्तु अकबर के समान वह उदार एवं सहिष्णु था। वह सभी धर्मों का सम्मान करता था। वह सूफीमत से अधिक प्रभावित था। उसने ईसाइयों को धर्म-प्रचार की स्वतन्त्रता दे दी थी। लेकिन उसने सिक्खों के गुरु अर्जुन को प्राण-दंड दे दिया था। इसका कारण राजनीतिक और धार्मिक दोनों था। यह ठीक है कि अर्जुन ने खुसरो को मदद दी थी किन्तु इसके पहले से ही जहाँगीर उसके प्रभाव को देखकर चिन्तित था।

दोष—जहाँगीर के चरित्र का सबसे बड़ा दोष यह था कि वह भोगी, विलासी और शराबी था। वह सुरा, सुन्दरी और सौन्दर्य के वशीभूत था। अतः नूरजहाँ से विवाह करने के बाद उसने धीरे-धीरे राज्य का सारा कार्य उसके हाथों में छोड़ दिया। उसे एक बोतल शराब और एक तश्तरी मांस पर ही सन्तोष हो गया। अन्तिम ५ वर्षों में तो वह नूरजहाँ के हाथ का खिलौना बन गया।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जहाँगीर ने शासन में कोई परिवर्त्तन नहीं किया। उसे मेवाड़ के अतिरिक्त कोई महत्वपूर्ण सैनिक विजय नहीं मिली। दलबन्दी और गृहकलह को प्रोत्साहन मिला। दरबार और शासन दोनों में भ्रष्टाचार का प्रचार था।

लेकिन इतना याद रखना चाहिये कि उसके शासन काल में शान्ति और व्यवस्था कायम रही। व्यवसाय, व्यापार, कला और साहित्य के क्षेत्र में उन्नति हुई। इस तरह जहाँगीर के चरित्र में गुण और दोष दोनों ही पर्याप्त मात्रा में पाये जाते हैं। अतः डा० ईश्वरी प्रसाद ने ठीक ही लिखा है कि "उसके चरित्र में बहुत से ऐसे दोष हैं जो सर्वथा निन्दनीय हैं किन्तु बहुत कुछ ऐसा भी है जो उसे भारतीय इतिहास के अत्यन्त आकर्षक व्यक्तियों में स्थान पाने का अधिकारी बनाता है।"[1]

जहाँगीर का यूरोपियों के साथ सम्बन्ध—जहाँगीर के समय में कई यूरोपीय भारत में आये थे। भारत के पश्चिमी तट पर पुर्तगीज रहते थे। वे १६ वीं सदी के उत्तरार्द्ध में अपनी व्यापारिक कोठियाँ कायम कर चुके थे। वे बहुत उत्पात मचाते रहते थे। १७ वीं सदी के आरंभ में जहाँगीर के शासन काल में उन्होंने सूरत के समीप कुछ शाही जहाजों को पकड़ लिया। सूरत के सूबेदार ने उन्हें परास्त कर दिया। अब पुर्तगालियों के विरुद्ध कड़ी कार्यवाही की जाने लगी। किन्तु बाद में फिर समझौता हो गया और उसकी सुवधाएँ वापस कर दी गई।

मुगल साम्राज्य में बहुत से ईसाई पादरी (जेसुइट) भी आये हुए थे। अकबर ने उन्हें फतहपुरसीकरी के सम्मेलन में भी बुलाया था। जहाँगीर ने भी उनके साथ सहानुभूति दिखलायी। उन्हें धर्म-प्रचार की पूरी स्वतन्त्रता दे दी गई। सम्राट् के भतीजे भी ईसाई धर्म में दीक्षित हो गये थे। उन्हें चर्च बनाने में मदद दी जाने लगी।

जहाँगीर के शासन काल में विलियम हाकिंस, पालकेनिंग, सरटामसरो और टैरी नामक अंगरेज भी भारत में आये थे। इनमें हाकिंस और रो के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। ये लोग व्यापारिक सुविधाओं की माँग करने के लिये आये थे। हाकिंस (१६०८--११ ई०) और रो (१६१५--१८ ई०) दोनों ही तीन-तीन वर्षों तक मुगल दरबार में ठहरे थे किन्तु पुर्तगालियों के दोष एवं कुचक्र के कारण

1. There is much in his character that deserves to be condemned, but there is a great deal that entitles him to be placed among the most fascinating personalities of Indian History. History of Muslim Rule—P. 470

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

व्यापारिक उद्देश्य की पूर्ति में सफलता नहीं मिली। लेकिन तुलनात्मक दृष्टि से हाकिंस की अपेक्षा रो को कुछ सफलता मिली थी। एक शाही फरमान के द्वारा अंगरेजों को सूरत में व्यापार करने का अधिकार प्राप्त हुआ था। इसके लिये रो को ही श्रेय प्राप्त था।

रो हाकिंस से अधिक शिक्षित और समझदार था। दोनों ने अपनी भारत-यात्रा का विवरण लिख छोड़ा है। इन विवरणों से मुगल साम्राज्य की बहुत सी बातों की जानकारी प्राप्त होती है।

⊙

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अध्याय ७

मुगल साम्राज्य का विस्तार—शाहजहाँ
(१६२८—५८ ई०)

आरंभिक जीवन—शाहजहाँ का पहला नाम खुर्रम था। उसकी माता का नाम था जगत गुसाईं या जोधाबाई। वह मारवाड़ के राजा उदय सिंह की पुत्री थी। सलीम ने उससे १५८६ ई० में विवाह किया था और ६ वर्ष के बाद खुर्रम उसके गर्भ से पैदा हुआ। अकबर उसे बहुत प्यार करता था। उसकी शिक्षा के लिये समुचित प्रबन्ध किया गया। उसे फारसी और हिन्दी का अच्छा ज्ञान था। उसे युद्धकला तथा सैन्य संचालन में भी निपुणता प्राप्त हो गयी थी। अपने पिता के शासनकाल में ही उसने अपनी वीरता, साहस एवं रणकौशल का परिचय दिया था। उसने कांगड़ा, मेवाड़ और अहमदनगर के अभियानों में शानदार सफलता प्राप्त की थी। इससे खुश होकर जहाँगीर ने उसे शाहजहाँ (विश्व का सम्राट्) की उपाधि प्रदान की थी। उसे मंसब का भी उच्च पद दिया ..या था।

खुर्रम जहाँगीर के पुत्रों में सबसे अधिक योग्य और संयत था। प्रारंभ में वह नूरजहाँ का भी प्रिय पात्र था। अतः नूरजहाँ के गुट में उसका महत्वपूर्ण और प्रभावशाली स्थान था। १५ वर्ष की उम्र में खुर्रम का विवाह अर्जुमन्द बानू बेगम से कर दिया गया। बानू बेगम नूरजहाँ के भाई आसफ खाँ की ही पुत्री थी। लेकिन बाद में नूरजहाँ अपने दामाद शहरयार को अधिक मानने लगी। अतः खुर्रम ने विद्रोह का झंडा खड़ा किया किन्तु अन्त में उसे ही झुक जाना पड़ा। उसका विद्रोह दबा दिया गया।

राज्यारोहण

जहाँगीर को ४ लड़के थे—खुसरो, परवेज, खुर्रम और शहरयार। शाहजहाँ ने खुसरो को पहले ही मरवा दिया था। परवेज भी मर चुका था। अब जहाँगीर की मृत्यु के समय शाहजहाँ और शहरयार दो लड़के बचे हुए थे।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उस समय शाहजहाँ दक्षिण में था और शहरयार राजधानी के निकट था। नूरजहाँ ने गद्दी पर बैठने के लिये शहरयार को प्रोत्साहन दिया क्योंकि वह नूरजहाँ का अपना दामाद था। शहरयार ने शीघ्र ही लाहौर पहुँच कर अपने को सम्राट् घोषित कर दिया। सैनिकों और सरदारों का समर्थन पाने के लिये उसने उनके बीच खूब धन लुटाया।

उधर आसफ खाँ ने शाहजहाँ का पक्ष लिया क्योंकि वह आसफ खाँ का अपना दामाद था। अतः उसने शाहजहाँ को सम्राट् की मृत्यु की सूचना दी और शीघ्र ही आने के लिये आमंत्रित किया। तब तक उसने खुसरो के एक लड़के को अस्थायी रूप से गद्दी पर बैठा दिया। आसफ खाँ ने एक बड़ी सेना लेकर शहरयार के साथ युद्ध भी किया। शहरयार को हराकर उसे अंधा बना दिया गया और बन्दीगृह में डाल दिया गया। अब शाहजहाँ भी आगरे पहुँच गया। १६२८ ई० में (फरवरी) वह सम्राट् घोषित हुआ। कुछ समय के बाद उसने गद्दी के सभी हकदारों का वध करा दिया। शहरयार की भी वही गति हुई।

शाहजहाँ ने नूरजहाँ के साथ उदारता दिखलायी। उसे राज्य से अलग कर दिया गया किन्तु जीवन निर्वाह के लिये दो लाख सालाना पेंशन स्वीकृत कर दी गयी। वह लाहौर के पास एक विधवा की तरह साधारण जीवन बिताने लगी। १६४२ ई० में उसकी मृत्यु हो गयी और वह अपने पति की समाधि के निकट ही दफना दी गई।

राज्यारोहण की खुशियाली में सम्राट् के समर्थकों को बहुत से पुरस्कार दिये गये। आसफ खाँ को प्रधान मंत्री के पद पर नियुक्त किया गया। महावत खाँ को अजमेर का सूबेदार बना दिया गया।

विद्रोह—शाहजहाँ को शासन के आरंभ में ही दो विद्रोहों का सामना करना पड़ा। एक विद्रोह जुझार सिंह बुन्देल के और दूसरा खानजहाँ लोदी के नेतृत्व में हुआ।

जुझार सिंह वीरसिंह देव का पुत्र था। वीरसिंह देव ने ही जहाँगीर के द्वारा उत्साहित किये जाने पर अबुलफजल का बध किया था। जहाँगीर के समय में बुन्देलों की शक्ति बढ़ी-चढ़ी थी। शाहजहाँ के शासन के आरंभ में ही जुझार सिंह ने विद्रोह एवं स्वतन्त्रता की भावना दिखलायी। उसे दबाने के लिये महावत खाँ को भेजा गया। जुझार सिंह ने अपनी हार मान ली और क्षतिपूर्ति के रूप में एक बड़ी रकम दी। शाहजहाँ ने उसे क्षमा कर दी। किन्तु जुझार सिंह में अभी भी ईमानदारी का अभाव था। कुछ समय के बाद उसने फिर विद्रोह कर दिया। शाहजादा औरंगजेब ने विद्रोह को दबा दिया। जुझार सिंह अपने पुत्र के साथ भागकर जंगल में चले गये जहाँ गोंडो ने उन्हें मार डाला।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

खानजह लोदी ने भी विद्रोह किया। उसका विद्रोह तीन वर्षों (१६२८–३० ई०) तक कायम रहा। वह एक अफगान अफसर का पुत्र था। वह पहले दक्षिण और गुजरात का सूबेदार भी नियुक्त हो चुका था। लेकिन वह बड़ा ही महत्वाकांक्षी था। उसने स्वतन्त्र राज्य कायम करने की कोशिश की। उसने दक्षिण के सुलतानों और मराठों से भी सहायता पाने के लिये प्रयत्न किया। मुगलों के साथ युद्ध छिड़ गया। अन्त में खानजहाँ लोदी अपने दो पुत्रों के साथ कालिंजर के निकट युद्ध में मारा गया। इस तरह यह विद्रोह भी समाप्त हो गया।

अकाल—शाहजहाँ को अपने राज्य काल में एक भयंकर अकाल का भी सामना करना पड़ा। गुजरात और दक्षिण में इस अकाल का आगमन हुआ था। यह तीन वर्षों तक (१६३०-३२ ई०) कायम रहा था। भूख से लोग छटपटाने लगे। हजारों की संख्या में लोग तड़प-तड़प कर मृत्यु का शिकार होने लगे। आदमी आदमी को खाने की कोशिश करने लगे। बाजारों में कुत्तों के मांस तक बिकने लगे थे। लोग सड़कों पर लाश को फेंक दिया करते थे जिससे चलने में कठिनाई हुआ करती थी।

सरकार की ओर से अकालपीड़ितों को सहायता देने के लिये प्रयत्न किया गया। गरीबों को अन्न, वस्त्र और रुपये बाँटे गये। कई कर भी माफ कर दिये गये।

पुर्तगालियों से युद्ध—अकबर के ही समय में (१५७६ ई०) पुर्तगालियों को बंगाल में व्यापार करने की सुविधा दे दी गई थी। उन्होंने हुगली के आस-पास अपनी व्यापारिक बस्तियाँ कायम कर ली थीं। लेकिन उन्हें केवल व्यापार से ही सन्तोष न हुआ। वे अत्याचार करने लगे। वे देशी व्यापारियों से चुंगी की माँग करने लगे। वे गुलामों का भी व्यापार करने लगे और बच्चे-बच्चियों को पकड़-पकड़ कर गुलाम बनाने लगे। वे लोगों को ईसाई भी बनाने के लिये बाध्य करने लगे। इन सभी अत्याचारपूर्ण कार्यों से सम्राट उनसे रंज होने लगा। जब पुर्तगालियों ने बेगम मुमताजमहल की भी दो दासियों को पकड़ लिया तब तो सम्राट की रंजगी और भी बढ़ गयी। सम्राट ने उनपर हमला करने के लिये आदेश दे दिया।

बंगाल के सूबेदार कासिमअली खाँ ने पुर्तगालियों पर आक्रमण किया। हुगली को घेर लिया गया। लगभग साढ़े तीन महीनों तक घेरा जारी रहा। हजारों पुर्तगाली मारे गये। कुछ मुगल सैनिक भी तलवार के घाट उतार दिये गये। अन्त में पुर्तगालियों को अपनी हार स्वीकार कर लेनी पड़ी।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बहुत से पुर्तगाली बन्दी बना लिये गये थे। उन्हें इस्लाम धर्म मान लेने के लिये बाध्य किया गया। जिन्होंने इस्लाम नहीं कबूल किया वे आजीवन बन्दी-गृह में पड़े रहे। कितने तो कैदखाने में ही इस संसार से चल बसे। बहुत से पुर्तगालियों की सम्पत्ति ले ली गई। इस्लाम धर्म कबूल करने वालों को क्षमा प्रदान कर दी गई। पुर्तगालियों के द्वारा जो लोग बन्दी बनाये गये थे उन्हें भी मुक्त कर दिया गया।

मुमताजमहल—अर्जुमन्दबानू बेगम को ही मुमताजमहल कहा जाता था। वह नूरजहाँ के भाई आसफ खाँ की पुत्री थी। वह १५६४ ई० में पैदा हुई थी। वह बहुत ही सुन्दर थी। उसमें अनेक गुण भी पाये जाते थे। १८ वर्ष की उम्र में शाहजहाँ के साथ बड़े धूमधाम से उसका विवाह सम्पन्न हुआ। वह पतिभक्त स्त्री थी। उसने सुख और दुख दोनों में एक समान अपने पति का साथ दिया। उसके गर्भ से चौदह सन्तानें पैदा हुई थीं किन्तु १४ वीं सन्तान के जन्म के ही समय ३७ वर्ष की उम्र में (१६३१ ई०) उसकी मृत्यु हो गई।

मुमताजमहल बहुत ही उदार महिला थी। वह गरीबों के प्रति सहानुभूति रखती थी। उसे इस्लाम धर्म में भी बड़ी श्रद्धा थी। किन्तु उसमें कुछ कट्टरता भी थी। शाहजहाँ की असहिष्णुता की नीति पर उसका भी प्रभाव था।

शाहजहाँ भी मुमताज को बहुत मानता था। उसकी मृत्यु हो जाने के बाद वह बहुत उदास और निराश हो गया था। कई दिनों तक वह शोकमग्न रहा। उसी की स्मृति में आगरे में ताजमहल बना। वह इमारत आज भी संसार को दाम्पत्य प्रेम की कहानी कह रही है।

साम्राज्य-विस्तार[1]—अकबर के समय में कन्धार पर मुगलों का अधिकार हो गया था किन्तु जहाँगीर के समय में (१६२३ ई०) कन्धार पर ईरान का अधिकार हो गया। शाहजहाँ ने कन्धार को जीतने का फिर से प्रयत्न किया। उसने ईरानी सूबेदार को अपने पक्ष में कर लिया और कन्धार फिर मुगलों के हाथ में आ गया। लेकिन दस वर्ष के बाद (१६४६ ई०) ईरान के शासक ने कन्धार फिर से जीत लिया। इसके बाद शाहजहाँ ने कन्धार को जीतने के लिये प्रयत्न किया किन्तु सफलता नहीं मिली।

शाहजहाँ ने मध्य एशिया में भी मुगल आधिपत्य कायम करने की कोशिश की। उसने बलख और बदख्शां पर अधिकार भी (१६४६ ई०) कर लिया किन्तु ये राज्य भी मुगलों के हाथ से निकल गये। इन राज्यों पर अधिकार कायम करने के प्रयत्न में कोई सफलता नहीं मिली। धन-जन की भी बहुत हानि हुई।

१ शाहजहाँ की पश्चिमोत्तर एवं दक्षिणी नीतियों का विस्तारपूर्वक वर्णन आगे किया गया है।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शाहजहाँ ने धार्मिक एवं राजनीतिक उद्देश्यों से प्रभावित होकर दक्षिण भारत में भी आधिपत्य स्थापित करने के लिये प्रयत्न किया। उसने अहमदनगर और गोलकुंडा पर विजय प्राप्त की। बीजापुर के साथ युद्ध हुआ और अन्त में सन्धि हुई। औरंगजेब को दक्षिण का सूबेदार बना दिया गया।

उत्तराधिकार युद्ध—मुगल राज्य में उत्तराधिकार के लिये कोई निश्चित नियम नहीं था। बादशाह के बूढ़े होने या मरने पर गद्दी के लिये उत्तराधिकारियों में संघर्ष छिड़ जाता था। राजपद के सामने सम्बन्ध का कोई मूल्य नहीं समझा जाता था। तलवार के द्वारा ही भाग्य की परीक्षा कर ली जाती थी। जो तलवार चलाने और दूसरे को मारने में बहुत तेज था वही सफल होता था।

१६५७ ई० में शाहजहाँ बीमार पड़ा। उसके चार पुत्र थे—दारा, शुजा, औरंगजेब और मुराद। दारा सबसे बड़ा पुत्र था। वह उदार, विद्वान् और योग्य भी था। शाहजहाँ भी उसे बहुत मानता था और उसे गद्दी पर बैठाना भी चाहता था। किन्तु वह चंचल एवं भावुक प्रकृति का था। वह आगरे में ही अपने पिता के साथ रहा करता था।

शुजा बंगाल का सूबेदार था। वह कुशल सैनिक था और उसकी बुद्धि भी तेज थी किन्तु वह भोग-विलास में अधिक अभिरुचि रखता था। धार्मिक दृष्टि से वह शिया मत का अनुयायी था। मुराद गुजरात का शासक था। वह भी विलासी और शराबी था।

सभी पुत्रों में औरंगजेब योग्य था। वह दक्षिण का सूबेदार था। वह सैनिक और राजनैतिक दोनों क्षेत्रों में पर्याप्त अनुभव प्राप्त कर चुका था। वह सुन्नी मत का अनुयायी था और सभी कट्टर मुसलमान उसके समर्थक थे।

अपने पिता की बीमारी का समाचार पाते ही चारों भाइयों में गद्दी के लिये दाव-पेंच शुरू हो गया। एक ही माँ के गर्भ से उत्पन्न सभी भाइयों में लड़ाई होने लगी। शुजा ने बंगाल में सम्राट होने की घोषणा कर दी। वह एक सेना लेकर आगरे की ओर चल पड़ा। लेकिन दारा के पुत्र सुलेमान ने उसे बनारस के निकट पराजित किया और उसे फिर बंगाल की ओर भगा दिया।

गुजरात में मुराद ने भी सम्राट होने की घोषणा कर दी। लेकिन औरंगजेब ने उसके साथ एक समझौता कर लिया। मुराद मूर्ख था वह औरंगजेब के जाल में फँस गया। दोनों ने मिलकर युद्ध करने का निश्चय किया। औरंगजेब ने उसे धन और कुछ राज्य देने का लालच दिया।

धर्मत और सामूगढ़ के युद्ध—अब मुराद और औरंगजेब की सेनाएँ आगे बढ़ीं। शाहजहाँ की तबीयत भी कुछ अच्छी हो गयी थी। जसवन्त सिंह और कासिम खाँ के नेतृत्व में दोनों शाहजादों की सेनाओं का सामना करने

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

के लिए शाही सेनाएँ भेजी गईं। उज्जैन के निकट धर्मत नामक स्थान पर लड़ाई हुई। शाही सेनाओं की पराजय हो गई। अब विजयी शाहजादे आगे बढ़े। वे आगरे से दस मील दूर सामूगढ़ में पहुँचे। दारा ने एक बड़ी सेना के साथ उनका सामना (१६५८ ई०) किया। कुछ राजपूतों ने दारा की मदद की। लेकिन सामूगढ़ का युद्ध दारा के लिये घातक सिद्ध हुआ। वह हार गया और मैदान से भाग चला। औरंगजेब ने शाहजहाँ को कारागार में रख दिया और आगरा पर अधिकार कर लिया।

भाइयों से मुक्ति—अब औरंगजेब ने अपने भाइयों को अपने मार्ग से हटाने का निश्चय किया। उसने मुराद को धोखा दिया। मुराद को दावत में आमंत्रित किया गया। उपस्थित होने पर औरंगजेब ने उसे खूब शराब पिला दी और उसे कैद कर ग्वालियर के किले में बन्द कर दिया। कुछ समय के बाद (१६६१ ई०) उसने मुराद को एक हत्या के अपराध में मरवा डाला। दारा की हार का समाचार पाकर शुजा ने फिर विद्रोह करने का प्रयत्न किया। औरंगजेब के सेनापति मीरजुमला ने उसका पीछा किया। वह आराकान की ओर भाग चला। इसके बाद उसके विषय में फिर कोई खबर नहीं मिली। संभवतः आराकानियों ने उसे मार डाला।

अब दारा और उसके पुत्र सुलेमान की बारी आयी। सामूगढ़ की पराजय के बाद दारा दिल्ली और लाहौर होता हुआ मुलतान पहुँचा। वह फिर गुजरात होता हुआ अजमेर पहुँचा। अजमेर के पास औरंगजेब ने उसे फिर परास्त किया। अब दारा सिन्ध की ओर भागा। रास्ते में एक अफगान सरदार (मलिक जीवान खाँ) ने उसे पकड़ लिया और औरंगजेब को सौंप दिया। उसे इस्लाम का विरोधी घोषित किया गया क्योंकि वह शिया था। उसे बहुत अपमानित किया गया। गंदे-फटे कपड़े पहना कर और हाथी पर बैठाकर उसे दिल्ली की सड़कों पर घुमाया गया। अन्त में (१६५६ ई०) उसका जीवन समाप्त कर दिया गया। दूसरे साल सुलेमान को भी कैद कर लिया गया और मार डाला गया।

शाहजहाँ की दशा—औरंगजेब ने अपने भाइयों का बध कर अपना रास्ता साफ कर लिया किन्तु अभी उसका पिता कारागार में पड़ा हुआ था। औरंगजेब ने अपने पिता के साथ भी बड़ा ही अपमानजनक व्यवहार किया। कारागार में सम्राट को साधारण कैदी की तरह रखा गया। उसे किसी प्रकार की सुविधा नहीं दी गई। उसकी एक पुत्री जहाँनारा उसके साथ थी। इस तरह सम्राट की दयनीय दशा थी। उसी हालत में १६६६ ई० में शाहजहाँ इस संसार से चल बसा। उसे ले जाकर मुमताजमहल की बगल में दफना दिया गया।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

औरंगजेब की सफलता के कारण

उत्तराधिकार युद्ध में औरंगजेब सफल हुआ। उसकी सफलता के लिये निम्नलिखित कई कारण थे।

शाहजहाँ की कमजोरी—औरंगजेब की सफलता का मुख्य कारण शाहजहाँ की कमजोरी था। बुढ़ापे और बीमारी के कारण शाहजहाँ बहुत कमजोर हो गया था। उसमें दूरदर्शिता का भी अभाव था। बीमारी से चंगा होने पर भी उसने सत्ता अपने हाथ में नहीं ले ली बल्कि इसे दारा के हाथ में सौंप दिया। इसका फल हुआ कि अन्य तीन भाई अपने पिता से बिगड़ गये और उनकी ईमानदारी में विश्वास खो दिये। उनके दिमाग में दारा के विरुद्ध भी प्रतिक्रिया हुई। युद्धकाल में भी शाहजहाँ ने समस्या हल करने के लिये सक्रियता नहीं दिखलायी।

औरंगजेब की योग्यता—औरंगजेब योग्य और शक्तिशाली था। वह चतुर नीतिज्ञ और कुशल सेनापति था। उसे युद्ध और सैन्यसंचालन के सम्बन्ध में अनुभव प्राप्त था। उसमें वीरता एवं साहस की भावना भरी हुई थी। उसके सैनिक भी बड़े ही कुशल थे। उसके तोपखाने भी अधिक प्रभावकारी थे। वह बुद्धिमान भी था। अतः उसने अपनी चतुराई से मुराद को अपने पक्ष में करके अपना उल्लू सीधा किया। सुन्नी होने के कारण औरंगजेब को बहुसंख्यक मुसलमानों का भी समर्थन प्राप्त हुआ था।

दारा की अयोग्यता—दारा अयोग्य, अदूरदर्शी और अनुभवहीन युवक था। अपने पिता के निकट रहने के कारण वह घमंडी बन गया था। उसके सैनिक तैयारी ठीक नहीं थी। उसकी सेना मिश्रित जातियों एवं धर्मों की थी। अतः उसमें एकता का अभाव था। दारा में दूरदर्शिता भी नहीं थी। वह यह नहीं समझता था कि कब आक्रमण करना चाहिये और कब नहीं करना चाहिये। उसने युद्धकाल में भी एक भारी भूल की। वह हाथी से उतर कर घोड़े परसवार हो गया। उसके सैनिक उसे हाथी पर नहीं देखकर बेचैन और हिम्मतपस्त हो गये। शिया होने के कारण दारा को कट्टर मुसलमानों का समर्थन भी नहीं मिला।

शुजा की विलासिता—शुजा भी विलासी और अदूरदर्शी था। औरंगजेब का मुकाबला करने के लिये उसमें क्षमता नहीं थी।

मुराद की मूर्खता—मुराद मूर्ख था। तभी तो वह सहज ही औरंगजेब के जाल में फँस गया। वह शराबी था। अतः समय-समय पर शराब के नशे से उसकी बुद्धि भ्रष्ट हो जाया करती थी।

चरित्र और मूल्यांकन

शाहजहाँ के चरित्र एवं व्यक्तित्व के सम्बन्ध में इतिहासकारों के दो मत हैं। एक मत के अनुसार शाहजहाँ बहुत ही योग्य और सफल शासक था और उसका

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शासनकाल मुगलकालीन इतिहास का स्वर्ण-युग (Golden Age) था। इस मत के समर्थन में बहुत सी बातें कही जा सकती हैं।

साम्राज्य विस्तार—हंटर का कथन है कि "शाहजहाँ के समय में मुगल साम्राज्य ने अपनी शान एवं शक्ति के शिखर को स्पर्श कर लिया था।" खफी खाँ का कथन है कि "अकबर एक महान् विजेता एवं व्यवस्थापक था किन्तु शाहजहाँ एक महान् शासक था। शान्ति-व्यवस्था, आर्थिक प्रबन्ध और शासन प्रबन्ध में भारत का कोई शासक उसकी समता नहीं कर सकता।" शाहजहाँ के समय में मुगल साम्राज्य का खूब विस्तार हो चुका था। यह सिन्ध से लेकर आसाम तक और अफगानिस्तान से लेकर गोआ के निकट तक फैला हुआ था। इसमें २२ सूबे थे। दक्षिण के राज्यों ने भी मुगलों की अधीनता मान ली थी। अभी मुगल साम्राज्य को राजपूतों का भी समर्थन प्राप्त था। इस तरह शाहजहाँ ने योग्य सैनिक एवं साम्राज्य निर्माता के रूप में अपना परिचय दिया था। अपने पिता के समय में कांगड़ा, मेवाड़ और दक्षिण की विजय करने में उसकी योग्यता का परिचय मिला था।

निपुण शासन—शाहजहाँ कुशल शासक भी था। ट्रैवर्नियर का कथन है कि "शाहजहाँ ऐसा शासन नहीं करता था जैसा कि एक राजा अपनी प्रजा पर करता है। उसका शासन ऐसा था जैसा एक पिता का अपने परिवार और पुत्रों पर होता है।"[1]

लेनपूल का कथन है कि "शाहजहाँ अपनी दयालुता एवं उदारता के लिये प्रसिद्ध था और इसीने उसे प्रजा का इतना प्रिय बना दिया था।" वह उदार सम्राट था और अपनी प्रजा के हित का ख्याल रखता था। उसने अकबर द्वारा स्थापित शासन-प्रणाली में कोई विशेष परिवर्त्तन नहीं किया। लेकिन राजकीय कामों में वह अभिरुचि रखता था। वह योग्यता को महत्त्व देता था और योग्य व्यक्तियों को नियुक्त करता था। उसका दीवान सादुल्ला खाँ बहुत ही योग्य, न्याय-प्रिय और कर्त्तव्यपरायण था। सम्राट उचित न्याय पर भी ध्यान देता था। वह दीन-दुखियों की शिकायतों को सुनता था। वह अन्यायी कर्मचारियों को दंड देता था। अकाल की स्थिति में वह प्रजा को विविध सहायता दिया करता था। वह बहुत परिश्रम करता था।

शान्ति-व्यवस्था—शाहजहाँ के साम्राज्य में शान्ति-व्यवस्था कायम रही। कोई विदेशी हमला नहीं हुआ। सभी क्षेत्रों में उन्नति हुई। एलफिंस्टन के मता-

1. Shahjahan reigned not so much as a king over his subjects but rather as a father over his family and children.

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नुसार उसकी शासन-व्यवस्था इतनी अच्छी थी कि वैसी प्रायः एशियायी जातियों में कम ही मिलती है। कई आधुनिक भारतीय इतिहासकारों की दृष्टि में भी शाहजहाँ एक सफल शासक था।

आर्थिक उन्नति— एलफिंस्टन के शब्दों में "शाहजहाँ का शासन-काल भारतीय इतिहास में सबसे अधिक समृद्धिशाली युग था।" बर्नियर के कथनानुसार भी "शाहजहाँ का शासन काल मुगल काल का अत्यन्त शानदार और समृद्धिशाली युग था।" उसके समय में खेती, व्यापार और व्यवसाय की उन्नति हुई। इस तरह आय के साधनों में वृद्धि हुई। उसने अनेक इमारतों को बनवा कर रोजगार और कारीगरी को प्रोत्साहन दिया। युद्ध, राजपरिवार, दरबार और भवन-निर्माण आदि पर बहुत बड़ी रकम खर्च होती थी फिर भी शाही कोष एकदम खाली नहीं हुआ। जनता से अनुचित एवं अन्यायपूर्वक कर नहीं वसूला गया। आर्थिक स्थिति अच्छी ही रही।

सांस्कृतिक उन्नति—शाहजहाँ ने सांस्कृतिक क्षेत्र में तो और भी कमाल कर दिया। वह विद्वानों, साहित्यकारों और कलाकारों का आश्रय दाता था। वह उन्हें उदारतापूर्वक सहायता प्रदान किया करता था। उसने शिक्षा को प्रोत्साहन दिया। उसने अनेक शिक्षण-संस्थाओं को स्थापित किया। वह स्वयं इतिहास, जीवनी एवं कविता को पढ़ा करता था। उसके दरबार में अनेक कवि एवं विद्वान् रहते थे। उसके दरबार में फारसी के अतिरिक्त हिन्दी और संस्कृत के भी विद्वान् रहते थे।

कला के क्षेत्र में अद्भुत प्रगति हुई। वास्तुकला का विकास हुआ। अनेक इमारतों का निर्माण हुआ। आगरे के किले में स्थित मोती मस्जिद और सम्मन बुर्ज प्रसिद्ध इमारत हैं। मोती मस्जिद विश्व में सबसे सुन्दर मस्जिद मानी जाती है। दिल्ली के लाल किले में दीवाने आम और दीवाने खास और रंगमहल उल्लेखनीय हैं। दिल्ली की जामा मस्जिद भारत में सबसे बड़ी मस्जिद है। दीवाने आम सजावट के लिये प्रसिद्ध है। तख्त ताऊस भी आश्चर्यजनक स्मारक था। यह लगभग १० फीट लम्बा, ७ फीट चौड़ा और १५ फीट ऊँचा था। इसके बनाने में रकम और बहुमूल्य धातुओं के रूप में बहुत धन खर्च किया गया था।

इमारतों में आगरे में स्थित ताजमहल का स्थान सर्वोपरि है। इसके निर्माण से मुगल कालीन वास्तुकला में चार चाँद लग गये हैं। यह शाहजहाँ की प्यारी पत्नी मुमताजमहल का मकबरा और स्मारक है। यह संगमरमर की बनी हुई एक गुम्बददार वर्गाकार इमारत है। यह इमारत लगभग २२ वर्षों में ३ करोड़

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रुपये के खर्च से तैयार हुई। काम करने वाले मजदूरों और कारीगरों की संख्या लगभग बीस हजार थी। ताजमहल की सुन्दरता अद्वितीय है। इसे देखकर ही इसकी अनुपम सुन्दरता का अनुभव किया जा सकता है। इसे इमारतों की रानी कहते हैं। देश-विदेश के लोग इसे देखकर दंग रह जाते हैं।

शाहजहाँ को संगीत एवं चित्रकारी से भी बहुत प्रेम था। वह बड़े चाव से संगीत को सुना करता था। वह स्वयं गाता और चित्र भी बनाता था। संगीतज्ञ रामदास और चित्रकार मुहम्मद कादिर उसीके दरबार में रहते थे। शाहजहाँ को बाग-बगीचों का भी बहुत शौक था। उसने दिल्ली, आगरे और लाहौर में बहुत सुन्दर उद्यानों की व्यवस्था की थी।

दूसरा मत—शाहजहाँ के व्यक्तित्व का दूसरा पक्ष भी है। एक पक्ष उज्ज्वल है तो दूसरा पक्ष कलंकपूर्ण है। डा० स्मिथ तथा कुछ अन्य इतिहासकारों के मतानुसार शाहजहाँ का शासनकाल मुगलकालीन इतिहास का स्वर्ण-युग नहीं था। इसके कई कारण हैं।

शाहजहाँ के चरित्र में कुछ बहुत बड़े दोष थे। वह स्वार्थी और शक्ति लोलुप था। उसने राजगद्दी के लिये अपने पिता के विरुद्ध विद्रोह किया था। गद्दी को सुरक्षित रखने के लिये उसने राजपरिवार के कई व्यक्तियों का बध करा दिया था। इस तरह वह कठोर शासक था।

शाहजहाँ के शासनकाल में विद्रोह भी हुए। पुर्तगालियों के साथ लड़ाई भी हुई। शासन में भ्रष्टाचार था। प्रान्त के कई अधिकारी घूसखोर और अन्यायी थे। गुजरात और दक्षिण में भयंकर अकाल का प्रकोप हुआ। वह अकाल करीब तीन वर्षों तक कायम रहा और उसमें हजारों व्यक्ति काल के गाल में चले गये। लोगों को अपार कष्ट सहने पड़े।

शाहजहाँ अपने चारों पुत्रों को एक दृष्टि से नहीं देखता था। वह दारा को विशेष मानता था। अतः अन्य तीन पुत्र उससे असन्तुष्ट रहते थे। इस तरह उत्तराधिकार युद्ध हुआ जिसके कारण धन-जन की हानि हुई।

शाहजहाँ की धार्मिक नीति संकीर्ण थी। उसमें सहिष्णुता का अभाव था। उसने हिन्दुओं के साथ अच्छा व्यवहार नहीं किया। उसने उनके मन्दिरों को तोड़वाया और उन्हें इस्लाम स्वीकार करने के लिये बाध्य किया। पुर्तगालियों को भी ईसाई बनाया गया। दक्षिण के शिया राज्यों पर हमला किया गया क्योंकि शाहजहाँ स्वयं सुन्नी मुसलमान था। इस तरह उसने धर्मांधता का आरम्भ किया जो बाद में साम्राज्य के लिये घातक सिद्ध हुई।

शाहजहाँ के समय में ही मुगल सेना की दुर्बलता भी स्पष्ट हो गयी। मध्य एशिया और कन्धार में मुगल सेना को पराजित होना पड़ा था।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शाहजहाँ की नीति के कारण धन और जन दोनों की बहुत बर्बादी हुई। साम्राज्य विस्तार के लिये उसने कई युद्ध किये। इन युद्धों में बहुत धन खर्च हुआ और बहुत सैनिक भी मारे गये।

शाहजहाँ बड़ा ही महत्त्वाकांक्षी, अभिमानी और शौकीन था। उसने इमारतों के निर्माण और भोग-विलास पर धन पानी की तरह बहा दिया। उसका उपयोग आय के साधनों को बढ़ाने और लोकहित के कामों में किया जा सकता था। लेकिन ऐसा नहीं किया गया। संभव है कि इतनी बड़ी धन-राशि जमा करने में जनता के साथ अन्याय हुआ हो।

इस तरह शाहजहाँ के व्यक्तित्व में अच्छाई और बुराई, गुण और दोष का विचित्र सम्मिश्रण है। उसके शासन काल में एक ओर महानता और ऐश्वर्य थे तो दूसरी ओर अवनति के भी चिन्ह दृष्टिगोचर होते थे। वैभव के पीछे निर्धनता भी छिपी हुई थी। एक इतिहासकार[1] ने बहुत ठीक ही कहा है कि "शाहजहाँ का शासनकाल एक शानदार युग था किन्तु यह पतन के चिन्हों से सर्वथा विमुक्त नहीं था। साम्राज्य की सारी चमक-दमक शुद्ध सुवर्ण नहीं थी।" इसीलिये शाहजहाँ के राज्य काल को विरोधाभास (Paradox) कहा जाता है। असल में शाहजहाँ भी एक मनुष्य था और इस नाते उसमें पूर्णता का अभाव था। सर वूल्जे हेग के मतानुसार "शाहजहाँ कोई पुण्यात्मा शासक नहीं था जिसके चरित्र पर शायद ही कोई दाग हो और न तो वह अनैतिकता का राक्षस ही था।"[2] वास्तविकता दोनों के बीच में थी। अतः सीमित अर्थ में ही हम उसके शासनकाल को मुगलों का स्वर्ण-युग कह सकते हैं। यदि वास्तु कला के विकास की दृष्टि से उसके शासनकाल को स्वर्णयुग कहा जाय तो उसमें कोई अत्युक्ति नहीं होगी। एक इतिहासकार का कथन है कि "यदि सम्पूर्ण भारतीय ऐतिहासिक साहित्य नष्ट हो जाय और शाहजहाँ के शासनकाल की कहानी कहने के लिये केवल इमारतें बच जायँ तो भी उसका शासनकाल इतिहास में अत्यन्त वैभवशाली ही समझा जायगा।"[3]

---

१ श्री एस० आर० शर्मा

२ Shahjahan is not the virtuous sovereign with hardly a blemish on his character, depicted by contemporary Indian chroniclers, nor on the other hand, is the monster of moral depravity, described by some European travellers.

३ Even if the entire mass of historical literature had perished and only the buildings had remained to tell the story of Shahjahan's reign, there is little doubt that it would have still been pronounced as the most magnificent in history.

—Dr. B. P. Saxena.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अध्याय ८

मुगल साम्राज्य का विस्तार—औरंगजेब
(१६५८ – १७०७ ई०)

आरम्भिक जीवन—औरंगजेब का जन्म १६१८ ई० में उज्जैन के निकट हुआ था। बचपन में कुछ समय तक उसे बहुत कष्ट सहने पड़े थे। जब शाहजहाँ ने अपने पिता के विरुद्ध विद्रोह किया था तो उस समय दारा और औरंगजेब को बंधक के रूप में नूरजहाँ के अधीन रखा गया था। कुछ समय के बाद विद्रोह शान्त हो जाने पर दोनों को मुक्त किया गया। औरंगजेब की शिक्षा के लिये समुचित प्रबन्ध हुआ था। वह पढ़ने-लिखने में बहुत तेज था। उसने अरबी और फारसी की अच्छी जानकारी प्राप्त कर ली। उसे तुर्की और हिन्दी का भी ज्ञान प्राप्त हुआ था। कुरान और हदीस नामक धार्मिक ग्रन्थों का वह अच्छा विद्वान बन गया। उसमें साहस एवं वीरता की भावना भी खूब भरी हुई थी। अतः उसे युद्ध एवं सेना सम्बन्धी शिक्षा भी दी गई। १६ वर्ष की उम्र में उसे ४००० का मनसबदार भी बना दिया गया।

प्रारंभ से ही औरंगजेब ने अपनी योग्यता का परिचय देना शुरू किया। १७ वर्ष की ही उम्र में (१६३५ ई०) उसे जुझार सिंह को दबाने के लिये भार सौंपा गया। उसने सफलतापूर्वक विद्रोह को दबा दिया। उसने अपनी कार्रवाइयों से भी स्पष्ट कर दिया कि वह एक कट्टर मुसलमान था। उसने मौका मिलते ही हिन्दुओं को इस्लाम स्वीकार करने के लिये बाध्य किया।

दक्षिण का सूबेदार—१६३६ ई० में औरंगजेब को दक्षिण का सूबेदार बना दिया गया। वह अपने इस पद पर ८ वर्षों तक कायम रहा। इसी अवधि में १६ वर्ष की उम्र में ईरान के शाही परिवार में उसका विवाह सम्पन्न हुआ। वह तीन वर्षों तक (१६४५-४७ ई०) गुजरात का और ४ वर्षों तक (१६४८-५२ ई०) सिन्ध तथा मुलतान का सूबेदार रहा। इस अवधि में उसने एक योग्य शासक के रूप में अपना परिचय दिया। लेकिन सेनापति के रूप में उसे असफलता प्राप्त हुई। वह बलख (१६४७ ई०) और कन्धार (१६४९, १६५२ ई०) के अभियानों में बिलकुल

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

असफल रहा। इससे रंज होकर शाहजहाँ ने औरंगजेब को फिर दक्षिण में सूबेदार बना कर भेज दिया। इस बार ५ वर्षों तक (१६५२-५७ ई०) वह अपने पद पर कायम रहा। दक्षिण में वह महत्त्वपूर्ण कार्य कर रहा था। मुगलों के प्रभाव को वह बढ़ा रहा था। किन्तु १६५७ ई० में जब शाहजहाँ की बीमारी का समाचार मिला तो वह अपने भाग्य की परीक्षा करने के लिये आगरे की ओर चल दिया।

उत्तराधिकार युद्ध—हम देख चुके हैं कि औरंगजेब ने उत्तराधिकार युद्ध में किस तरह सफलता प्राप्त की। लगभग दो वर्षों तक (१६५७-५८ ई०) चारों भाइयों में संघर्ष चलता रहा। औरंगजेब ने छल-बल दोनों से काम लिया। उसने पहले मुराद को अपनी ओर मिलाया और दारा को दो युद्धों में पराजित किया। इसके बाद उसने एक-एक कर अपने भाइयों और विरोधियों का काम तमाम कर दिया। अपने पिता को बन्दीगृह में बन्द कर दिया।

राज्यारोहण—इस तरह १६५८ ई० में औरंगजेब ने गद्दी पर अधिकार कर लिया। किन्तु एक साल के बाद १६५६ ई० में उसका औपचारिक ढंग से राज्यारोहण हुआ। उसने आलमगीर की एक बड़ी उपाधि धारण की। उस अवसर पर खुशियाली में बहुत धन एवं सामान बाँटे गये।

प्रारम्भिक कार्य—शाहजहाँ की बीमारी और उत्तराधिकार-संघर्ष के कारण साम्राज्य में उथल-पुथल मच गयी थी। शासन शिथिल हो गया था। औरंगजेब को यह भी भय था कि कहीं उसके विरुद्ध कोई गुट न कायम हो जाय। अतः उसने गद्दी पर बैठते ही अनेक महत्त्वपूर्ण कार्य किया। सबसे पहले उसने प्रान्तीय शासन में सुधार किया। जिन प्रान्तों के सूबेदारों ने उसे गद्दी पाने में मदद दी थी उन्हें उसने पुरस्कृत किया। अयोग्य सूबेदारों के स्थान पर नये योग्य सूबेदार नियुक्त किये गये। कई सूबेदारों और सरदारों के वेतन तथा पद में वृद्धि हुई। शाइस्ता खाँ को दक्षिण का सूबेदार बनाया गया।

औरंगजेब ने धार्मिक क्षेत्र में भी सुधार किया। वह कट्टर सुन्नी मुसलमान था। अतः उसने इस्लाम के सुन्नी सम्प्रदाय के ही पक्ष में कार्य किया। उसने इस्लाम के सिद्धान्तों के पालन पर जोर दिया। उसने इस्लाम के विरोधियों और आलोचकों को दंड दिया। कुछ प्रचलित प्रथाओं को हटा दिया गया। सिक्कों पर कलमा लिखने और नव वर्ष मनाने की प्रथाओं को तोड़ दिया गया। नैतिक आचरण के विकास पर जोर दिया गया। क़ुरान के अनुसार आचरण की देखभाल के लिये पदाधिकारी (मुहतसीब) नियुक्त किये गये। नयी मस्जिदों का निर्माण हुआ और पुरानी मस्जिदों की मरम्मती हुई।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

औरंगजेब ने प्रजा को सन्तुष्ट करने के लिये भी प्रयत्न किया। प्रजा पर उचित और अनुचित वहुत प्रकार के कर लगे हुए थे। औरंगजेब ने वहुत से करों को हटा दिया। सबसे पहले राहदारी (घाट, मार्ग आदि पर लगने वाला कर) और पानदारी (एक प्रकार का पेशा-कर जो व्यापारियों से लिया जाता था) नामक कर उठा दिये गये। अन्न को सस्ता करने के लिये गल्ले पर लगने वाली चुंगी घटा दी गई। धार्मिक मेलों पर लगने वाले कर भी हटा दिये गये। हिन्दुओं से लिये जाने वाले तीर्थ-कर आदि उठा दिये गये। इस तरह कुल अस्सी कर हटाये गये।

साम्राज्य-विस्तार—औरंगजेब ने लगभग आधी शताब्दी तक (१६५८-१७०७ ई०) राज्य किया। उनके शासनकाल के दो भाग हैं—१६५८ से १६८१ ई० तक जबकि उसकी गतिविधि का मुख्य केन्द्र उत्तरी भारत था और १६८२ से १७०७ ई० तक जब मुख्य केन्द्र दक्षिण भारत था।

सबसे पहले औरंगजेब का ध्यान उत्तरी पूर्वी सीमा की ओर गया। पूर्व में मुगल साम्राज्य की सीमा कामरूप (आसाम) तक फैली हुई थी। लेकिन अहोम लोग सीमा पार कर मुगल साम्राज्य पर हस्तक्षेप करने लगे। ये मंगोल वंश के थे और उत्तरी वर्मा इनका मूलस्थान था। मुगलों के साथ उनका युद्ध अनिवार्य हो गया। १६५८ ई० में कूचविहार के अहोम राजा ने गोहाटी पर चढ़ाई कर अधिकार कर लिया। गोहाटी तवतक मुगलों के ही अधीन था।

मीरजुमला को बंगाल का सूबेदार नियुक्त (१६६० ई०) किया गया। वह मुगल सेना का प्रसिद्ध सेनापति था। उसने दूसरे ही साल कूचविहार पर एक बड़ी सेना के साथ हमला कर दिया। अहोम लोग जलयुद्ध में बुरी तरह हार गये। उनकी राजधानी गढ़गांव पर मुगलों का अधिकार हो गया। आसाम के अधिकांश भाग पर भी विजय प्राप्त हुई। मुगलों को वहुत माल मिले। लेकिन मुगलों की यह विजय महँगी पड़ी। वर्षा ऋतु के प्रारंभ हो जाने से मुगल सेना में बीमारी फैल गयी। मीरजुमला स्वयं ही रोगग्रस्त हो गया और १६६३ ई० में उसकी मृत्यु ही हो गयी। किन्तु आसाम-विजय ने मीरजुमला को अमर बना दिया। सर यदुनाथ सरकार जैसे प्रसिद्ध इतिहासकार ने उसकी बड़ी प्रशंसा की है। वह साधारण सैनिक की तरह रहता था। उसमें सैनिकों का प्रेम एवं विश्वास था। युद्धकाल में भी वह न्याय एवं मानवता का ध्यान रखता था।

कुछ समय के वाद अहोम लोगों ने फिर कामरूप पर अधिकार कर लिया। मीरजुमला के वाद आसफ खाँ का लड़का शाइस्ता खाँ बंगाल का सूबेदार नियुक्त हुआ था। उसने पूर्वी सीमाओं को सुरक्षित रखने के लिये पूरी कोशिश की।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पुर्तगाली उपद्रव मचाया करते थे और लोगों को पकड़ कर दास के रूप में बेच दिया करते थे। शाइस्ता खाँ ने उन पुर्तगालियों का दमन किया लेकिन वे पूर्णतः नहीं दबाये जा सके। शाइस्ता खाँ ने बंगाल की खाड़ी में स्थित एक टापू (सोनदीप) पर अधिकार कर लिया। उसने अराकान के राजा से चटगांव ले लिये और वहाँ एक मुगल फौजदार रख दिया। इस तरह शाइस्ता खाँ ने साम्राज्य के पूर्वी भागों में मुगल प्रभाव को बढ़ाया। वह बंगाल में तीस वर्षों तक रहा।

औरंगजेब की अन्य नीतियाँ—औरंगजेब ने उत्तर-पश्चिम में स्थित सीमा राज्यों में भी हस्तक्षेप किया। उसने राजपूत राज्यों और दक्षिण के राज्यों में भी हस्तक्षेप किया। हम औरंगजेब की पश्चिमोत्तर सीमा नीति, राजपूत नीति और दक्षिणी नीति का यथास्थान विस्तारपूर्वक वर्णन करेंगे। यहाँ हम औरंगजेब की धार्मिक नीति और कुछ विद्रोहों के उल्लेखमात्र से ही संतोष करेंगे।

धार्मिक नीति—औरंगजेब की धार्मिक नीति संकुचित एवं साम्प्रदायिक थी। वह एक कट्टर मुसलमान था। उचित या अनुचित सभी उपायों के द्वारा इस्लाम का प्रचार करना ही उसका एकमात्र उद्देश्य था। अतः वह एक धर्मान्ध शासक था। उसने इस्लाम को राजधर्म घोषित कर दिया और इसके प्रचार में सारी शक्ति लगा दी। वह इस देश को दार-उल-इस्लाम के रूप में देखना चाहता था। इसके लिये उसने कोई कोर-कसर उठा नहीं रखी।

अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिये औरंगजेब ने हिन्दुओं पर अत्याचार का पहाड़ ही ढाह दिया। उसने कई स्थानों में हिन्दुओं के मंदिरों और मूर्तियों को तोड़वाया। काशी का प्रसिद्ध विश्वनाथ मन्दिर भी तोड़ा गया था। मूर्तियाँ तोड़कर जहाँ-तहाँ फेंक दी गईं। हिन्दुओं की शिक्षण संस्थाएँ भी बन्द कर दी गईं। उनके धार्मिक पर्वों तथा सामाजिक उत्सवों पर प्रतिबन्ध लागू किया गया। उसने हिन्दुओं से जजिया कर लेना शुरू किया। उसने मुसलमानों को बहुत सुविधाएँ दीं। उसने लोगों को इस्लाम कबूल करने को बाध्य किया। जिसने इस्लाम कबूल कर लिया उसके साथ पक्षपात होने लगा, जिसने कबूल नहीं किया उसे दंड दिया जाने लगा। बहुत से हिन्दुओं को नौकरियों से हटा दिया गया और उनकी जगहों पर मुसलमानों को भर दिया गया। देश में मस्जिदों की संख्या बढ़ने लगी। नयी मस्जिदें बनवायी गयीं। मन्दिरों को तोड़वा कर भी उनके स्थान पर मस्जिदें बनीं। पुरानी मस्जिदों का उद्धार किया गया।

इस तरह औरंगजेब ने अकबर की उदार एवं सहिष्णु नीति का परित्याग कर दिया। अकबर ने अपनी उदारता एवं सहिष्णुता के कारण हिन्दुओं का समर्थन

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्राप्त किया था। किन्तु औरंगजेब ने उस नीति को तोड़कर हिन्दुओं के समर्थन को खो दिया। जहाँ-तहाँ राज्य में हिन्दुओं के विद्रोह होने लगे।

विद्रोह—

जाटों का विद्रोह—जाट मथुरा में रहते थे। अब्दुलनवी मथुरा का फौजदार था। वह हिन्दुओं पर बहुत अत्याचार करता था। केशवराय के प्रसिद्ध मंदिर को हानि पहुँचायी गयी। अतः गोकुला के नेतृत्व में जाटों ने विद्रोह कर दिया (१६६६ ई०)। मुगल फौजदार की हत्या कर दी गई। किन्तु जाटों की हार हो गयी। गोकुला की हत्या कर दी गई। जिसके परिवार के कई व्यक्तियों को मुसलमान बना लिया गया। लेकिन विद्रोह जारी रहा। राजराम विद्रोह का नेतृत्व करने लगा। किन्तु वह भी पराजित हुआ और मार डाला गया। अब चूड़ामन के नेतृत्व में विद्रोह का संगठन हुआ। इस तरह औरंगजेब के अन्तिम समय तक जाट मुगलों को परेशान करते रहे।

बुन्देलों का विद्रोह—चम्पतिराव के नेतृत्व में बुन्देल राजपूतों ने भी विद्रोह कर दिया। लेकिन उसकी हार हो गयी। इससे दुखी होकर उसने आत्महत्या कर ली। अब उसका लड़का छत्रशाल विद्रोह का नेतृत्व करने लगा। पहले वह मुगल सेना में नौकरी करता था। किन्तु जब वह दक्षिण में था तो वह शिवाजी के चरित्र एवं कार्यों से बहुत प्रभावित हुआ। उसमें स्वतन्त्रता की भावना जगी। वह स्वतन्त्र राज्य स्थापित करने की कोशिश करने लगा। उसने पूर्वी मालवा में एक स्वतंत्र राज्य स्थापित भी कर लिया। पन्ना में उसकी राजधानी थी। १७३१ ई० में छत्रशाल की मृत्यु हो गयी।

सतनामियों का विद्रोह—सतनामी एक धार्मिक सम्प्रदाय था। ईश्वर के सतनाम में उसका बहुत विश्वास था। किन्तु इस सम्प्रदाय के लोग गृहस्थाश्रम का ही जीवन व्यतीत करते थे। ये लोग मुगलों से बहुत असन्तुष्ट थे। पटियाला के आसपास में इनकी प्रधानता थी। एक बार मुगल सैनिक ने एक सतनामी को मार डाला। इसपर सतनामी लोग उत्तेजित हो गये। मुगलों ने डट कर उनका विरोध किया। अन्त में सतनामी हार गये। बहुत से सतनामी मारे गये। इस तरह उनका विद्रोह दबा दिया गया।

सिक्ख और मराठे[1]—सिक्खों के साथ भी औरंगजेब का सम्बन्ध अच्छा नहीं था। सिक्ख भी उनसे असन्तुष्ट थे। औरंगजेब ने उनके नवें गुरु तेग बहादुर को मरवा दिया था। इसके बाद उसके पुत्र गुरु गोविन्द सिंह के नेतृत्व

[1] सिक्खों और मराठों के साथ मुगलों के सम्बन्ध पर यथास्थान विस्तारपूर्वक प्रकाश डाला गया है।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

में सिक्खों का संगठन हुआ । मुगलों और सिक्खों में औरंगजेब के मरने के समय तक लड़ाई होती रही । मुगलों ने सिक्खों को बहुत तंग किया किन्तु सिक्खों ने भी उनका छक्का छुड़ा दिया ।

मराठों के साथ भी औरंगजेब का सम्बन्ध ठीक नहीं था । शिवाजी के नेतृत्व में मराठों का संगठन हुआ था । लेकिन औरंगजेब को यह बात पसन्द नहीं थी । उसने मराठों को दबाने का भरसक प्रयत्न किया । उसने शाइस्ता खाँ को शिवाजी के विरुद्ध भेजा किन्तु वह शिवाजी का कुछ भी बिगाड़ नहीं सका । राजपूत नरेश जयसिंह के द्वारा प्रभावित होकर शिवाजी आगरे गया । वहाँ शिवाजी को कैद कर लिया गया किन्तु शिवाजी अपनी बुद्धिमानी से एक दिन कैदखाने से निकल भागे । १६८० ई० में शिवाजी की मृत्यु हो गयी । उसके बाद भी मराठों के साथ संघर्ष जारी रहा । औरंगजेब ने शिवाजी के उत्तराधिकारी शम्भू जी को मरवा डाला था ।

औरंगजेब के अन्तिम दिन—औरंगजेब के अन्तिम दिन बड़े कष्ट से बीते । वह ६० वर्ष का हो चुका था । उसे कई क्षेत्रों में असफलता एवं निराशा का अनुभव करना पड़ा था । उसे कोई अपना नहीं दीख पड़ता था । उसे अपने सैनिकों और सेनापतियों में विश्वास नहीं था । उसे अपने पुत्रों में भी विश्वास नहीं था । सब जगह विद्रोह एवं अशान्ति का वातावरण था । उसे अपने जीवन के कुकृत्य याद आ रहे थे । वह दिल और दिमाग दोनों से दुखी था । वह अपने कार्यों के लिये पश्चात्ताप कर रहा था । ऐसी ही स्थिति में १७०७ ई० में उसका देहान्त हो गया ।

औरंगजेब की शासन-प्रणाली

शासन-प्रबन्ध—औरंगजेब के शासन की रूपरेखा वही थी जो अकबर के समय में थी । शासन केन्द्रीकरण के सिद्धान्त पर आधारित था । शासन का प्रधान सम्राट् था । नेपोलियन प्रथम की भाँति वही शासन-सूत्र संचालित करता था । उसकी मदद के लिए अनेक पदाधिकारी होते थे किन्तु उसी के आदेशानुसार कार्य करना पड़ता था । वह सभी विभागों का निरीक्षण करता था । वह बहुत से पत्रों को अपने ही लिखवाता था ।

साम्राज्य को सूबों में बाँट दिया गया था । सूबों की संख्या २१ थी । सम्राट् सूबेदारों पर कड़ा नियंत्रण रखता था । जो सम्राट् की आज्ञा की उपेक्षा करता था उसे दण्ड दिया जाता था । जासूसों की व्यवस्था थी । वे सूबों की खबर राजधानी में पहुँचाया करते थे ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आर्थिक व्यवस्था भी पहले की तरह थी। शुरू में औरंगजेब ने कुछ करों को हटा दिया। किन्तु बाद में फिर उसने कई करों को चालू कर दिया। लेकिन अत्यधिक व्यय के कारण आर्थिक व्यवस्था शिथिल हो गयी। जो अमीर या सरदार विना उत्तराधिकारी के मर जाता था उसकी सम्पत्ति जब्त कर ली जाती थी। इसे ईश्वरीय कोष का अंश समझ कर इस्लाम के प्रचार में खर्च किया जाता था।

सेना—सेना अकबर के समय से बहुत बड़ी थी। लेकिन इसमें विलासिता एवं शिथिलता का प्रवेश होने लगा था। मनसबदारों में सचाई एवं ईमानदारी का सर्वथा अभाव होने लगा। सैनिक और सेनापति भोग-विलास में अधिक रुचि दिखलाने लगे। दक्षिण, पश्चिमोत्तर और मध्य एशिया के युद्धों में असफलता मिलने लगी थी। अतः सैनिकों में निराशा एवं अनुशासनहीनता बढ़ने लगी थी।

न्याय—न्याय-प्रणाली भी पहले के जैसा कायम रही। सम्राट् अन्तिम न्यायालय था। उसे काजी तथा इस्लाम के विद्वानों से न्याय करने में मदद मिलती थी। सम्राट् न्याय के कार्य में विशेष अभिरुचि रखता था। उसने न्यायाधीशों की सुविधा के लिये एक संहिता का निर्माण कराया था। उस संहिता का नाम 'फतवाए-आलमगिरी' है।

औरंगजेब का मूल्यांकन

मनुष्य के रूप में –

सादा रहन-सहन— मनुष्य के रूप में औरंगजेब में अनेक गुण थे। उसका व्यक्तिगत चरित्र बहुत ही अच्छा था। उसका स्वभाव सरल और रहन-सहन सादा था। वह अपने समय के प्रचलित दुर्व्यसनों एवं आदतों से मुक्त था। वह नियमित जीवन विताया करता था। वह गाना-बजाना, रास-रंग, जुआ, मद्यपान आदि चीजों का घोर विरोधी था। उस समय के अनेक मुसलमान बादशाहों के महलों में पत्नियाँ एवं रखैल स्त्रियाँ भी रहती थीं किन्तु औरंगजेब को चार पत्नियाँ भी नहीं थीं जो शरीअत के अनुसार उचित माना जाता था। उसका खान-पान भी बड़ा सादा था। वह ठाट-बाट, तड़क-भड़क नापसन्द करता था। वह ३-४ घंटे ही सोता था। वह खर्च भी बहुत कम करता था। वह सार्वजनिक कोष को निजी कोष नहीं समझता था। वह निजी काम के लिये सार्वजनिक कोष की रकम का उपयोग नहीं करता था। वह अपने निजी खर्च के लिये टोपियाँ बनाता था और कुरान की नकल किया करता था। उसने अन्तिम

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

संस्कारों के सम्बन्ध में भी सादगी पर ही जोर दिया था। उसने अपनी वसीयत में लिख छोड़ा था कि एक मामूली सफेद कपड़े का ही कफन बनेगा और किसी विशाल स्मारक की आवश्यकता नहीं होगी। उसके द्वारा निर्मित टोपियों को बेचकर अन्तिम संस्कार का खर्च चलाया गया। उसके द्वारा नकल की हुई कुरान की प्रतियों को बेचने से जो आय हुई उसे दीन-दुखियों में बाँट दिया गया। इस तरह औरंगजेब स्वभाव से एक महान् प्यूरिटन सम्राट् था।

अद्भुत विद्वत्ता—औरंगजेब में अद्भुत विद्वत्ता थी। हम कह चुके हैं कि वह अरबी और फारसी भाषाओं का विद्वान् था। उसे हिन्दी एवं तुर्की भाषाओं की भी जानकारी था। उसे पढ़ने-लिखने में बहुत रुचि थी। वह बहुत से पत्रों को लिखा करता था। उसी की देखरेख में फतवा-ए-आलमगीरी नामक पुस्तक लिखी गई। यह इस्लामी कानूनों की सर्वश्रेष्ठ रचना मानी जाती है। उसने शिक्षा को प्रोत्साहन देने के लिये अनेक शिक्षण संस्थाओं को भी खोला।

धैर्य एवं कर्मठता—औरंगजेब धीर, गंभीर एवं कर्मठ व्यक्ति था। वह बहुत परिश्रम करता था। वह सबेरे से लेकर रात में सोने के समय तक क्रियाशील रहता था। वह आराम को हराम समझता था। वह आलस्य और थकावट नहीं जानता था। उसकी इच्छा-शक्ति बड़ी दृढ़ थी। वह जिस काम को करना चाहता था उसे करके ही दम लेता था।

इस्लाम का सच्चा अनुयायी—औरंगजेब इस्लाम धर्म का सच्चा अनुयायी था। उसके दिल और दिमाग में इस्लाम ने घर कर लिया था। उसने कुरान और अन्य इस्लामी धर्मशास्त्रों का गहरा अध्ययन किया था। वह कुरान की नकल किया करता था और यह उसे एकदम याद हो गया था। वह इस्लाम के मौलिक सिद्धान्तों का बड़े चाव से पालन करता था। वह रमजान में नियमपूर्वक रोजा करता था और मस्जिद में नमाज पढ़ा करता था। उसे इस्लाम के तीर्थस्थानों से बड़ा प्रेम था और वह हज पर जाने वाले यात्रियों को बहुत सहायता दिया करता था। वह स्वयं हज के लिये जाना चाहता था किन्तु वह अपनी इस इच्छा को पूरा नहीं कर सका। जब औरंगजेब युद्ध क्षेत्र में रहता था तो भी नमाज पढ़ लिया करता था। इस तरह इस्लाम के प्रति उसके दिल में बड़ी श्रद्धा थी।

औरंगजेब के चरित्र का एक पक्ष हमने देखा जो उज्ज्वल है। उसके चरित्र का एक दूसरा पक्ष भी है जो दूषित एवं मलिन है। दूसरे शब्दों में यदि उसमें कई गुण थे तो उसमें त्रुटियों की भी कमी नहीं थी।

अति कठोरता—औरंगजेब स्वभाव से ही बड़ा कठोर एवं क्रूर था। उसमें मानवता का सर्वथा अभाव था। उसमें हुमायूँ की उदारता नहीं थी।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

उसे परिवार के प्रति मोह-माया नहीं थी। उसने अपने पिता के प्रति बर्बरतापूर्ण व्यवहार किया। उसने शाहजहाँ को कैदखाने में रखा और वहाँ उसे कोई सुविधा नहीं दी गई। वह न तो किसी से मिल सकता था और न किसी के यहाँ कोई पत्र ही लिख सकता था। इस तरह शाहजहाँ को बुढ़ापे में अपार कष्ट हुआ। औरंगजेब ने अपने भाई-भतीजों के प्रति भी कठोरता दिखलायी। उसने उनके साथ युद्ध किया और उन्हें निर्दयतापूर्वक मरवा डाला। उसे अपने पुत्र, पुत्री और पत्नी से भी प्रेम नहीं था। उसे उनलोगों पर विश्वास तक नहीं था। उसने अपने पुत्रों को भी बन्दीगृह में रखा और उसका बड़ा पुत्र तो कैदखाने में ही मर गया। उसने अपनी एक पुत्री (जेबुन्निसा) को इसलिये एक किले में बन्द कर दिया कि उसने अपने भाई के प्रति सहानुभूति दिखलायी थी। उसका दिल दोस्तों के दुख से भी द्रवित नहीं होता था। इस तरह औरंगजेब में सहृदयता का नितान्त अभाव था।

औरंगजेब के पक्ष में कहा जा सकता है कि गद्दी के लिये पारिवारिक सदस्यों के प्रति कठोरता प्रथा सी बन गयी थी। जहाँगीर और शाहजहाँ ने भी अपने पिता के प्रति कठोरता दिखलायी थी। फिर भी यह ध्यान में रखना होगा कि औरंगजेब के समान शायद ही किसी अन्य मुसलमान शासक ने कठोरता का प्रदर्शन किया है। औरंगजेब की कठोरता चरम सीमा को भी पार कर चुकी थी।

असीम कट्टरता—औरंगजेब इस्लाम धर्म का सच्चा अनुयायी था किन्तु वह कट्टर भी था। वह इस्लाम के सुन्नी सम्प्रदाय का समर्थक था। इसके बाद वह किसी दूसरे धर्मवालों को देख नहीं सकता था। यहाँ तक कि इस्लाम के शिया सम्प्रदाय वाले भी उसकी आँखों में काँटे की तरह चुभते थे। अतः उसने हिन्दुओं के साथ अत्यन्त ही अनुचित एवं घृणित व्यवहार किया। शिया लोगों के साथ भी उसका व्यवहार निन्दनीय था। इस तरह वह बहुत बड़ा धर्मांध व्यक्ति था। उसने अपनी धर्मांधता में अनेक निन्दनीय दुष्कर्म किये। उसने हिन्दुओं का नाम-निशान मिटा देने के लिये भरसक प्रयत्न किया। उसने शिया राज्यों को भी नष्ट कर देने के लिये कोई कोर-कसर उठा नहीं रखी।

सैनिक के रूप में

वीर एवं साहसी—औरंगजेब बड़ा ही वीर एवं साहसी था। कष्ट एवं कठिनाइयों के बीच भी वह घबड़ाहट एवं थकावट नहीं जानता था। युद्धक्षेत्र में वह अद्भुत शान्ति एवं धैर्य दिखलाता था। वह अपना मानसिक सन्तुलन इतना बनाये रखता था कि युद्धक्षेत्र में भी घोड़े की पीठ पर से उतर कर नमाज पढ़ लिया करता था। लड़कपन से ही वह अपनी योग्यता एवं साहस का परिचय दे रहा था। सम्राट होने के पूर्व ही उसने दक्षिण, कन्धार और मध्यएशिया में

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

युद्धों का संचालन किया था और सफलता भी प्राप्त की थी। सम्राट बनने के बाद भी वह कई युद्धों में शामिल हुआ था। वह बुढ़ापे में भी युद्ध एवं सेना का संचालन किया करता था।

औरंगजेब कूटनीति और योजना-निर्माण में बहुत दक्ष था। उसकी सूझ-बूझ की शक्ति तेज थी। वह दंड और भेद, छल और बल सब नीतियों में चतुर था। उसने उत्तराधिकार युद्ध में बड़ी चतुराई से मुराद को अपने पक्ष में कर अपना उल्लू सीधा कर लिया। इसके बाद उसने मुराद को मरवा डाला। अपने पुत्र अकबर के विद्रोह के समय उसने राजपूतों को धोखा दिया। राजपूत अकबर का समर्थन कर रहे थे। किन्तु औरंगजेब ने एक जाली पत्र अकबर को दिखला दिया। अब अकबर का राजपूतों में विश्वास न रह गया। अपनी कूट-नीति से ही उसने पश्चिमोत्तर सीमांत प्रदेश के कबीलों को भी दबाये रखा।

सम्राट के रूप में

सम्राट के रूप में औरंगजेब का मूल्यांकन करने में इतिहासकारों में मतभेद है। कुछ इतिहासकारों के मतानुसार औरंगजेब महान और सफल शासक था। इसके पक्ष में पहली बात यह है कि उसने अपने बाहुबल से एक विशाल साम्राज्य कायम किया था। उसने समस्त भारत को अपने अधीन लाने का प्रयास किया और इसमें उसे बहुत कुछ सफलता भी मिली थी। दूसरे, उसने समस्त भारत पर एकतन्त्र शासन स्थापित किया। शासन की बागडोर उसी के हाथ में थी और केन्द्र से ही शासनसूत्र संचालित होता था। तीसरे, औरंगजेब बहुत ही परिश्रमी सम्राट था। उसका ख्याल था कि शासक जो आराम और भोग-विलास से दूर रहना चाहिये क्योंकि ये साम्राज्य के पतन को प्रोत्साहन देते हैं। अतः वह अत्यन्त क्रियाशील व्यक्ति था और विभागों तथा पदाधिकारियों के कार्यों का निरीक्षण किया करता था। चौथे, वह न्यायप्रिय शासक था। खफी खाँ के शब्दों में "तैमूर के वंशजों एवं दिल्ली के शासकों में सिकन्दर लोदी के बाद ऐसा कोई शासक नहीं हुआ जिसमें इतनी भक्ति, पवित्रता और न्याय की भावना हो। साहस, सहनशीलता एवं ठोस निर्णय में वह अद्वितीय था।"

लेकिन औरंगजेब के लम्बे शासनकाल की नीतियों और उसके कार्यों का ठीक से अध्ययन करने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि वह साधारण और असफल शासक था। यह निर्विवाद है कि वह एक आदर्श मुसलमान था किन्तु सफल सम्राट नहीं था। वह महान् सैनिक और कूटनीतिज्ञ था किन्तु बुद्धिमान राज-नीतिज्ञ नहीं था। उसकी नीतियों एवं कार्यों के कारण मुगल साम्राज्य पतन के मार्ग पर अग्रसर हो गया। "वास्तव में मुगल साम्राज्य औरंगजेब के आँखें

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मूँदने के पहले ही मर चुका था और अब उसके कमजोर उत्तराधिकारियों के अधीन केवल लाश का चीरा जाना एवं समाप्त होना बाकी था।"[1] अतः ठीक ही मुगल साम्राज्य के पतन के लिये औरंगजेब को ही बहुत अंश में उत्तरदायी माना जाता है।

औरंगजेब की साम्राज्य-विस्तार की नीति, केन्द्रीय-करण की नीति, सबों पर अविश्वास करने की नीति, धार्मिक नीति, राजपूत नीति और दक्षिण नीति—मुगल साम्राज्य के पतन में सहायक सिद्ध हुईं। इन नीतियों के कारण उसे अपनी प्रजा का समर्थन नहीं मिला और साम्राज्य का आर्थिक शोषण हुआ। अधिक साम्राज्य-विस्तार होने के कारण उस पर नियंत्रण रखना कठिन हो गया। उसने सारी शक्ति अपने ही हाथों में केन्द्रित रखी और अपने पुत्रों तथा प्रमुख पदाधिकारियों एवं सरदारों को उत्तरदायित्व का कार्य नहीं सौंपा। अतः उन्हें कार्य करने की क्षमता एवं रुचि नहीं रही और वे राजनैतिक शिक्षा एवं अनुभव से वंचित रह गये। उसकी धार्मिक नीति ने बहुसंख्यक हिन्दुओं को असन्तुष्ट कर दिया। उसकी राजपूत नीति ने वीर, लड़ाकू और साम्राज्य के समर्थक राजपूतों को दुश्मन बना दिया। उसकी दक्षिण नीति ने शिया मुसलमानों को रुष्ट कर दिया और मुगलों के दुश्मन मराठों को बढ़ने का मौका दिया। उसके युद्धों ने साम्राज्य की आर्थिक रीढ़ तोड़ दी।

इतिहासकार खफी खाँ ने औरंगजेब की बड़ी प्रशंसा की है किन्तु उसका यह भी कथन है कि "इस्लाम के नियमों के प्रति उसे इतनी श्रद्धा थी कि वह दंड का प्रयोग ही नहीं करता था और दंड के बिना किसी देश का शासन ठीक नहीं हो सकता। उसके सरदारों में ईर्ष्या के कारण झगड़े होने लगे। अतः वह जो भी योजना बनाता था वह बेकार हो जाती थी और जो कार्य आरम्भ करता था उसके कार्यान्वित होने में बहुत समय लगता था और उसका उद्देश्य असफल होता था।"

इतिहासकार लेनपूल का भी मत है कि "औरंगजेब को अपने जीवन में भयंकर असफलता मिली। लेकिन उसकी असफलता शानदार थी।"

1. In fact the Mughal Empire was already dead before Aurangzeb closed his eyes, and only the carcase remained to be finally torn up and dissolved under his feeble successors.—Modern Indian History vol. I. Sarkar & Datta—P. 90.

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

औरंगजेब को भी मरने के समय अपनी भूलों, असफलताओं और कुकर्मों के लिये बड़ा पश्चात्ताप हुआ था। उसने अपने पुत्रों को लिखे हुए पत्रों में बड़े ही मार्मिक शब्दों में अपने दुखों को प्रकट किया था। उसने लिखा था कि "मैं अकेला ही आया था और अकेला ही जा रहा हूँ। मैंने देश और जनता का कोई उपकार नहीं किया है तथा भविष्य के लिये कोई आशा नहीं है। मैं अपने पापों का भार ढोये जा रहा हूँ और अपने कुकर्मों के लिये चिन्तित हूँ। जो कुछ भी हो, मैं अपनी नाव जल में छोड़ रहा हूँ।"

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अध्याय ६

मुगलों की पश्चिमोत्तर सीमान्त नीति

(१५२६-१७०७ ई०)

भूमिका—भारत की किसी भी सरकार के लिये पश्चिमोत्तर सीमा एक समस्या के रूप में कायम रही है। मुगलों के शासन काल में तो यह समस्या और भी विकट थी। इसके कई कारण हैं। पहिले तो सीमान्त प्रदेशों में कबीले लोग रहते थे। उनमें स्वतन्त्रता की भावना दृढ़ थी। वे किसी के अधीन रहना नहीं चाहते थे। युद्ध करना और लूटपाट मचाना ही उनका मुख्य पेशा था। वे छापामार युद्ध करने में कुशल थे। अतः उन्हें दबाव या प्रभाव में रखना आवश्यक था। इसके लिये कन्धार पर अधिकार होना जरूरी था। दूसरे, सैनिक दृष्टि से भी कन्धार का महत्वपूर्ण स्थान था। मध्य एशिया की ओर से कन्धार होकर भारत पर कोई आक्रमण कर सकता था। तीसरे, आर्थिक दृष्टि से भी कन्धार पर अधिकार करना लाभदायक था। मुगलों के शासनकाल में कन्धार होकर ही भारत और मध्य एशिया तथा सीमान्त देशों में व्यापार होता था। चौथे, काबुल पर मुगलों का अधिकार था। उसकी रक्षा के लिये भी कन्धार पर अधिकार करना अनिवार्य था।

अतः मुगल सम्राट कन्धार के महत्व को खूब समझते थे और उस पर अधिकार करने के लिये पूरे प्रयत्नशील रहे।

बाबर—भारत पर हमला करने के पहले ही पहला मुगल सम्राट बाबर ने १५२२ ई० में ही कन्धार पर अधिकार कर लिया था और इसे अपने छोटे पुत्र कमरान को सौंप दिया था। इसके पहले ही उसने काबुल पर अधिकार कर लिया था।

हुमायूँ—बाबर के मरने पर हुमायूँ सम्राट हुआ। उसने राज्य को अपने भाइयों के बीच बाँट दिया। काबुल और कन्धार कमरान को प्राप्त हुए। किन्तु यह

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हुमायूँ की भारी भूल साबित हुई क्योंकि उन प्रदेशों के निकल जाने से उसे बहुत हानि हुई। जब वह भारत से भाग कर भटकने लगा तो उसने ईरान के शाह से सहायता माँगी। शाह ने सहायता दी किन्तु शर्त यह थी कि हुमायूँ शिया मत कबूल करेगा और विजय के बाद कन्धार को शाह के अधीन सौंप देगा। शाह की सहायता से हुमायूँ ने काबुल और कन्धार को जीत (१५५५ ई०) लिया। किन्तु हुमायूँ ने अपनी प्रतिज्ञा का पालन नहीं किया। इससे शाह बड़ा क्रुद्ध हुआ और उसने इसका बदला चुकाने के लिये निश्चय कर लिया।

अकबर—अकबर के समय में उसका सौतेला भाई मिर्जा मुहम्मद हकीम काबुल का शासक था। किन्तु उसकी नीयत अच्छी नहीं थी। वह सम्राट के विरुद्ध षड्यन्त्र करने लगा। सम्राट ने उसे पराजित किया किन्तु उसका राज्य वापस कर दिया। हकीम के मरने के बाद (१५८५ ई०) काबुल मुगल साम्राज्य का अंग बन गया। मानसिंह को वहाँ का सूबेदार नियुक्त कर दिया गया।

अकबर ने कबीले जातियों को दबाने का भरपूर प्रयत्न किया। उनमें उजबेग और यूसफजाई नामक कबीले बहुत ही अधिक उपद्रवी थे। अब्दुल्ला उजबेगों का बहुत ही प्रभावशाली नेता था। अकबर ने उजबेगों पर हमला कर उन्हें परास्त कर दिया। उनके नेता अब्दुल्ला ने मुगलों से समझौता कर लिया।

अकबर ने यूसफजाइयों को दबाने के लिये पहले जैन खाँ और राजा बीरबल के नेतृत्व में एक बड़ी सेना भेजी। किन्तु दोनों नेता मिलकर एक साथ काम नहीं कर सके। कबीलों ने इस स्थिति से लाभ उठाया और मुगल सैनिकों पर हमला कर दिया। बहुत से मुगल सैनिक मार डाले गये। राजा बीरबल भी पकड़ा और मारा गया। इस घटना से अकबर बड़ा दुःखी हुआ और दो दिनों तक शोक-मग्न रहा। इसके बाद शाहजादा मुराद और राजा टोडरमल के अधीन एक विशाल सेना भेजी गई। टोडरमल ने बीरबल की हत्या का बदला चुकाया। बहुत से कबीले तलवार के घाट उतार दिये गये और बहुतों को पकड़कर बाजारों में बेच दिया गया। अब उनके होश ठीक हो गये।

कन्धार पर भी अकबर की दृष्टि लगी हुई थी। ईरान में सफावी वंश का शाह अब्बास शासक था। मिर्जा मुजफ्फर हुसैन कन्धार का सूबेदार था। शाह उजबेगों के उपद्रव से तंग आ गया था। हुसैन उनके उपद्रव को रोकने में असमर्थ था। अतः शाह उस पर रंज था और उसे पदच्युत करना चाहता था। उधर हुसैन मुगलों की शक्ति से बहुत प्रभावित हुआ था। अतः हुसैन ने कन्धार को

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(१५६४ ई०) अकबर के अधीन सौंप दिया। अकबर ने हुसेन को मनसब का पद देकर अपने दरबार में सम्मानपूर्ण स्थान दिया।

इस तरह अकबर ने सीमान्त प्रदेशों में शान्ति स्थापित की और मुगल साम्राज्य को सुरक्षित बनाया। इससे उसकी प्रतिष्ठा में बहुत वृद्धि हुई।

जहाँगीर—सामरिक और आर्थिक दृष्टि से कन्धार का बहुत ही अधिक महत्व था। अकबर के समय में कन्धार ईरानियों के हाथ से निकल चुका था किन्तु वे इस क्षति को चुपचाप सहन नहीं कर सकते थे। ईरान का शाह अब्बास बहुत ही महत्वाकांक्षी और अवसरवादी शासक था। जहाँगीर के गद्दी पर बैठने के बाद शीघ्र ही १६०६ ई० में कन्धार पर एक ईरानी सेना ने आक्रमण कर दिया। शाह ने आक्रमण के लिये गुप्त रूप से प्रोत्साहन दिया था। किन्तु शाहबेग खाँ के नेतृत्व में मुगल सेना ने ईरानी सेना को हरा दिया। अब अब्बास ने जहाँगीर से चट दोस्ती कर लेने का प्रयास किया। उसने जहाँगीर के पास राजदूत भेजा, बहुत उपहारों को भेजा और विश्वास दिलाया कि कन्धार के हमले के लिये वह किसी प्रकार उत्तरदायी नहीं था। जहाँगीर ने अब्बास की बातों में विश्वास कर लिया और कन्धार की ओर से निश्चिन्त हो गया।

मौका पाकर शाह ने कन्धार पर तैयारी के साथ (१६२२ ई०) हमला कर दिया। शाह ने इस तरह जहाँगीर की आँखों में धूल डाल दी। अब जहाँगीर ने कन्धार के अभियान का नेतृत्व करने के लिये शाहजहाँ को आदेश दिया। उस समय मुगल दरबार में षड्यन्त्र का बाजार गर्म था। नूरजहाँ अपने दामाद शहरयार का पक्ष करती थी। अतः शाहजहाँ को उचित ही शंका हुई कि कन्धार में जाने से और दिल्ली में अनुपस्थित रहने से उसे अधिक हानि हो सकती है। अतः उसने सम्राट के आदेश का पालन नहीं किया और वह कन्धार में लड़ने के लिये नहीं गया।

अब शहरयार को मुगल सेना का नेतृत्व सौंपा गया। उसे मनसबदार के उच्च पद पर नियुक्त किया गया। किन्तु वह कन्धार अभियान के लिये उपयुक्त व्यक्ति नहीं था। वह ईरानियों का कुछ भी बिगाड़ नहीं सका और डेढ़ महीने के घेरे के बाद कन्धार पर उनका अधिकार हो गया। इसके बाद शाह ने जहाँगीर के पास एक पत्र लिखा और कन्धार पर ईरानी हमले एवं अधिकार को न्यायपूर्ण सिद्ध किया।

शाह की नीति से जहाँगीर रंज हुआ। वह उसके विरुद्ध फिर कुछ करने के लिये चाहता था। किन्तु तब तक शाहजहाँ ने विद्रोह का झंडा खड़ा कर दिया

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

था। अतः जहाँगीर लाचार होकर शाह के विरुद्ध फिर कोई कार्य नहीं कर सका।

इस तरह जहाँगीर की पश्चिमोत्तर नीति असफल रही और इससे मुगलों के गौरव में धब्बा लगा।

शाहजहाँ –

कन्धार पर अधिकार—शाहजहाँ ने मुगलों के गौरव में लगे हुए धब्बे को धोने का प्रयत्न किया। वह कन्धार के सामरिक और आर्थिक महत्त्व को भी भली-भाँति समझता था। वह मध्य एशिया के कुछ प्रदेशों (बलख एवं बदख्शां) को जीतने का स्वप्न देखता था। अतः इसके पूर्व कन्धार पर अधिकार कर लेना अत्यावश्यक था। मध्य एशियायी अभियान के सिलसिले में कन्धार लाभदायक सिद्ध हो सकता था। वहाँ सैनिक छावनियाँ कायम की जा सकती थीं। काबुल पर मुगलों का अधिकार था और उसकी सुरक्षा के लिये कन्धार पर भी मुगल अधिकार जरूरी ही था। इस तरह कई उद्देश्यों से प्रभावित होकर शाहजहाँ ने कन्धार पर अधिकार कर लेने के लिये दृढ़ निश्चय कर लिया।

शाह ने अलीमर्दान को कन्धार का सूबेदार नियुक्त किया था। वह योग्य एवं ईमानदार व्यक्ति था। सैद खाँ काबुल में मुगलों का सूबेदार था। शाहजहाँ ने शाह और अलीमर्दान में फूट डालने की कोशिश की। इसके लिये सैद खाँ को कन्धार भेजा गया। उसने अलीमर्दान को मुगलों के पक्ष में करने का प्रयत्न शुरु किया। किन्तु अलीमर्दान ने मुगलों का पक्ष स्वीकार करने में आनाकानी की। उसने मुगलों से रक्षा के लिये शाह से कुछ और सेना माँगी। शाह को अलीमर्दान की ईमानदारी में शंका हुई कि वह अपनी स्थिति को सबल बनाना चाहता है। अब शाह ने उसे कैद कर लेना चाहा। अलीमर्दान को इस अपमानपूर्ण व्यवहार से बड़ा दुख हुआ। वह चट मुगलों से जा मिला। उसने मुगलों की अधीनता मान ली और कन्धार पर (१६३८ ई०) मुगलों का अधिकार हो गया। शाहजहाँ ने अलीमर्दान का सम्मान किया और उसे मनसबदार का उच्च पद (सात हजार जात और सात हजार सवार का) दिया गया।

मध्य एशिया—मध्य एशिया आर्थिक, सामरिक या किसी अन्य दृष्टि से विशेष महत्त्व नहीं रखता था फिर भी उस पर विजय प्राप्त करने से साम्राज्य-विस्तार हो सकता था और सम्राट के गौरव में वृद्धि हो सकती थी। अतीत में कभी शाहजहाँ के पूर्वजों ने भी मध्य एशिया पर आधिपत्य जमाया था। अतः शाहजहाँ भी मध्य एशिया पर विजय प्राप्त करने के लिये बहुत ही उत्सुक था।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इसमें बलख और बदख्शां दो प्रमुख स्थान थे। मौका पाते ही (१६४६ ई०) शाहजहाँ ने इन स्थानों पर हमला कर दिया। इसके लिये शाहजादा मुराद और अलीमर्दान को भार सौंपा गया। मुगलों को सफलता प्राप्त हुई। बलख और बदख्शां पर उनका अधिकार हो गया। मुगलों को बहुत धन और सामान प्राप्त हुए। बलख का शासक नजर मुहम्मद भाग चला।

लेकिन मुगलों की मध्य एशियायी विजय अस्थायी एवं महँगी सिद्ध हुई। मुराद को मध्य एशिया की जलवायु पसन्द नहीं थी। अतः वह शाहजहाँ को सूचित किये बिना ही भारत वापस चला आया। अब औरंगजेब को वहाँ का सूबेदार बना कर भेजा गया। लेकिन कबीले जातियों (उजबेग) ने विद्रोह का संगठन किया। औरंगजेब विद्रोह को दबा नहीं सका। अन्त में औरंगजेब ने नजर मुहम्मद से समझौता कर लिया और इसके बाद वह भारत वापस चला आया। वापसी यात्रा में कबीलों के द्वारा बहुत से मुगल मार डाले गये और बहुत कठोर ठंढक के कारण मर गये।

इस तरह शाहजहाँ की मध्य एशियायी योजना बुरी तरह असफल हुई। इसमें धन और जन दोनों की बहुत हानि हुई। साम्राज्य का विस्तार भी नहीं हुआ। मुगलों के दुश्मनों का भी मन बढ़ने लगा।

कन्धार की क्षति—मध्य एशिया में असफलता होने से ईरान के शाह को भी कन्धार पर अधिकार कर लेने के लिये प्रोत्साहन मिला। १६४२ ई० में दूसरा अब्बास गद्दी पर बैठा था। जब मध्य एशिया में मुगलों की योजना समाप्त हो गयी (१६४६-४७ ई०) तो उसके बाद अब्बास ने कन्धार पर हमला करने की योजना बनायी। १६४८ ई० में कन्धार को घेर ही लिया गया। शाहजहाँ ने कन्धार की रक्षा के लिये पूरी तैयारी नहीं की। कन्धार का मुगल सूबेदार दौलत खाँ घबड़ा गया। दो महीने के अन्दर ही दौलत खाँ ने किले को ईरानियों के हाथ में सौंप दिया और कन्धार पर उनका फिर से अधिकार हो गया (१६४६ ई० फरवरी)।

शाहजहाँ ने कन्धार को फिर से अपने अधिकार में लाने के लिये तीन बार प्रयत्न किया—१६४६, १६५२ और १६५३ ई० में। पहली और दूसरी बार औरंगजेब तथा सादुल्ला खाँ ने और तीसरी बार दारा ने अभियान का नेतृत्व किया। किन्तु मुगल साम्राज्य के तीनों प्रयत्न असफल रहे। कन्धार पर मुगलों का अधिकार नहीं हो सका। सहस्रों सैनिक युद्ध एवं सर्दी के कारण मारे गये। १२ करोड़ रुपये का खर्च हुआ और यह रकम सम्पूर्ण साम्राज्य की समूची आय (२२ करोड़) के आधे से अधिक ही थी।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

औरंगजेब—सीमान्त प्रदेशों में रहने वाली जातियों के उपद्रव जारी रहे। औरंगजेब के शासनकाल में भी वे उत्पात मचाने लगे। शाहजहाँ के राज्यकाल में कन्धार और मध्य एशिया के अभियानों में मुगलों की असफलता से भी उनका उत्साह बढ़ गया था। अतः औरंगजेब के लिये उन्हें दबाना आवश्यक हो गया था। उसने भी इसके लिये भरपूर प्रयत्न किया।

यूसफ़जाइयों का विद्रोह

सबसे पहले यूसफजाइयों की ओर औरंगजेब का ध्यान आकृष्ट हुआ। भागू उनका प्रसिद्ध नेता था। वे भागू के नेतृत्व में सिन्ध नदी पार कर गये (१६६७) और हजारा जिले में उपद्रव करने लगे। इससे मुगल साम्राज्य पर भी संकट पैदा हो गया। उन्हें दबाने के लिये अमीन खाँ के नेतृत्व में एक विशाल सेना भेजी गई। मुलग सैनिक उनपर टूट पड़े। वे पराजित हुए और उनका जोश ठंडा पड़ गया।

अफरीदियों के विद्रोह

पाँच वर्षों के वाद (१६७२ ई०) अफरीदियों ने भी विद्रोह कर दिया। अकमल खाँ उनका प्रसिद्ध नेता था। वह बड़ा योग्य एवं महत्वाकांक्षी था। उसने सभी कवीलों को अपने अधीन संगठित किया। अमीन खाँ ने उनका वीरतापूर्वक सामना किया। किन्तु उसकी हार हो गयी और वह पेशावर में भागकर चला गया। मुगलों की बड़ी हानि हुई। लगभग दस हजार मुगल सैनिक तलवार के घाट उतार दिये गये और लगभग वीस हजार व्यक्ति—पुरुष एवं स्त्री—पकड़ लिये गये। करोड़ों की सम्पत्ति नष्ट हुई और कवीलों को प्राप्त हुई।

उसी समय खुशहाल खाँ के नेतृत्व में खटकों ने भी विद्रोह का झंडा खड़ा किया। यूसफजाइयों और अफरीदियों ने भी उनका साथ दिया। इस तरह कवीलों के विद्रोह ने मुगलों के विरुद्ध राष्ट्रीय आन्दोलन का रूप ग्रहण किया। औरंगजेब के सामने भयंकर समस्या उपस्थित हुई।

औरंगजेब ने कवायलियों को दबाने के लिये शक्ति और कूटनीति दोनों का सहारा लिया। उसने कई प्रमुख कवीलों को नौकरी, पेंशन और उपहारों के द्वारा अपनी ओर मिला लिया। उसने अमीन खाँ को काबुल का सूबेदार बना दिया। अन्य बागियों के साथ उसने युद्ध किया। सबसे पहले उसने महावत खाँ के अधीन लड़ने के लिये एक सेना भेजी। फिर कुछ समय के वाद शुजात खाँ और जसवन्त सिंह के अधीन एक सेना भेजी गई। लेकिन 'अधिक योगी, मठ का उजाड़' वाली

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कहावत चरितार्थ हुई। सेनापतियों में पूरी एकता नहीं थी और दूसरी ओर कबीले बहुत अधिक संगठित थे। अतः कबीलों ने मुगलों को फिर (१६७४ ई०) बुरी तरह पराजित कर दिया। लेकिन औरंगजेब इससे घबड़ाया नहीं। वह स्वयं युद्ध का संचालन करने के लिये सीमान्त क्षेत्र में पहुँच गया। उसे बहुत कुछ सफलता प्राप्त हुई। उसने कई कबीलों को युद्ध में परास्त किया। इस तरह सीमान्त प्रदेशों में शान्ति स्थापित कर वह १६७५ ई० में राजधानी में लौट आया।

परिणाम—औरंगजेब की सीमान्त नीति के भयंकर परिणाम हुए। धन और जन दोनों की बहुत बर्बादी हुई। राजनीतिक दृष्टि से भी बहुत हानि हुई। सीमान्त प्रदेशों में फँसे रहने के कारण दक्षिण में मराठों के शक्तिशाली नेता शिवाजी को दबाने में कठिनाई हुई। इसके अलावा औरंगजेब को राजपूतों से लड़ना पड़ा था। राजपूतों से लड़ने में अफगान सैनिकों से बहुत मदद मिल सकती थी किन्तु कबीलों से दुश्मनी होने के कारण उनकी मदद नहीं मिल सकी।

आलोचना

कुछ इतिहासकारों ने पश्चिमोत्तर सीमान्त नीति को लेकर मुगल सम्राटों की कटु आलोचना की है। पश्चिमोत्तर सीमान्त नीति के कारण मुगल सम्राटों को बहुत हानि उठानी पड़ी। पहिले तो सीमान्त प्रदेशों में कई बार युद्ध लड़ना पड़ा और युद्धों के कारण बहुत से मुगल सैनिक मौत के शिकार हो गये। कड़ी सर्दी के कारण भी बहुत से मुगल मर गये। दूसरे, बहुत से मुगल—पुरुष एवं स्त्री—गुलामों के रूप में बाजारों में बेच दिये गये। तीसरे, बहुत धन की भी बर्बादी हुई। युद्धों में बहुत खर्च करना पड़ा। इसके अलावा पेंशनों और उपहारों के रूप में भी बहुत बड़ी रकमखर्च करनी पड़ी। इस तरह शाही कोष बहुत कुछ रिक्त हो गया। चौथे, नैतिक दृष्टि से भी सीमान्त नीति घातक सिद्ध हुई। सीमान्त प्रदेशों में कई बार युद्धों में मुगलों को परास्त होना पड़ा था। इससे उनकी अजेयता की भावना नष्ट होने लगी और उनका उत्साह घटने लगा। पाँचवें, मुगलों की सैनिक कमजोरी दूसरों को दृष्टिगोचर होने लगी। इससे आगे चलकर भारत पर हमला करने के लिये ईरानियों और अफगानों को प्रोत्साहन मिलने लगा। इस तरह नादिरशाह और अहमद शाह अब्दाली के भारत पर आक्रमण हुए। छठे, सीमान्त प्रदेशों में बझे रहने के कारण कई अन्य योजनाएँ खटाई में फूलती रहीं। दूसरे दुश्मनों को भी दबाने में पूरी शक्ति का उपयोग नहीं हो सका। इस तरह राजपूतों, मराठों तथा अन्य विद्रोहों को नहीं कुचला जा सका।

उपर्युक्त कारणों से कहा जा सकता है कि मुगल सम्राटों की पश्चिमोत्तर सीमान्त नीति महान् भूल थी। किन्तु ऐसी धारणा ही गलत कही जायगी।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मुगल सम्राटों के लिये पश्चिमोत्तर सीमा सम्बन्धी नीति अपनाना आवश्यक था। वे उक्त सीमा की उपेक्षा नहीं कर सकते थे। हम देख चुके हैं कि कन्धार का कई दृष्टियों से महत्त्वपूर्ण स्थान था और उसपर अधिकार रखना लाभदायक था। दूसरे, सीमान्त प्रदेशों में रहने वाले कबीले बहुत ही उपद्रवी और स्वतन्त्रताप्रिय थे। वे साम्राज्य की सुरक्षा एवं शान्ति के लिये खतरनाक थे। अतः उन्हें दबाकर रखना जरूरी ही था। तीसरे, मुगल सम्राटों की सीमान्त नीति एकदम—शत-प्रतिशत—असफल ही नहीं रही। कुछ तो अवश्य ही फायदा हुआ। कबीले जाति के लोग मुगल साम्राज्य में अपना सिक्का नहीं जमा सके और अशान्ति नहीं फैला सके। यदि मुगल सम्राट सीमान्त प्रदेशों में हस्तक्षेप नहीं करते तो संभव था कि कबीले लोग मुगल साम्राज्य में बहुत उपद्रव मचाते और अशान्ति फैलाते। चौथे, यह भी स्मरणीय है कि पश्चिमोत्तर सीमा किसी भी भारतीय सरकार के लिये कठिन समस्या रही है। शक्तिशाली ब्रिटिश सरकार भी पश्चिमोत्तर सीमा सम्बन्धी समस्या को पूर्ण रूप से हल नहीं कर सकी थी और बहुत समय तक परेशान रही थी। उस समस्या को हल करने के प्रयास में उसे बहुत हानि सहनी और परेशानी उठानी पड़ी थी।

⊙

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अध्याय १०

मुगल सम्राटों की राजपूत नीति

(१५२६-१७०७ ई०)

भूमिका—भारतवर्ष के समाज और इतिहास में प्रारंभ से ही राजपूतों का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। प्राचीन काल में उन्हें क्षत्रिय कहते थे। उत्तर हिन्दू काल में (लगभग ८वीं सदी से) वे राजपूत कहलाने लगे। वे हिन्दूकाल में शूरता एवं वीरता के लिये प्रसिद्ध थे। उनमें साहस, स्वतन्त्रता एवं बलिदान की भावना कूट-कूट कर भरी हुई थी। वे अपने प्राण से भी बढ़ कर अपनी प्रतिष्ठा को महत्व देते थे। अपनी प्रतिष्ठा की रक्षा के लिये उन्हें—क्या पुरुष और क्या स्त्री—मर-मिट जाने में जरा-सा भी संकोच नहीं होता था। आवश्यकता पड़ने पर वे हँसते-हँसते मृत्यु का आलिंगन करते थे।

भारत के उत्तर-पश्चिमी भाग में उनकी प्रधानता थी। अतः उस भूभाग को राजपूताना कहते थे। उसी को आजकल राजस्थान कहते हैं। यहाँ राजपूतों के कई प्रमुख राज्य थे। उनमें मेवाड़ (उदयपुर), मारवाड़ (जोधपुर) और अम्बर (जयपुर) प्रसिद्ध थे। मेवाड़ की ही राजधानी चित्तौर में थी।

राजपूतों को स्वाधीनता बड़ी प्रिय थी। वे अपनी स्वाधीनता के साथ कोई समझौता करने को तैयार नहीं थे। सल्तनत काल में (१२०६-१५२६ ई०) कुछ सुलतानों ने राजपूतों पर अपना आधिपत्य जमाना चाहा किन्तु उनके सभी प्रयत्न विफल हुए। मुगल काल (१५२६-१७०७) में बाबर और औरंगजेब ने राजपूतों के साथ युद्ध किया। बाबर ने उन्हें पराजित कर दिया था किन्तु उन्होंने फिर अपनी शक्ति प्राप्त कर ली। अकबर ने उनकी शक्ति का मुगल साम्राज्य की सेवा में उपयोग किया।

बाबर—बाबर के भारतीय आक्रमण के समय राणा संग्राम सिंह राजपूतों का प्रमुख सरदार था। वह मेवाड़ का रहने वाला था और चित्तौर में उसकी राजधानी थी। वह अपनी शूर-वीरता के लिये प्रसिद्ध था। १५२७ ई० में

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

खनवा के मैदान में बाबर और राणा संग्राम सिंह में लड़ाई हुई। राजपूत वीरतापूर्वक लड़े किन्तु जीत बाबर की ही हुई।

खनवा की पराजय राजपूतों के लिये बहुत ही घातक सिद्ध हुई। उनकी अजेयता एवं वीरता की भावना चूर-चूर हो गयी। राजपूत संघ टूट गया। १५२६ ई० में पानीपत की विजय के द्वारा मुगल साम्राज्य की जो नींव दी गई वह दृढ़ हो गयी।[१]

राजपूतों के साथ फिर दूसरे ही साल (१५२८ ई०) मुगलों को लड़ना पड़ा। राजपूत अपनी हार स्वीकार करने के लिये तैयार नहीं थे। मेदिनीराव नामक एक राजपूत सरदार राणा सांगा का सहयोगी था। खनवा की पराजय के बाद वह चन्देरी के दुर्ग में छिप गया और वहाँ वह राजपूतों का संगठन करने लगा। अतः बाबर ने चन्देरी पर हमला कर दिया। राजपूत फिर बड़े साहस के साथ लड़े किन्तु उनकी संख्या कम थी। अतः अन्त में उनकी हार हो गयी और मुगल जीत गये। बहुत से राजपूत लड़ाई में मारे गये। मेदिनीराव भी युद्धक्षेत्र में ही मारा गया। अब राजपूत हिम्मतपस्त हो गये।

हुमायूँ—खनवा और चन्देरी की पराजयों से राजपूतों की शक्ति बहुत कम हो गयी किन्तु वे बिलकुल निराश नहीं हो गये। अभी उनको पराजय हुई थी, उनका सर्वनाश नहीं हुआ था। मौका मिलने पर वे अभी भी उठने की क्षमता रखते थे। हुमायूँ के राज्यकाल में उन्हें मौका भी मिल गया। उसकी कमजोरियों एवं कठिनाइयों से लाभ उठा कर राजपूतों ने अपनी शक्ति बढ़ानी शुरू कर दी।

शेरशाह के गद्दी पर बैठने के समय (१५४० ई०) तक राजपूतों की शक्ति बहुत बढ़ गयी। जब शेरशाह ने मारवाड़ के शासक मालदेव पर हमला किया तो वह मालदेव को खुले मैदान में नहीं हरा सका। शेरशाह छल-कपट का सहारा लेकर ही मालदेव को हराने में समर्थ हो सका। फिर भी राजपूतों ने युद्ध में अफगानों के छक्के छुड़ा दिये। उसी समय शेरशाह ने कहा था कि "मैं मुट्ठी भर बाजरे के लिये सारे भारत का राज्य ही खोने वाला था।" मेवाड़ में राणा सांगा का पुत्र उदय सिंह राजा था किन्तु वह नाबालिग था। इसीसे फायदा उठाकर शेरशाह मेवाड़ पर भी अधिकार कर सका।

अकबर—अकबर के पूर्व के मुस्लिम शासक खासकर सल्तनत काल के मुस्लिम शासक बहुत ही संकीर्ण एवं धर्मांध थे। वे हिन्दुओं और गैर हिन्दुओं में भेद-भाव

---

१. इस युद्ध के सम्बन्ध में विस्तृत विवरण अध्याय २ में देखिये।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

की नीति रखते थे और इस आधार पर गैर हिन्दुओं के साथ अनुचित व्यवहार करते थे। किन्तु अकबर का विचार उन शासकों से भिन्न था। वह दूरदर्शी और कुशल शासक था। उसका दृष्टिकोण उदार एवं व्यापक था। वह अच्छी तरह समझता था कि भारत में बहुसंख्यक हिन्दुओं को अपने पक्ष में मिलाये बिना सफलतापूर्वक राज्य नहीं किया जा सकता। वह हिन्दुओं में भी राजपूतों की वीरता से बहुत प्रभावित था। उसे विश्वास था कि राजपूतों क समर्थन बहुत लाभदायक सिद्ध हो सकता है। अतः उसने हिन्दुओं के प्रति मित्रता एवं समझौता की नीति अपनायी।[1] इस तरह उसकी नीति के द्वारा एक नये युग का प्रादुर्भाव हुआ।

१. **विवाह-सम्बन्ध**—विवाह के द्वारा दो मनुष्यों या दो परिवारों में बहुत घनिष्ठ एवं अटूट सम्बन्ध कायम होता है। अतः अकबर ने राजपूतों के साथ वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित किया। एक समय (१५६२) जब वह अजमेर जा रहा था तो रास्ते में ही अम्बर (जयपुर) के कछवाहा राजा बिहारीमल ने उससे भेंट की और अपनी सेवाओं को स्वीकार करने के लिये अनुरोध किया। अकबर ने उसके अनुरोध को सहर्ष मान लिया। अकबर ने उसकी कन्या (मरियम जमानी) से विवाह कर लिया। उसी राजपूत कन्या से सलीम (जहाँगीर) पैदा हुआ था। बाद में बिहारीमल के पुत्र भगवानदास की पुत्री से सलीम का भी विवाह कर दिया गया। अकबर ने बीकानेर, जैसलमेर आदि राज्यों की पुत्रियों से भी विवाह कर लिया। इस प्रकार अकबर ने कई राजपूत राज्यों से वैवाहिक सम्बन्ध कायम किया।

नियुक्ति—अकबर राजपूत सरदारों को राज्य एवं सेना में अच्छे-अच्छे पदों पर नियुक्त भी करता था। मुगल सेना में जयपुरनरेश बिहारीमल को पाँच हजारी का मनसब प्रदान किया गया। उसके पुत्र राजा भगवानदास और पोते राजा मान सिंह को भी सेना में ऊँचे पद दिये गये। बीकानेर नरेश (कल्याणमल) के पुत्र राजसिंह को भी सेना में अच्छे पद पर रखा गया। बीरबल, टोडरमल आदि भी राजपूत सरदार ही थे। बीरबल प्रसिद्ध दरबारी और सेनापति था। टोडरमल भूमि-विभाग का प्रमुख अधिकारी था जिसने भूमि की व्यवस्था करायी थी।

सहिष्णुता—अकबर धर्म के आधार पर कोई भेद-भाव नहीं रखता था। वह राष्ट्रीय एवं धर्मनिरपेक्ष राज्य की कल्पना करता था। अतः उसने हिन्दुओं को पूरी धार्मिक स्वतन्त्रता दे दी। उसकी हिन्दू पत्नियाँ हिन्दू ढंग से पूजा-पाठ

1. विस्तृत विवरण के लिये देखिये अ० ५

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

करती थीं। वे राजमहल में हिन्दू पर्वों को मनाती थीं और सम्राट भी उनमें शामिल होता था। अकबर ने मन्दिरों और मूर्त्तियों को तोड़ना रोक दिया। नये मन्दिरों और नयी मूर्त्तियों के निर्माण को प्रोत्साहन मिला। गोहत्या पर भी प्रतिबन्ध लगा दिया गया। बलात् धर्म परिवर्तन भी रोक दिया गया। इस तरह अकबर ने धर्म और राजनीति में कोई सम्पर्क नहीं रखा। उसने हिन्दुओं और मुसलमानों में एकता बनाये रखने के लिये दीनइलाही नामक एक नया धर्म भी स्थापित किया था।

उदारता—अकबर ने हिन्दुओं के साथ उदारतापूर्वक व्यवहार किया। वह अपने दरबार में हिन्दुओं का भी खूब स्वागत करता था। उसने हिन्दुओं पर लगने वाले जजिया, तीर्थ कर आदि को हटा दिया।

इस तरह अकबर ने हिन्दुओं को काफिर नहीं समझा और उन्हें मुसलमानों के साथ एक पंक्ति में रखा।

युद्ध की नीति—जिन राजपूत राजाओं ने अकबर की अधीनता नहीं मान ली उनके साथ उसने युद्ध तक भी किया। मेवाड़ मुगल अधीनता मानने के लिये तैयार नहीं था। अतः अकबर ने मेवाड़ पर हमला (१५६७) कर दिया। उस समय संग्राम सिंह का पुत्र उदय सिंह मेवाड़ का शासक था। वह योग्य पिता का अयोग्य पुत्र था। मुगलों के आगमन की खबर मिलते ही वह अपनी राजधानी छोड़कर भाग चला। लेकिन जयमल और पत्ता ने दुर्ग की रक्षा करने का भरपूर प्रयत्न किया। वे दोनों मारे भी गये। दुर्ग का पतन हो गया। उस अवसर पर अन्य हजारों राजपूत सरदार तलवार के घाट उतार दिये गये। चित्तौर पर मुगलों का अधिकार हो गया।

मेवाड़ के पतन (१५६८) के बाद रणथम्भोर (१५६६) और कालिंजर (१५६६) ने भी मुगलों की अधीनता स्वीकार कर ली।

राणा प्रताप—१५७२ ई० में राणा उदय सिंह की मृत्यु हो गयी। उसका पुत्र राणा प्रताप सिंह बड़ा ही स्वाभिमानी था। वह मुगलों के सामने सिर झुकाना अपमानजनक समझता था। अतः अकबर ने मेवाड़ पर फिर हमला कर दिया। हल्दीघाटी (१५७६) में लड़ाई हुई। प्रताप सिंह हार कर पर्वतों की ओर भाग चला। किन्तु वह निराश नहीं हुआ। उसने कई स्थानों पर अधिकार कर लिया किन्तु वह चित्तौर नहीं ले सका। इसी बीच उसकी मृत्यु (१५६७ ई०) ही हो गयी।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

राणाप्रताप का पुत्र एवं उत्तराधिकारी अमर सिंह था। फिर उस पर भी हमला किया गया। मानसिंह ने उसे युद्ध में (१५६६ ई०) पराजित भी कर दिया।

परिणाम—अकबर ने अधिकांश राजपूत राज्यों के साथ मित्रता ही स्थापित की। पराजित राजपूत राजाओं के साथ भी अधीनता कबूल कर लेने पर वह सद्व्यवहार ही करता था। अतः राजपूत सरदार अकबर के सहयोगी एवं समर्थक बन गये। राजपूत बड़े ही वीर सैनिक होते थे। अतः उनके सहयोग से मुगल साम्राज्य के विस्तार में बहुमूल्य सहायता मिली।

सांस्कृतिक दृष्टि से भी राजपूतों का सहयोग महत्वपूर्ण साबित हुआ। हिन्दू और मुसलमानों की संस्कृतियों में समन्वय को बड़ा प्रोत्साहन मिला। अतः मुगल काल में संस्कृति के हर क्षेत्र में जो अद्भुत उन्नति हुई उसका श्रेय राजपूतों को भी प्राप्त है।

इस तरह अकबर की राजपूत नीति बहुत ही सफल एवं लाभदायक सिद्ध हुई। डा० बेनी प्रसाद के मतानुसार, इससे भारत को कुछ उच्च कोटि के सम्राट् मिले और उन्हें मध्यकालीन भारत के कुछ महान् सेनापतियों और नीतिज्ञों की सेवाओं से लाभ उठाने का अवसर प्राप्त हुआ। "वास्तव में अकबर का साम्राज्य मुगल शक्ति एवं कूटनीति और राजपूत वीरता एवं सेवा के सामंजस्य का परिणाम था।"[1]

जहाँगीर

मेवाड़ जीतने के तीन प्रयत्न—अकबर के शासन काल के अन्त में (१५६६ ई०) मेवाड़ का राणा अमरसिंह पराजित हो चुका था फिर भी वह मुगलों की अधीनता मानने के लिये तैयार नहीं था। उसने विरोध की स्थिति को कायम रखा। अतः जहाँगीर ने मेवाड़ पर कब्जा करने के लिये (१६०६) अपने पुत्र शाहजादा परवेज के अधीन एक सेना भेजी। अमरसिंह भी सामना करने के लिये तैयार था। देवीर नामक स्थान पर दोनों में मुठभेड़ हुई। किन्तु किसी के पक्ष में स्पष्ट निर्णय नहीं हुआ। तब तक खुसरो ने विद्रोह कर दिया और मुगल सेना वापस चली गई।

१६०८ ई० में महावत खाँ के नेतृत्व में दूसरा अभियान शुरू हुआ। लेकिन इस बार भी मुगलों को निश्चित सफलता नहीं मिली। मुगल सेनापतियों में एकता का अभाव था। अतः महावत खाँ लौट जाने के लिये बाध्य हुआ।

1. "The Empire of Akbar was, in fact, the outcome of the coordination of Mughal prowess and diplomacy and Rajput valour and service."
Dr. K. K. Datta—An Advanced History of India—P. 449.

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

१६१४ ई० में मेवाड़ को अधीन करने के लिये शाहजादा खुर्रम के नेतृत्व में तीसरा प्रयास शुरू हुआ। खुर्रम योग्य सेनानायक था। उसने राणा को चारों ओर से घेर लिया। रसद और अन्य सामग्रियों की कमी हो गई। अब राणा सन्धि (१६१५) करने के लिये बाध्य हुआ। जहाँगीर ने भी सन्धि को स्वीकार कर लिया।

सन्धि की शर्तें उदार थीं। अमरसिंह ने मुगलों की प्रभुता को मान लिया। राणा ने अपने पुत्र (कर्ण) को मुगल दरबार में भेजा, चित्तौर की किलेबन्दी पर प्रतिबन्ध स्वीकार कर लिया और १००० घुड़सवार देना मंजूर किया। लेकिन राणा को मेवाड़ का शासक मान लिया गया। उसके पुत्र को पाँच हजार का मनसबदार बनाया गया। उसे और राणा को नकद और सामानों के रूप में बहुत भेंट दी गई। राणा को मुगलों से वैवाहिक सम्बन्ध कायम करने के लिये नहीं कहा गया।

इस प्रकार राणा अमरसिंह के साथ सम्मानपूर्वक व्यवहार किया गया। यह जहाँगीर के बड़प्पन का प्रतीक है। उसने पिता के अधूरे कार्य को पूरा किया और उसकी उदार नीति का भी अनुकरण किया।

शाहजहाँ—शाहजहाँ कट्टर सुन्नी था। वह मुसलमानों और गैर मुसलमानों में भेदभाव करता था। लेकिन उसमें अत्यन्त धर्मान्धता नहीं थी। अतः अधिकांश प्रमुख पदों पर मुसलमान ही नियुक्त होते थे किन्तु हिन्दुओं की भी सर्वथा उपेक्षा नहीं की जाती थी। अभी भी राजपूत सरदारों का दरबार में आदर-सत्कार होता था और वे कई पदों को भी सुशोभित करते थे। जयसिंह और जसवंत सिंह अच्छे पदों पर नियुक्त थे। जसवन्त सिंह को सात हजार का मनसब प्रदान किया गया था।

शाहजहाँ में भी साम्राज्यवादी भावना बलवती थी। वह किसी भी राजपूत सरदार की स्वतन्त्रता को पसन्द नहीं करता था। मेवाड़ के शासक (जगतसिंह) ने पहले की सन्धि (१६१५ ई०) की शर्त की उपेक्षा कर चित्तौर के दुर्ग की किलेबन्दी प्रारंभ की। शाहजहाँ ने इसका विरोध किया और सादुल्ला खाँ के नेतृत्व में एक सेना भेज दी। राणा ने किलेबन्दी को रोक दिया और अपनी भूल के लिये क्षमा माँगी।

इस तरह शाहजहाँ के शासन काल में भी राजपूत मुगलों के प्रभुत्व को मानते रहे। सम्राट् की नीति में भी कोई विशेष परिवर्तन नहीं हुआ। इसका प्रमुख कारण था शाहजहाँ के बड़े पुत्र दारा का उदार स्वभाव और उसका गहरा प्रभाव। इससे खुश होकर राजपूतों ने भी उत्तराधिकार-युद्ध में दारा का ही पक्ष लिया

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

किन्तु सभी राजपूत सरदारों ने पूरी तत्परता से दारा को मदद नहीं दी। अतः दारा हार गया।

औरंगजेब

नीति—औरंगजेब कट्टर सुन्नी मुसलमान था। उसमें धर्मान्धता कूट-कूट कर भरी हुई थी। अतः वह हिन्दुओं या राजपूतों को देख नहीं सकता था। इसके अलावा राजपूतों ने उत्तराधिकार युद्ध में उसके विरोधी दारा का पक्ष लिया था। किन्तु दारा लड़ाई में हार चुका था। अब औरंगजेब हिन्दुओं खास कर राजपूतों को अपना शत्रु समझता था। लेकिन अपने शासनकाल के प्रारंभिक दिनों में औरंगजेब खुले रूप से राजपूतों के विरुद्ध कोई कार्य नहीं करता था। अम्बर नरेश जयसिंह और मारवाड़ नरेश जसवन्त सिंह अपने पदों पर कायम रहे। परन्तु औरंगजेब का स्वभाव ही सन्देहशील था। अतः वह किसी को भी शंका की ही दृष्टि से देखता था। राजपूतों में भी उसका विश्वास नहीं था। अतः अब वह राजपूतों के विरुद्ध कार्य करने लगा। उसने राजा जयसिंह को दक्षिण में विष दिला कर मरवा दिया। उसे सन्देह था कि वह अपने पुत्र (रामसिंह) के साथ मराठा नेता शिवाजी की ओर मिला हुआ है। जसवन्त सिंह को सेनापति बना कर पेशावर भेज दिया गया। कुछ समय बाद जसवन्त सिंह की भी मृत्यु हो गयी। कुछ लेखकों का मत है कि उसकी मृत्यु के लिये औरंगजेब भी कुछ हद तक उत्तरदायी था।

जयसिंह और जसवन्त सिंह के मर जाने के बाद औरंगजेब की राजपूत नीति में उल्लेखनीय परिवर्तन हो गया। अब वह निश्चित रूप से राजपूतों का विरोधी और शत्रु बन गया। अब उसने राजपूतों पर अत्याचार करना शुरू किया। समस्त हिन्दुओं पर फिर जजिया कर लगाया गया, चुंगी बढ़ायी गयी, उन्हें पदच्युत किया जाने लगा, बलपूर्वक उनके धर्म को बदला जाने लगा और उनके मन्दिरों तथा मूर्तियों को तोड़ा जाने लगा।

मारवाड़ पर हमला—जसवन्त सिंह के मरने के बाद औरंगजेब मरवाड़ को मुगल साम्राज्य में मिला लेने के लिये निर्णय किया। उसने झट मारवाड़ पर (१६७९) आक्रमण कर दिया और उस पर आधिपत्य जमा लिया। एक हिन्दू को वहाँ का शासक स्वीकार कर लिया गया जिसे बहुत बड़ी रकम कर के रूप में देने के लिये बाध्य किया गया।

उधर जसवन्त सिंह का परिवार पेशावर से दिल्ली में आ गया था। उनकी दो रानियों को दो बच्चे पैदा हुए थे। एक की तो मृत्यु हो गयी किन्तु दूसरा

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अजीत सिंह के नाम से प्रसिद्ध हुआ। मारवाड़ के राठौर अजीत सिंह को ही गद्दी पर बैठाना चाहते थे किन्तु औरंगजेब इसके विरुद्ध था। उसने रानियों और अजीत सिंह को कैद कर लेने का आदेश दिया। यह जान कर राठौरों का खून खौलने लगा।

उस समय राठौरों के बीच एक बहुत ही वीर एवं चतुर नेता था। उसका नाम दुर्गादास था। वह निर्भीक और नीतिज्ञ था। राणा प्रताप की तरह वह स्वाभिमानी था। उसने राठौरों को संगठित किया। उसकी चतुराई एवं कूटनीति से रानियाँ अजीत सिंह को लेकर मारवाड़ चली गईं।

अब औरंगजेब के क्रोध का कोई ठिकाना न रहा। उसने मारवाड़ पर आक्रमण करने के लिये अपने पुत्रों के अधीन एक विशाल सेना भेजी। वह स्वयं भी अजमेर पहुँच गया। मुगल सैनिकों ने खूब अत्याचार किया और मन्दिरों तथा मूर्तियों को तोड़ा। मुगलों की जीत हो गयी। मारवाड़ पर उनका अधिकार हो गया।

मेवाड़ पर हमला—मारवाड़ पर मुगलों का अधिकार हो जाने से मेवाड़ भी सुरक्षित नहीं रह गया। इसके अतिरिक्त अजीत सिंह की माता मेवाड़ के सिसोदिया वंश की ही औरत थी। अतः मेवाड़ के शासक राजसिंह ने दुर्गादास के साथ मिलकर मुगलों का विरोध करने के लिये निश्चय किया। दोनों में समझौता हो गया। अब औरंगजेब ने मेवाड़ पर आक्रमण (१६८०) कर दिया। राजा पहाड़ में जा छिपा। चित्तौर मुगलों के अधिकार में आ गया। मुगलों ने बहुत जोर-जुल्म किया। शाहजादा अकबर को मेवाड़ का सूबेदार नियुक्त किया गया। औरंगजेब अजमेर चला गया।

लेकिन मुगल शान्तिपूर्वक नहीं रह सके। राजपूत छापामार युद्ध के द्वारा मुगलों को परेशान करते रहे। अकबर उन्हें काबू में नहीं रख सका। अतः औरंगजेब ने उसे मारवाड़ भेज दिया।

शाहजादा अकबर का विद्रोह—शाहजादा अकबर अपने पिता औरंगजेब की राजपूत नीति को अनुपयुक्त एवं हानिकारक समझता था। उसके दिल में गद्दी के लिये भी लोभ हो चला था। अतः उसने राजपूतों को अपने पक्ष में कर लिया और औरंगजेब के विरुद्ध विद्रोह का झंडा खड़ा (१६८१) किया। उसने अपने को सम्राट् भी घोषित कर दिया। मेवाड़ और मारवाड़ के राजपूतों की सेना औरंगजेब के विरुद्ध प्रस्थान कर गयी। औरंगजेब को जब यह बात मालूम हुई तो वह बड़ा ही दुखित हुआ।

विद्रोह की असफलता—औरंगजेब विद्रोह को दबाने के लिये सोचने लगा। उसे एक उपाय सूझा। उसने अकबर के विरुद्ध राजपूतों में फूट एवं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अविश्वास पैदा किया। उसने अकबर के नाम से एक जाली पत्र लिखा। उसमें उसने अकबर की राजपूत विरोधी योजनाओं की बड़ी प्रशंसा की। वह पत्र राजपूतों के पास भेजा गया। अब राजपूत समझने लगे कि अकबर उनके साथ विश्वासघात कर रहा था। अब राजपूतों ने उसका साथ छोड़ना शुरू किया। किन्तु औरंगजेब की कपटपूर्ण नीति का पता लग गया। दुर्गादास ने अकबर को शम्भाजी के दरबार में पहुँचवा दिया। उसके सम्राट् बनने की आशा पर पानी फिर गया। अन्त में वह फारस गया और वहीं पर उसका देहान्त (१७०६) हो गया।

मेवाड़ से सन्धि—१६८० ई० में मेवाड़ का राणा राजसिंह का देहान्त हो गया। उसका उत्तराधिकारी जयसिंह मुगलों से युद्ध करने की क्षमता नहीं रखता था। उधर औरंगजेब भी दक्षिण में जाने के लिये उत्सुक था क्योंकि विद्रोही अकबर दक्षिण की ओर चला गया था। १६८० ई० में मुगलों के प्रबल शत्रु शिवाजी की भी मृत्यु हो गयी थी। अतः मराठों को दबाने में अब सुविधा हो सकती थी। इन सब कारणों से औरंगजेब ने मेवाड़ के साथ सन्धि (१६८१ ई०) कर ली। औरंगजेब मेवाड़ से मुगल सेना हटा लेने के लिये सहमत हुआ। जयसिंह को मेवाड़ का राणा मान लिया गया और उसे सेना में पंचहजारी के पद पर नियुक्त किया गया। राणा ने युद्ध की क्षतिपूर्ति एवं जजिया के बदले मुगलों को कुछ प्रदेश सौंप दिया। राणा ने चित्तौर की किलेबन्दी नहीं कराने के लिये और राठौरों को अपने राज्य में शरण नहीं देने के लिये प्रतिज्ञा की।

मारवाड़ से युद्ध जारी—लेकिन मारवाड़ ने मुगलों से युद्ध जारी रखा। दुर्गादास के नेतृत्व में राठौर मुगलों से ३० वर्षों (१६७६-१७०६ ई०) तक लड़ते रहे। राठौर मुगलों से छापामार युद्ध करते थे। औरंगजेब भी दक्षिण में फँसा हुआ था और वह अजीत सिंह को मारवाड़ का शासक भी मानने के लिये तैयार नहीं था। इस तरह राठौरों और मुगलों में लड़ाई चलती रही। १७०७ ई० में औरंगजेब की मृत्यु हो गयी। अब राठौरों ने अजीत सिंह को मारवाड़ का राजा घोषित किया। औरंगजेब के उत्तराधिकारी बहादुर शाह ने भी अजीत सिंह को मारवाड़ का शासक मान लिया। उसने राजा पर कोई अन्य शर्त नहीं लगायी। इस तरह मारवाड़ के साथ भी लड़ाई समाप्त हो गयी।

परिणाम—औरंगजेब की राजपूत नीति मुगल साम्राज्य के लिये बहुत घातक सिद्ध हुई। इसके परिणाम भयंकर हुए और मुगल साम्राज्य निश्चित रूप से पतन की ओर अग्रसर हो गया।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

राजपूतों से दीर्घकाल तक युद्ध लड़ना पड़ा और उन युद्धों में बहुत खर्च हुआ। इससे खजाने पर बहुत बोझ पड़ा। वह खर्च भी व्यर्थ ही सिद्ध हुआ क्योंकि उससे कोई लाभ नहीं हुआ।

युद्धों के चलते बहुत से मुगल सैनिक मारे गये। इसके अतिरिक्त दो प्रमुख राजपूत वंशों के दुश्मन हो जाने से सेना में कुशल वीर राजपूत सैनिकों का भी अभाव हो गया। इस तरह मुगलों की सैनिक शक्ति कमजोर हो गयी।

जो राजपूत पहले मुगल साम्राज्य के मित्र एवं समर्थक थे अब वे शत्रु एवं विरोधी बन गये। अतः मुगल साम्राज्य उनकी बहुमूल्य सेवाओं से वंचित हो गया। अफगानों, सिक्खों और मराठों के विरुद्ध राजपूतों की सहायता नहीं मिल सकी। राजपूतों की सहायता लाभदायक सिद्ध हो सकती थी।

जब औरंगजेब दक्षिण में व्यस्त था तो राजपूतों से शत्रुता के कारण उत्तर में अव्यवस्था फैली रही। इससे शासन में कमजोरी उत्पन्न हुई और विरोधी तत्वों को प्रोत्साहन मिला।

औरंगजेब राजपूतों को पूर्ण रूप से दबा भी नहीं सका। बार-बार की असफलता के कारण मुगलों की नैतिकता एवं प्रतिष्ठा को भी गहरा धक्का लगा।

⊙

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अध्याय ११

मुगल सम्राटों की दक्खिन-नीति

(१५२६-१७०७ ई०)

भूमिका—भारत उत्तर से दक्खिन तक फैला हुआ एक विशाल देश है। इस देश में अनेक विभिन्नताएँ हैं किन्तु उनके अन्दर मौलिक एकता भी है। अतः जब कोई उत्तरी भारत में अपना आधिपत्य जमा लेता है तो फिर वह दक्खिन भारत में भी आधिपत्य जमाने की कोशिश करता है। यह ऐतिहासिक सत्य है। मौर्य, गुप्त, खिलजी, तुगलक आदि सभी वंशों के समय में सम्पूर्ण देश पर प्रभुता स्थापित करने के लिये प्रयास हुआ था। इतिहासकार लेनपूल के मतानुसार दक्खिन भारत (डेक्कान) को जीतने के लिये दिल्ली के प्रत्येक महान सम्राट की आकांक्षा रहती थी और यह प्रयत्न विपत्तिजनक होता था। मुगल सम्राट भी अपवादस्वरूप नहीं थे। उन्होंने भी उत्तरी भारत में आधिपत्य जमाने के बाद दक्खिन भारत को भी जीतने का प्रयास किया। डा० बेनी प्रसाद के शब्दों में, "मुगलों की दक्खिन-नीति भारतीय इतिहास की दो हजार अथवा अधिक वर्ष की देन थी जो भौगोलिक परिस्थितियों का सीधा परिणाम थी।"[1]

दक्खिन के राज्य—बाबर के भारतीय-आक्रमण के समय दक्खिन में सात राज्य थे—विजयनगर, खानदेश, अहमदनगर (निजामशाही), बीजापुर (आदिलशाही), गोलकुन्डा (कुतुबशाही), बरार (इमामशाही) और बीदर (बरीदशाही)। विजयनगर को छोड़कर अन्य सभी राज्य मुस्लिम राज्य थे। इनमें भी खानदेश को छोड़कर अन्य राज्यों में परस्पर दुश्मनी थी। इन राज्यों का विजयनगर के हिन्दु साम्राज्य से भी अच्छा सम्बन्ध नहीं था। तालीकोटा के युद्ध (१५६५ ई०) में विजयनगर साम्राज्य भी छिन्न-भिन्न हो गया। इस तरह किसी भी महत्वाकांक्षी सम्राट के लिये दक्खिन भारत की राजनैतिक स्थिति बड़ी ही अनुकूल थी।

1. The Deccan policy of the Mughals was a legacy of two thousand years or more of Indian history, the direct outome of geographical facts.

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बाबर एवं हुमायूँ—बाबर उत्तरी भारत को ही जीतने में व्यस्त रहा। उसे राज्य-विस्तार करने का मौका ही नहीं मिला क्योंकि उसकी शीघ्र ही मृत्यु हो गई। हुमायूँ भी उत्तरी भारत में ही अपनी स्थिति को सुदृढ़ करने में फँसा रहा। कुछ दिनों तक उत्तरी भारत भी शेरशाह की शक्ति के कारण उसके हाथ से निकल गया था। फिर गद्दी प्राप्त होने (१५५५ ई०) के बाद वह बहुत दिनों तक जीवित नहीं रह सका। अतः उसे भी दक्खिन की ओर ध्यान देने के लिये अवसर नहीं प्राप्त हुआ।

अकबर—अकबर के शासनकाल से ही मुगलों की दक्खिन-नीति का आरंभ हुआ। अकबर की दक्खिन-नीति तीन उद्देश्यों से प्रभावित थी। अकबर महत्वाकांक्षी एवं साम्राज्यवादी था। वह पहले के शक्तिशाली सम्राटों की तरह सम्पूर्ण भारत पर अपनी प्रभुता स्थापित करना चाहता था। दूसरे, वह दक्खिन भारत को जीतकर अपने साम्राज्य को समुद्र तट तक ले जाना चाहता था। यह व्यापारिक दृष्टि से बहुत ही लाभदायक होता। तीसरे, दक्खिन भारत में पश्चिम की ओर पुर्तगीज अपनी शक्ति बढ़ा रहे थे और व्यापारिक कोठियाँ कायम कर रहे थे। वे देश का शोषण करते थे। इस तरह वे राजनैतिक एवं आर्थिक दोनों दृष्टियों से देश के लिये खतरनाक थे। अकबर इन पुर्तगीजों की स्थिति को कमजोर कर देने के लिये उत्सुक था।

इस प्रकार अकबर के उद्देश्य राजनैतिक एवं आर्थिक थे। वह साम्राज्य का विस्तार कर देश को समृद्धिशाली बनाना चाहता था। वह किसी राज्य में अपना धार्मिक प्रचार करना नहीं चाहता था। लेकिन उसके उत्तराधिकारी शाहजहाँ और औरंगजेब की दक्खिन-नीति धार्मिक विचारों से ही अधिक प्रभावित थी।

अकबर के शासनकाल में १५६० ई० तक दक्खिन में चार ही प्रमुख राज्य रह गये थे—अहमदनगर, बीजापुर, गोलकुन्डा और खानदेश। बरार अहमदनगर में और बीदर बीजापुर में सम्मिलित कर लिया गया था।

खानदेश पर आधिपत्य—अकबर ने उपर्युक्त चारों राज्यों में अपनी प्रभुता स्वीकार कराने के लिये राजदूत भेजा। खानदेश के शासक अली खाँ ने अकबर की प्रभुता मान ली किन्तु अन्य शासकों ने कोई स्पष्ट उत्तर नहीं दिया। अतः अकबर ने उनसे युद्ध करने का निश्चय किया।

अहमदनगर पर चढ़ाई—सबसे पहले अहमदनगर पर (१५९३ ई०) चढ़ाई हुई। अब्दुररहीम और मुराद के नेतृत्व में एक विशाल सेना भेजी गई। अहमदनगर की शासिका चाँदबीबी ने बड़ी वीरता के साथ मुगलों का मुकाबला किया किन्तु

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अन्त में उसे झुक जाना पड़ा। दोनों में सन्धि (१५९६ ई०) हुई। बरार अकबर को सौंप दिया गया और उसकी प्रभुता मान ली गई।

लेकिन अहमदनगर के कुछ सरदारों को यह सन्धि पसन्द नहीं थी। वे बरार छोड़ने के लिये तैयार नहीं थे। अतः कुछ समय के बाद फिर लड़ाई शुरू हो गई। अब्दुररहीम और खानदेश के सुलतान मुगल सेना का नेतृत्व कर रहे थे। सुपा के पास एक भारी युद्ध हुआ। मुगलों को बहुत हानि हुई किन्तु चाँदबीबी भी किसी तरह मार दी गई। अन्त में मुगल ही विजयी हुए और अहमदनगर पर उनका अधिकार हो गया।

खानदेश पर चढ़ाई—अली खाँ के उत्तराधिकारी पुत्र (बहादुर शाह) ने अकबर की प्रभुता को अस्वीकार कर दिया। उसे असीरगढ़ के दुर्ग की अजेयता में दृढ़ विश्वास था। अतः अकबर ने खानदेश पर चढ़ाई कर दी। मुगलों ने असीरगढ़ के दुर्ग को घेर लिया। ६ महीने तक घेरा जारी रही। अन्त में अकबर ने धोखे से बहादुर शाह को कैद कर लिया और धन के बल पर दुर्ग के सैनिकों को प्रभावित किया। इस तरह खानदेश पर मुगलों का फिर (१६०१) अधिकार हो गया। डा० स्मिथ के मतानुसार नैतिकता की दृष्टि से अकबर का व्यवहार अनुचित था।

दक्खिन के जीते हुए राज्यों को तीन सूबों में बाँट दिया गया—अहमदनगर, बरार और खानदेश। इन सूबों को शाहजादा दानियाल के अधीन सौंप दिया गया। अब दक्खिन में मुगल साम्राज्य की सीमा कृष्णा नदी के उत्तरी घाट तक पहुँच गयी।

जहाँगीर

मलिक अम्बर—जहाँगीर ने अकबर की दक्खिन-नीति का अनुसरण किया। उसके समय में अहमदनगर में मलिक अम्बर का उदय हुआ। वह एक हब्शी गुलाम था जो अबीसीनिया में पैदा हुआ था। वह बड़ा ही योग्य व्यक्ति था। वह सुलतान की नौकरी में था किन्तु अपनी प्रतिभा के कारण बड़ा ही शक्तिशाली हो गया था। शासन चलाने और सैनिक संगठन करने का सारा भार उसी के ऊपर आ गया था। उसने भूमि की व्यवस्था की और सेना का संगठन किया। वह छापेमार युद्धकला में बड़ा निपुण था। वह अहमदनगर राज्य की उन्नति के लिये सदा तत्पर रहता था।

अहमदनगर पर हमला—अकबर के समय में अहमदनगर के जिन भागों पर मुगलों का अधिकार हो गया था मलिक अम्बर ने उन भागों को फिर से

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जीत लिया। अम्बर ने मुगलों के विरुद्ध बीजापुर तथा गोलकुन्डा के सुलतानों से भी सन्धि की। अब मुगलों ने अहमदनगर पर अधिकार करने के लिये एक सेना भेजी। ५ वर्षों (१६०८-१६१२ ई०) के अन्दर अब्दुररहीम और खानजहाँ लोदी के नेतृत्व में अहमदनगर पर तीन बार हमले हुए किन्तु वे विफल हुए। फिर ५ वर्ष के बाद (१६१७ ई०) खुर्रम के नेतृत्व में अहमदनगर पर चौथी बार हमला हुआ।

खुर्रम के साथ कुछ अन्य योग्य सेनापति भी थे। खुर्रम तो स्वयं योग्य था ही। अम्बर उसकी शक्ति को समझता था और उसने मुगलों से सन्धि कर लेने का प्रस्ताव किया। खुर्रम भी सन्धि के लिये तैयार हो गया। अम्बर ने मुगलों के जीते हुए प्रदेशों को लौटा दिया। उसने जहाँगीर की प्रभुता मान ली और १५ लाख रुपये की रकम भेंट के रूप में प्रदान की। अब्दुररहीम को दक्खिन का सूबेदार नियुक्त कर दिया गया।

इस सफलता से जहाँगीर बड़ा खुश हुआ। खुर्रम का बड़ा स्वागत हुआ। उसे शाहजहाँ (संसार का सम्राट) की उपाधि दी गई। बहुत से सामान पुरस्कार के रूप में मिले। सेना में उसे मनसब का सर्वोच्च पद दिया गया।

लेकिन मुगलों की यह सफलता अस्थायी साबित हुई। १६२० ई० में मलिक अम्बर ने फिर विद्रोह कर दिया। कई प्रदेशों पर उसने अधिकार कर लिया। जब खुर्रम ने जहाँगीर के विरुद्ध विद्रोह किया तो अम्बर ने खुरम को प्रोत्साहन दिया। किन्तु इस गठबंधन से जहाँगीर को कोई विशेष क्षति नहीं हुई। फिर भी जहाँगीर की दक्खिन-नीति असफल हो गई। धन और जन की हानि हुई किन्तु कोई प्रादेशिक लाभ नहीं हुआ। मुगलों की सैनिक प्रतिष्ठा को धक्का लगा। अप्रत्यक्ष रूप से मुगलों के दुश्मन मराठों के बढ़ने में सहायता मिली।

इस तरह मलिक अम्बर ने मुगलों को परेशान कर दिया। १६२६ ई० में उसकी मृत्यु हो गई। इससे दक्खिन को भारी क्षति हुई।

शाहजहाँ

उद्देश्य—शाहजहाँ ने भी दक्खिन में हस्तक्षेप किया। उसके दो उद्देश्य थे-राजनैतिक और धार्मिक। वह अपने पूर्वजों की तरह दक्खिन में भी मुगलों का आधिपत्य कायम करना चाहता था किन्तु उसकी दक्खिन-नीति पर धर्म का भी प्रभाव था। शाहजहाँ कट्टर सुन्नी था और दक्खिन के राज्य शिया मत के अनुयायी थे। अतः शाहजहाँ उन राज्यों को दखल कर शिया मत को समाप्त करना चाहता था।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शाहजहाँ के राज्यकाल के आरंभ में केवल खानदेश और बरार मुगलों के अधीन रह गये थे। शाहजहाँ ने अहमदनगर, बीजापुर और गोलकुन्डा को जीतने का निश्चय किया। हम देख चुके हैं कि उत्तर-पश्चिम एवं मध्य एशिया में उसकी नीति असफल रही किन्तु दक्खिन में उसे सफलता प्राप्त हुई।

अहमदनगर—अहमदनगर का सुल्तान निजामशाह था। वह बूढ़ा हो गया था। मलिक अम्बर के मरने के बाद उसका पुत्र फतह खाँ मंत्री हुआ था। वह अयोग्य, डरपोक और कपटी था। वह मुगलों की ओर झुका हुआ था। उसने शीघ्र ही वृद्ध सुल्तान को मरवा दिया और उसके एक नाबालिग लड़के (हुसेनशाह) को गद्दी पर बैठा दिया। इस तरह वह अपना प्रभाव बढ़ाने के लिये प्रयत्न कर रहा था।

उधर बीजापुर के सुल्तान (आदिल शाह) की मदद से शाहजी अहमदनगर के दुर्ग दौलताबाद पर अधिकार करना चाहता था। अतः फतह खाँ ने मुगलों से सहायता माँगी। एक विशाल सेना के साथ महावत खाँ को भेजा गया। महावत खाँ ने सुल्तान और शाहजी (मराठा) के विरुद्ध युद्ध घोषित कर दिया। युद्ध में ये दोनों परास्त भी हो गये। फतह खाँ ने १०½ लाख रुपये रिश्वत लेकर दौलताबाद को मुगलों के हाथ में सौंप दिया।

अहमदनगर मुगल साम्राज्य का अंग बन गया। निजामशाही वंश का अन्त हो गया। हुसेन शाह को ग्वालियर के क़िले में रख दिया गया और वह वहीं क़ैदी के रूप में जीवन भर पड़ा रहा। फतह खाँ को सेना में एक उच्च पद दे दिया गया।

गोलकुन्डा एवं बीजापुर—गोलकुन्डा एवं बीजापुर अहमदनगर के सुल्तान और मराठे शाहजी को मदद दिया करते थे। वे शिया राज्य तो थे ही। अतः शाहजहाँ ने उनपर भी आधिपत्य जमाने का निश्चय किया। पहले उन राज्यों के सुल्तानों के पास एक सन्देश भेजा (१६३४) गया। उसमें यह माँग की गई कि वे मुगलों की अधीनता मान लें, उन्हें कर दें और दुश्मनों को मदद न करें। गोलकुन्डा के सुल्तान (कुतुबशाह) ने डर कर इन माँगों को कबूल कर लिया। उसने मुगल सम्राट के नाम में सिक्के चलाने और खुतबा पढ़वाने के लिये भी प्रतिज्ञा की।

बीजापुर के सुल्तान (आदिल शाह) ने सम्राट की माँगों को अस्वीकार कर दिया। अतः बीजापुर पर हमला कर दिया गया। बहुत से बीजापुरी तलवार के

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शिकार हो गये। अन्त में सुल्तान मुगलों से सन्धि कर लेने के लिये (१६३६) बाध्य हुआ। सुल्तान ने मुगल सम्राट की प्रभुता को स्वीकार कर लिया और वह उसे एक बड़ी रकम कर के रूप में देने के लिये सहमत हुआ। सुल्तान ने गोलकुन्डा में हस्तक्षेप नहीं करने और शाहजी को मदद नहीं देने के लिये भी वादा किया।

अब इसके बाद शाहजहाँ ने औरंगजेब को दक्षिण का सूबेदार नियुक्त कर दिया।

औरंगजेब की सूबेदारी–औरंगजेब पहली बार ८ वर्षों तक (१६३६-४४ ई०) दक्षिण में सूबेदार रहा। इस समय खानदेश, दौलताबाद, बरार और तैलंगाना—चार प्रदेश मुगलों के अधीन थे। औरंगजेब ने बलगाना आदि कुछ और प्रदेशों को जीता। उसने शाहजी के किलों पर भी अधिकार कर लिया। लेकिन उसकी सफलता को देखकर दारा जलने लगा। उससे प्रभावित होकर शाहजहाँ ने औरंगजेब को दक्षिण की सूबेदारी से वंचित कर दिया।

१६५३ ई० में औरंगजेब को फिर दूसरी बार दक्षिण का सूबेदार बनाकर भेजा गया। इन समय दक्षिण में बहुत अव्यवस्था फैली हुई थी। आर्थिक स्थिति खराब थी। वार्षिक आय ५ करोड़ से घट कर १ करोड़ तक हो गयी थी। औरंगजेब ने पहले अर्थ एवं भूमि के सम्बन्ध में आवश्यक सुधार किया। उसने शान्ति की स्थापना की।

इसके बाद गोलकुन्डा और बीजापुर की ओर औरंगजेब का ध्यान गया। ये दोनों राज्य स्वतन्त्र थे किन्तु औरंगजेब को इनकी स्वतन्त्रता खटक रही थी। गोलकुन्डा के सुल्तान के यहाँ कुछ बकाया भी हो गया था। उसी समय सुल्तान और उसके मंत्री मीरजुमला में मतभेद चल रहा था। मीरजुमला ने औरंगजेब से मदद माँगी। औरंगजेब ने शीघ्र ही गोलकुन्डा पर हमला करने के लिये अपने पुत्र (मुहम्मद शाह) के अधीन एक सेना भेज दी। मुगलों ने गोलकुन्डा में लूटपाट, मारकाट शुरू कर दी। अन्त में शाहजहाँ के आदेश से युद्ध बन्द हुआ और दोनों में सन्धि हो गई। सुल्तान ने औरंगजेब को हर्जाना देना कबूल किया और मुगलों की प्रभुता को मान लिया। उसने अपनी पुत्री का विवाह औरंगजेब के पुत्र से कर दिया। मीरजुमला को सेना में एक पद दे दिया गया।

बीजापुर का सुल्तान आदिल शाह १६५६ ई० में मर गया। उसके बाद उसका पुत्र आदिल शाह दूसरा गद्दी पर बैठा। औरंगजेब ने किसी बहाने उस पर भी हमला कर दिया। इसमें मीरजुमला से औरंगजेब को बहुत सहयोग मिला।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

औरंगजेब बीजापुर को भी नष्ट कर देना चाहता था किन्तु शाहजहाँ के आदेश से दोनों में सन्धि हो गई। सुल्तान ने हर्जाना देना स्वीकार किया और कुछ दुर्गों को भी मुगलों के अधीन सौंप दिया।

इसी समय शाहजहाँ बीमार पड़ा और उत्तराधिकार विषयक युद्ध शुरू हो गया। अतः औरंगजेब दक्षिण छोड़ कर उत्तरी भारत में चला आया। इस स्थिति से लाभ उठाकर बीजापुर तथा गोलकुन्डा ने फिर अपनी स्वतन्त्रता कायम कर ली।

औरंगजेब—उत्तराधिकार युद्ध में सफल होकर औरंगजेब १६५८ ई० में गद्दी पर बैठा। इसके बाद लगभग २५ वर्षों तक वह उत्तरी भारत में फँसा रहा। दक्षिण में शिवाजी के नेतृत्व में मराठों का उदय हो रहा था। १६८० ई० में शिवाजी की मृत्यु हो गई। शम्भा जी उसका उत्तराधिकारी हुआ। १६८१ ई० में औरंगजेब का विद्रोही पुत्र अकबर भी भाग कर दक्षिण में चला आया और उसने शम्भा जी के यहाँ शरण पायी। इस समय तक औरंगजेब को उत्तरी भारत के झमेलों से भी कुछ अवकाश मिल गया था। अतः अब दक्षिण भारत की ओर उसका ध्यान आकृष्ट हुआ।

उद्देश्य—औरंगजेब की दक्खिनी नीति कई उद्देश्यों से प्रभावित थी। उत्तराधिकार युद्ध एवं उत्तरी भारत की राजनीति में औरंगजेब के उलझे रहने के कारण दक्खिन के शिया राज्यों ने फिर अपनी स्वतन्त्र स्थिति कायम कर ली। औरंगजेब उनकी स्वतन्त्रता को सहन नहीं कर सकता था। दूसरे, वे ईरान के सम्राट को अपना अधिपति मानते, मुगल सम्राट को नहीं। तीसरे, वे जब-तब मुगलों के दुश्मन मराठों को मदद और कर दिया करते थे। चौथे, बीजापुर और गोलकुन्डा की रियासतें बहुत धनी थीं और उनपर अधिकार करने से आर्थिक लाभ की संभावना थी। पाँचवें, ये दोनों राज्य शिया थे जब कि औरंगजेब सुन्नी मत का अनुयायी था। अतः इन राज्यों पर आधिपत्य जमाना वह अपना धार्मिक कर्त्तव्य समझता था।

बीजापुर—पहले बीजापुर पर हमला (१६८५ ई०) हुआ। वहाँ का सुल्तान सिकन्दर शाह था। औरंगजेब स्वयं युद्ध का संचालन करता था। बीजापुरियों ने डटकर मुगलों का मुकाबला किया किन्तु अन्त में वे हार गये। रसद का अभाव हो गया और अकाल की स्थिति हो गई। मुगलों ने राज्य को खूब लूटा और उत्पात मचाया। सिकन्दर शाह को दौलताबाद के किले में बन्द कर

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दिया गया और उसे वार्षिक पेंशन (१ लाख रुपया) निश्चित कर दी गई। किले में ही उसकी मृत्यु (१७०० ई०) हो गई। बीजापुर को मुगल साम्राज्य का अंग (१६८६ ई०) बना लिया गया। दो सौ वर्षों का पुराना आदिलशाही वंश समाप्त हो गया।

गोलकुन्डा–बीजापुर की ओर से मुक्त होकर औरंगजेब गोलकुन्डा की ओर मुड़ा। अबुलहसन वहाँ का शासक था जो अयोग्य एवं आरामतलबी था। उसने राज्य का सारा काम दो मराठा ब्राह्मणों के हाथ में सौंप दिया था। उसने मुगलों के विरुद्ध बीजापुर को भी मदद दी थी। इस तरह वह पहले की सन्धि की शर्तों की उपेक्षा किया करता था। इन सभी बातों से औरंगजेब बहुत क्रुद्ध हो गया था।

औरंगजेब ने गोलकुन्डा पर (१६८७ ई०) चढ़ाई कर दी। करीब ८ महीने तक किले का घेरा जारी रहा। सुल्तान और उसके एक सरदार (अब्दुर्रजाक) ने बड़ी वीरता के साथ मुगलों का सामना किया किन्तु उनके प्रयत्न विफल सिद्ध हुए। अन्त में किले के एक प्रमुख अफसर को रिश्वत देकर प्रभावित कर लिया गया। किले का द्वार खुल गया। गोलकुन्डावासी हार गये। सुल्तान को दौलताबाद के किले में बन्द कर दिया गया और उसे वार्षिक पेंशन (½ लाख) निश्चित कर दी गई। गोलकुन्डा को मुगल साम्राज्य में मिला लिया गया।

परिणाम–ऊपर से देखने से औरंगजेब को दक्खिन में शानदार सफलता मिली, किन्तु ठीक से देखने पर स्पष्ट हो जाता है कि औरंगजेब की दक्खिन-नीति हानिकारक सिद्ध हुई। अतः इतिहासकार कहते हैं कि जैसे स्पेन के फोड़े (अल्सर) ने नेपोलियन प्रथम को नष्ट किया वैसे ही दक्खिन के फोड़े ने औरंगजेब को नष्ट किया। यह कथन बहुत कुछ सत्य है।

कुछ इतिहासकारों के मतानुसार बीजापुर एवं गोलकुन्डा के राज्य मराठों और मुगलों के मध्य दीवार का काम करते थे। उन्हें मुगल साम्राज्य में मिला लेने से दीवार गिर गई और मुगलों का मराठों से सीधा सम्पर्क एवं संघर्ष हो गया। किन्तु प्रसिद्ध इतिहासकार सर जे० एन० सरकार इस मत को नहीं स्वीकार करते हैं। उनका कथन है कि बीजापुर तथा गोलकुन्डा के राज्य बहुत कमजोर हो गये थे। वे मराठों के हमले से अपनी रक्षा नहीं कर सकते थे। दूसरे, इन राज्यों की आड़ में होकर मराठे मुगल साम्राज्य पर हमला कर उसे हानि पहुँचा सकते थे।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

किन्तु कुछ अन्य दृष्टियों से भी औरंगजेब की दक्खिन-नीति घातक सिद्ध हुई। दक्खिनी राज्यों पर अधिकार कर लेने से मुगल साम्राज्य का विस्तार उत्तर से दक्षिण तक बहुत बढ़ गया किन्तु उस समय यातायात की आजकल की तरह सुविधाएँ नहीं थीं। अतः उतना विशाल साम्राज्य पर शासन करना एवं नियंत्रण रखना कठिन हो गया। इसके अलावा जब औरंगजेब उत्तर में था तो दक्षिण में और जब दक्षिण में था तो उत्तर में अव्यवस्था फैलने लगी। उसकी अनुपस्थिति में शत्रुओं को प्रोत्साहन मिलने लगा। वह करीब २५ वर्षों तक दक्षिण में रहा था। इस लम्बी अवधि में उत्तरी भारत की दशा बिगड़ने लगी थी। दक्षिण के दीर्घकालीन युद्धों ने साम्राज्य की आर्थिक रीढ़ तोड़ दी। इस तरह औरंगजेब की दक्खिन-नीति भी मुगल साम्राज्य के पतन में सहायक सिद्ध हुई।

⊙

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अध्याय १२

मराठों का उदय--शिवाजी

भूमिका—१७ वीं शताब्दी में दक्षिण भारत में मराठों का उदय भारतीय इतिहास की महत्वपूर्ण राजनैतिक घटना है। इसका श्रेय मराठों के महान नेता शिवाजी को प्राप्त है किन्तु इसका सारा श्रेय उसे नहीं प्राप्त है। मराठों के उत्कर्ष में शिवाजी एक प्रमुख कारण था, एकमात्र कारण नहीं था। मराठों के उत्थान के लिये निम्नलिखित अनेक कारण थे।

भौगोलिक स्थिति—मराठों के प्रदेश को महाराष्ट्र कहते हैं। इस प्रदेश के निवासियों के चरित्र-निर्माण पर भौगोलिक स्थिति का गहरा प्रभाव पड़ा है। महाराष्ट्र नर्मदा नदी के दक्षिण में स्थित है और पर्वतमालाओं से घिरा हुआ है। उत्तर से दक्षिण की ओर सह्याद्री और पूर्व से पश्चिम की ओर सतपुरा एवं विन्ध्य पर्वतमालाएँ फैली हुई हैं। इस तरह महाराष्ट्र पर्वतों के बीच स्थित है। अत यह दीर्घकाल तक आक्रमणों से सुरक्षित था। यहाँ के निवासियों को अपनी सुरक्षा के लिये कोई चिन्ता नहीं थी। अतः वे अपने समय एवं शक्ति का उपयोग अन्य दिशाओं में करते थे।

पर्वतों में बहुत से दुर्ग थे। ये दुर्ग मराठों के लिये बहुत ही लाभदायक थे। इन्हीं दुर्गों में वे अपने सामानों एवं सेनाओं को रखा करते थे। मराठे दुर्ग को अपनी माता की तरह आदरणीय समझते थे।

महाराष्ट्र की भूमि पथरीली रही है। वर्षा भी बहुत नहीं होती है। अतः कृषियोग्य भूमि नहीं है। इससे पैदावार की कमी रही है। अतः वहाँ के निवासियों को जीवन-निर्वाह के लिये कठिन परिश्रम करना पड़ता था। लोग परिश्रमी और सीधे-सादे थे। उनकी आवश्यकताएँ कम होती थीं। वे साहसी, अध्यवसायी एवं आत्मविश्वासी थे। वे जहाँ-तहाँ लूटपाट भी किया करते थे। उनमें आलस्य एवं भोग-विलास की प्रवृत्ति का विकास नहीं हो सका। उनमें स्वतन्त्रता एवं स्वाभिमान की भावना बलवती हुई।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मराठों में सामाजिक एकता थी। कोई धनी या शोषक वर्ग नहीं था। स्त्रियों में परदा प्रथा नहीं थी। वे भी पुरुषों की तरह घूमती-फिरती थीं और स्वावलम्बी तथा कष्ट-सहिष्णु होती थीं। इस तरह समाज में पूरी समानता थी।

सांस्कृतिक जागृति—१५ वीं और १६ वीं शताब्दी में सारे देश में धर्म सुधार आन्दोलन शुरू हुआ था। इसे भक्ति-आन्दोलन भी कहते थे। महाराष्ट्र में भी कई सुधारकों का प्रादुर्भाव हुआ। उनमें रामदास, तुकाराम और एकनाथ के नाम विशेष प्रसिद्ध हैं। सुधारक उच्च वर्ग के नहीं बल्कि निम्न वर्ग के थे। अतः जस्टिस रानाडे के मतानुसार सुधार-आन्दोलन सर्वसाधारण वर्ग का काम था, उच्च वर्ग का नहीं था। इन सुधारकों ने जाति-पांति, पूजा-पाठ का विरोध किया। इन्होंने सत्कर्म, सदाचार, हृदय की शुद्धता और ईश्वर-भक्ति का प्रचार किया। इन्हें ब्राह्मणों की श्रेष्ठता में कोई विश्वास नहीं था। ये स्वयं भिन्न-भिन्न जाति के थे।

सुधारकों ने अपने सन्देश के प्रचार के लिये संस्कृत का परित्याग कर दिया और जनभाषा को अपनाया। इस तरह मराठों में भाषा सम्बन्धी एकता भी कायम हुई।

रामदास ने मराठों में राष्ट्रीय भावना जागृत किया। उन्होंने बहुत से मठ कायम किये। वे नैतिक विकास के साथ शारीरिक विकास पर भी बहुत जोर देते थे। अतः वे कुश्ती एवं व्यायाम को भी प्रोत्साहन देते थे। अतः डा० ईश्वरी प्रसाद के मतानुसार रामदास केवल धर्म सुधारक हीं नहीं थे बल्कि एक राष्ट्र निर्माता भी थे। उन्हें शिवाजी का गुरु माना जाता है। कहा जाता है कि है कि रामदास सांस्कृतिक शक्ति के और शिवाजी शारीरिक शक्ति के प्रतीक थे।

इस तरह हम देखते हैं कि शिवाजी के आगमन के पहले राजनीतिक क्षेत्र को छोड़कर अन्य क्षेत्रों में एकता कायम हो गई थी। सर यदुनाथ सरकार के शब्दों में, शिवाजी द्वारा राजनैतिक संगठन करने के पहले १७ वीं सदी में महाराष्ट्र में धर्म, भाषा एवं जीवन की अद्भुत एकता कायम हो चुकी थी।

राजनैतिक शिक्षा—शिवाजी के पूर्व मराठों को राजनैतिक, कूटनीतिक एवं सैनिक अनुभव भी प्राप्त हो चुके थे। दक्षिण भारत की मुस्लिम रियासतों के शासकों को बहुत से कामों के लिये मराठों पर निर्भर रहना पड़ता था। बहुत से मराठे उन रियासतों में विभिन्न पदों पर काम करते थे। इस तरह वे दीवान, मंत्री, राजदूत, सेनापति आदि विभिन्न पदों पर नियुक्त होते थे। स्वयं शिवाजी के पिता शाहजी भोंसले बीजापुर रियासत में नौकरी करते थे। इसके पूर्व शाहजी अहमदनगर रियासत में भी नौकरी कर चुके थे। इस तरह मराठों को बहुत कुछ राजनैतिक एवं सैनिक शिक्षा भी प्राप्त हो चुकी थी।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शिवाजी का व्यक्तित्व—मराठों के उत्कर्ष में अन्तिम प्रमुख कारण है शिवाजी का व्यक्तित्व। कहा जाता है कि "हिन्दू जाति में उत्पन्न हुए शिवाजी अन्तिम रचनात्मक प्रतिभा एवं राष्ट्रनिर्माता थे।"[1] शिवाजी के पूर्व मराठों में राजनैतिक एवं राष्ट्रीय भावना बलवती नहीं थी। इस कमी को शिवाजी ने पूरा किया।

इस तरह स्पष्ट है कि १७ वीं सदी में शिवाजी के नेतृत्व में मराठों का जो अद्भुत उत्थान हुआ वह कोई आकस्मिक घटना नहीं थी। इसके लिये पृष्ठभूमि पहले से ही तैयार हो रही थी। शिवाजी को अपने कार्य में उस पृष्ठभूमि से बहुमूल्य सहायता मिली। उसी नींव पर खड़े होकर शिवाजी ने आगे का कार्य पूरा किया।

शिवाजी

(१६२७-१६८० ई०)

प्रारम्भिक जीवन—पूना के निकट एक दुर्ग में १६२७ ई० में शिवाजी का जन्म हुआ था। शिवाजी के पिता का नाम शाहजी भोंसला था। उसकी माता जीजाबाई थी। जीजाबाई के पिता एक शक्तिशाली जागीरदार थे। शाहजी को भी पूना और इसके आसपास कुछ जागीरें प्राप्त थीं। शाहजी को दो पत्नियां थीं—जीजाबाई और तुकाबाई। शाहजी तुकाबाई के साथ रहते थे और जीजाबाई कुछ उपेक्षित दशा में थी। जीजाबाई अपने पुत्र के साथ पूना में रहती थी। दादा कोणदेव उन दोनों के संरक्षक थे।

शिवाजी के प्रारम्भिक जीवन पर तीन व्यक्तियों का बहुत प्रभाव पड़ा था। जीजाबाई, दादा कोणदेव और गुरु रामदास। जीजाबाई पवित्र एवं धार्मिक विचार की औरत थी। उपेक्षित रहने के कारण वह ईश्वर और अपने पुत्र शिवाजी में बहुत प्रेम रखती थी। हिन्दू धर्म में भी उसे बड़ी श्रद्धा थी। वह शिवाजी को रामायण, महाभारत आदि ग्रन्थों की वीरतापूर्ण कहानियों को सुनाया करती थी। उसने शिवाजी में हिन्दू धर्म के प्रति भी गहरी श्रद्धा पैदा कर दी। इस तरह शिवाजी के जीवन-निर्माण में उसकी माता का बहुत बड़ा हाथ था।

दादा कोणदेव ने भी शिवाजी के जीवन को बहुत प्रभावित किया। कोणदेव ब्राह्मण थे और बहुत ही योग्य तथा उत्तरदायी व्यक्ति थे। वे ही पूना की जागीर

---

1. Shivaji was the last constructive genius and nation builder that the Hindu race produced.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

के प्रवन्धक नियुक्त हुए थे। उन्होंने बड़ी निपुणता के साथ जागीर का प्रबन्ध किया। उन्होंने शिवाजी की शिक्षा के लिये भी समुचित प्रबन्ध किया। इस तरह शिवाजी को सैन्य-संगठन, युद्ध-कला, शासन-प्रबन्ध आदि बातों की शिक्षा दी गई। कोणदेव ने भी शिवाजी के सामने हिन्दू धर्म के आदर्शों को रखा।

गुरु रामदास ने भी शिवाजी को बहुत प्रेरित किया। ये शिवाजी के आध्यात्मिक पथ-प्रदर्शक थे। इन्होंने भी शिवाजी में हिन्दुत्व की भावना जागृत की और जाति तथा धर्म, गाय तथा ब्राह्मण की रक्षा करने का पवित्र सन्देश दिया।

दक्षिण भारत की तत्कालीन स्थिति से भी शिवाजी बहुत प्रभावित हुए। मुस्लिम रियासतों की दशा दयनीय थी। वे बहुत दुर्बल हो गयीं थीं और अव्यवस्था फैली हुई थी। उधर मराठों की दशा भी उन्नत नहीं थी। अतः एक सबल हिन्दू राज्य स्थापित करने के लिये शिवाजी को प्रेरणा प्राप्त हुई। शिवाजी पहाड़ी इलाकों में खूब घूमते-फिरते भी थे। अतः उन्हें महाराष्ट्र के विषय में समुचित भौगोलिक ज्ञान प्राप्त हुआ जो भविष्य में बहुत लाभदायक सिद्ध हुआ।

प्रारम्भिक विजय—शिवाजी प्रारम्भिक अवस्था से ही लूटपाट करने और अपनी शक्ति बढ़ाने में अभिरुचि दिखाने लगे। लगभग ११ वर्षों में (१६४४-५५ ई०) शिवाजी ने कई स्थानों पर अधिकार कर लिया। इसी अवधि में बीजापुर के साथ भी संघर्ष का सूत्रपात हो गया। सिंहगढ़, रोहिन्द, कोकण, तोरन आदि कई किलों पर शिवाजी ने अधिकार कर लिया। तोरन का किला बड़ा प्रसिद्ध था और यह बीजापुर के ही अधीन था। इस किले पर विजय (१६४६ ई०) के साथ शिवाजी को बहुत धन भी हाथ लगा। अब उसकी आर्थिक स्थिति अच्छी हो गयी। शिवाजी ने रायगढ़ नामक एक नया दुर्ग भी कायम किया।

शाहजी की गिरफ्तारी—शिवाजी के इन कार्यों से बीजापुर का सुल्तान अप्रसन्न हो गया। उसने शिवाजी के पिता शाहजी को गिरफ्तार (१६४८) कर लिया। इससे शिवाजी के कार्य में कुछ समय के लिये शिथिलता आ गई। अन्त में शिवाजी ने सुल्तान को कुछ दुर्ग लौटाकर समझौता कर लिया। सुलतान ने शाहजी को मुक्त (१६५५) कर दिया।

जावली पर अधिकार—जावली का एक प्रसिद्ध दुर्ग था। यह चन्द्रराव मोर के अधीन था। यह उसे बीजापुर के सुल्तान से जागीर के रूप में मिली थी। अतः चन्द्रराव भी शिवाजी का विरोधी था। ऐसी दशा में दक्षिण और दक्षिण-पश्चिम की ओर शिवाजी को बढ़ने में कठिनाई हो रही थी। अतः जावली पर अधिकार करना आवश्यक था। इसके लिये शिवाजी ने छल एवं रक्तपात का सहारा लिया। उसने चन्द्रराव की हत्या करा दी। उसके सहायक हनु-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मन्तराव को भी मार डाला गया। कुछ अन्य लोग भी तलवार के घाट उतार दिये गये। अब जावली पर शिवाजी का अधिकार (१६५६) हो गया।

जावली की विजय बहुत ही लाभदाक सिद्ध हुई। शिवाजी को बहुत धन मिला। बहुत से सामान एवं सैनिक भी मिले। मावल प्रदेश शिवाजी के अधीन हो गया और वहाँ के सैनिक बहुत ही योग्य होते थे। शिवाजी के लिये दक्षिण और पश्चिम बढ़ने के लिये रास्ता खुल गया। इस तरह जावली पर अधिकार होने से शिवाजी का हाथ बड़ा मजबूत हो गया।

जावली के बाद शिवाजी ने कोंकण, भिवांडी, कल्याण आदि स्थानों को (१६५७) दखल किया। इस तरह वह पश्चिम में समुद्रतट तक पहुँच गया।

बीजापुर से संघर्ष—१६५६ ई० तक शिवाजी ने बीजापुर के कई किलों पर अधिकार कर लिया था और अपनी शक्ति को बढ़ा लिया था। किन्तु बीजापुर शिवाजी की प्रगति को रोकने में असमर्थ था। मुगल भी बीजापुर के शासक को तंग कर रहे थे। १६५७ ई० में औरंगजेब ने बीजापुर पर हमला ही कर दिया था। किन्तु उसी साल दोनों में सन्धि हो गई। औरंगजेब उत्तराधिकार युद्ध में भी फँस गया। अब शिवाजी की ओर ध्यान देने के लिये बीजापुर को मौका मिला। करीब ५ वर्षों तक (१६५७-६२ ई०) दोनों में संघर्ष होता रहा।

अफजल खाँ बीजापुर का एक प्रसिद्ध सेनापति था। शिवाजी को पकड़ने, दबाने या मारने का भार उसी के ऊपर सौंपा गया। अफजल खाँ शिवाजी को धोखे से मारना चाहता था। अतः उसने कृष्णाजी भास्कर नामक एक मराठा ब्राह्मण के द्वारा शिवाजी से मिलने के लिये सन्देश भेजा। शिवाजी खाँ के सन्देश को शंका की दृष्टि से देखता था। उसे षड्यन्त्र के विषय में कुछ जानकारी भी मिल गयी थी। अतः शिवाजी ने अपनी सुरक्षा के लिये पूरी तैयारी कर ली। उसने अपने एक हाथ में एक बाघनख भी छिपा लिया था। अब उसने खाँ के प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया। प्रतापगढ़ में दोनों मिले। किन्तु खाँ की नीयत तो खराब थी। उसने आलिंगन के बहाने शिवाजी पर तलवार चलानी चाही। लेकिन शिवाजी ने झट बाघनख से अफजल खाँ को मार गिराया। आसपास छिपे हुए मराठे सैनिक भी बीजापुरी सैनिकों पर टूट पड़े और बहुत मुस्लिम सैनिकों को तलवार के घाट उतार दिये। कितने सैनिक अपनी जान लेकर भाग चले।

शिवाजी के इस कार्य की आलोचना की जाती है। नैतिक दृष्टि से यह कार्य भले ही उचित न जान पड़े, व्यावहारिक दृष्टि से तो अवश्य ही उचित कहा जायगा। अफजल खाँ स्वयं शिवाजी को धोखे से मारना चाहता था किन्तु

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शिवाजी सतर्क एवं चतुर था। उसने आत्मरक्षा के लिये विश्वासघाती अफजल खाँ को मार दिया।

अब तो शिवाजी की शक्ति एवं साहस में और भी अधिक वृद्धि हो गई। उसने बीजापुर के पन्हाला आदि दुर्गों को दखल कर लिया। फिर शिवाजी के विरुद्ध सेना भेजी गई। पन्हाला के दुर्ग में शिवाजी को घेर लिया गया किन्तु वे भागने में सफल हो गये। बीजापुर का प्रयास विफल हुआ। अन्त में सुल्तान शिवाजी को स्वतन्त्र शासक मान लेने के लिये बाध्य हुआ।

मुगलों से संघर्ष—

शायस्ता खाँ—गद्दी पर बैठने के बाद औरंगजेब ने फिर दक्षिण की ओर ध्यान दिया। वह शिवाजी की बढ़ती हुई शक्ति को देखकर चिन्तित एवं क्रुद्ध था। अतः उसने शिवाजी को कुचलने के लिये अपने मामा शायस्ता खाँ को भार सौंपा। मुगल सैनिकों ने मराठा राज्य में उत्पात मचा दिया (१६६३ ई०)। बहुत लूट-खसोट, मार-काट हुए। एक दिन शायस्ता खाँ अपने सैनिकों के साथ पूना के किले में विश्राम कर रहे थे। शिवाजी ने रात में उन सबों पर हमला कर दिया। बहुत से मराठे अपने बदले हुए वेश में थे। बहुत से मुगल मारे गये। स्वयं शायस्ता खाँ घायल हो गया और उसने अपनी कुछ उंगलियाँ गँवायीं। उसका एक पुत्र भी मारा गया। शायस्ता खाँ बड़ा अपमानित एवं लज्जित हुआ। औरंगजेब भी उससे असन्तुष्ट हो गया।

दूसरी ओर शिवाजी के साहस एवं शक्ति में बहुत वृद्धि हुई। सर्वत्र उसकी बहादुरी की चर्चा होने लगी।

सूरत की नोंच-खसोट—दूसरे ही साल (१६६४ ई०) शिवाजी ने सूरत की नोंच-खसोट की। सूरत पश्चिमी किनारे पर व्यापार का प्रमुख केन्द्र था। नगर बहुत ही समृद्धिशाली था। वहाँ डचों तथा अंगरेजों की कुछ व्यापारिक कोठियाँ भी थीं। शिवाजी ने नगर को खूब लूटा। कितने लोग मारे गये। शिवाजी को अपार धन प्राप्त हुआ। एक करोड़ स अधिक रकम प्राप्त हुई। कहा जाता है कि वह सोना-चाँदी, हीरा-मोती को छोड़कर अन्य चीजों को नहीं लेता था।

जयसिंह—शिवाजी की सफलताओं ने मुगलों को आश्चर्यचकित एवं भयभीत कर दिया था। राजपूत सरदार जसवन्त सिंह भी शिवाजी को नहीं दबा सका था। अब औरंगजेब ने यह कार्य जयसिंह को सौंपा। जयसिंह बहुत योग्य, वीर एवं अनुभवी व्यक्ति था। सम्राट को उसकी योग्यता में विश्वास था। जयसिंह के साथ कुछ दूसरे योग्य सैनिक भी भेजे गये।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

१६६५ ई० में जयसिंह पूना पहुँच गया। उसने कुछ स्थानीय सरदारों को अपने पक्ष में कर लिया। उसने पुरन्दर के दुर्ग को घेर लिया। इस पर उसकी विजय भी हो गयी। अब शिवाजी सन्धि करने के लिये बाध्य हुआ। दोनों में पुरन्दर की सन्धि हुई। शिवाजी ने २३ दुर्गों को मुगलों के हाथ में सौंप दिया। उसने मुगलों से बीजापुर के विरुद्ध सैनिक सहायता देने के लिये प्रतिज्ञा की। शिवाजी को मुगल दरबार में उपस्थित होने के लिये नहीं कहा गया। उसे कुछ भागों में चौथ वसूल करने के लिये अधिकार दे दिया गया। इसके बाद जयसिंह ने बीजापुर के राज्य पर चढ़ाई भी कर दी। शिवाजी ने उसे सैनिक सहायता भी दी। इस तरह पुरन्दर की सन्धि जयसिंह की एक बड़ी कूटनीतिक विजय थी।

आगरे में शिवाजी की उपस्थिति[1]—जयसिंह ने एक और कूटनीतिक विजय प्राप्त की। उसे बीजापुर के युद्ध में सफलता नहीं मिली। अतः उसे शंका थी कि सम्राट इससे अप्रसन्न होगा। वह सम्राट को खुश करना चाहता था। उसे यह भी शंका थी कि शिवाजी मुगलों के विरुद्ध बीजापुर के साथ समझौता कर लेगा। अतः वह शिवाजी को बीजापुर से दूर देखना चाहता था। इन सभी बातों से प्रेरित होकर जयसिंह ने शिवाजी को आगरे में भेजने के लिये प्रयास किया। उसने शिवाजी को पद एवं सम्मान के लिये प्रलोभन दिया। उसने शिवाजी की सुरक्षा के लिये भी आश्वासन दिया। शिवाजी जयसिंह के जाल में फँस गया और औरंगजेब से भेंट करने के लिये आगरे जाने के लिये तैयार हो गया।

१६६६ ई० में शिवाजी अपने पुत्र के साथ आगरा पहुँच गया। लेकिन औरंगजेब ने दरबार में उसके साथ सम्मानपूर्वक व्यवहार नहीं किया। उसे तीसरी श्रेणी के सरदारों के साथ रखा गया था। इससे शिवाजी आगबबूला हो गया। इसके बाद उसे बन्दी बना लिया गया। औरंगजेब तो शिवाजी को मरवा देना चाहता था किन्तु वह जयसिंह के पुत्र रामसिंह के प्रभाव के कारण ऐसा करने में सफल नहीं हो सका। शिवाजी का वध करने से राजपूतों के बिगड़ जाने की आशंका थी। अतः शिवाजी को बन्दी बनाकर ही सन्तोष करना पड़ा।

शिवाजी बन्दीगृह से मुक्त होने के लिये उपाय सोचने लगा। एक बार वह बीमार पड़ा या इस तरह का प्रचार करा दिया। फिर वह स्वस्थ हुआ। इसकी खुशियाली में वह टोकरियों में मिठाइयाँ भरकर बाँटने के लिये भेजने लगा। टोकरियों की जाँच की जाती थी किन्तु एकाध दिन के बाद जाँच बन्द कर दी

१. कुछ लेखकों के मतानुसार दिल्ली में शिवाजी ने औरंगजेब से भेंट की थी। डा० ईश्वरी प्रसाद का भी यही मत है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

गई। एक दिन शिवाजी और उसका पुत्र दो टोकरियों में बैठकर बाहर निकल भागे। वे दोनों मथुरा पहुँचे। वहाँ शिवाजी ने अपने पुत्र को एक मराठा ब्राह्मण के संरक्षण में छोड़ दिया। स्वयं संन्यासी के वेष में घूमते-फिरते शिवाजी महाराष्ट्र में (१६६६ ई०) पहुँच गया। इस तरह शिवाजी ने औरंगजेब की आँख में धूल झोंककर अपना काम बना लिया।

शिवाजी के भाग जाने से औरंगजेब बड़ा लज्जित एवं क्रुद्ध हुआ। वह समझता था कि इस कार्य में रामसिंह से अवश्य मदद मिली है। अतः उसने रामसिंह को पदच्युत कर दिया। जयसिंह को भी औरंगजेब ने दक्षिण से बुला लिया और ऐसा कहा जाता है कि रास्ते में ही जयसिंह को विष देकर मरवा दिया गया।

सुधार-कार्य—महाराष्ट्र में पहुँचने के बाद लगभग ३ वर्षों तक शान्ति बनी रही। शिवाजी को विश्राम की जरूरत थी। उधर औरंगजेब भी उत्तर-पश्चिमी सीमा में व्यस्त था। इस अवधि में दक्षिण में मुअज्जम सूबेदार था जो अयोग्य व्यक्ति था। जसवन्त सिंह को भी दक्षिण में भेजा गया था जो शिवाजी से सहानुभूति रखता था। उसी के प्रभाव से औरंगजेब ने शिवाजी को स्वतन्त्र राजा के रूप में मान लिया। इस अवधि में शिवाजी ने शासन का संगठन किया और प्रजा के हित में अनेक सुधार किया।

मुगलों से फिर संघर्ष—लेकिन मुगलों के साथ बहुत दिनों तक शान्ति कायम नहीं रह सकी। आर्थिक सुविधा के लिये औरंगजेब ने कुछ सैनिकों को पदच्युत किया। शिवाजी ने उन सैनिकों को अपनी सेना में रख लिया। उसने फिर से दुर्गों पर अधिकार करना शुरू किया। इस तरह उसने पुरन्दर की सन्धि के द्वारा दिये गये मुगलों के दुर्गों पर अधिकार कर लिया। १६७० ई० में उसने फिर सूरत को लूटा और ६६ लाख रुपये की सम्पत्ति मिली! सूरत का बन्दरगाह नष्ट हो गया। उसने दक्षिण की मुस्लिम रियासतों से कर वसूल करना आरम्भ किया। वह मुगलों के अधीनस्थ राज्यों से भी कर (चौथ—सरदेशमुखी) वसूलने लगा। मुगलों से करीब ४ वर्षों तक (१६७०–७४ ई०) युद्ध होता रहा। अन्त में मुगलों को अपनी हार मान लेनी पड़ी। शिवाजी का प्रभाव बहुत बढ़ गया।

राज्याभिषेक—शिवाजी ने राजा की उपाधि धारण कर ली थी। लेकिन अभीतक औपचारिक ढंग से उसका राज्याभिषेक-उत्सव नहीं मनाया गया था। बहुत लोगों की दृष्टि में वह अभी जागीरदार की ही स्थिति में था। अतः १६७४ ई० में रायगढ़ के किले में बड़े धूमधाम से उसका राज्याभिषेक हुआ। उसने छत्रपति और गो-ब्राह्मण प्रतिपालक की उपाधियाँ ग्रहण कीं। उत्सव में करोड़ों रुपये खर्च हुए।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अन्य विजय—शिवाजी अभी चुपचाप बैठने वाला व्यक्ति नहीं था। धन का अभाव हो गया था। राज्य-विस्तार की लालसा थी ही। अतः शिवाजी ने सुदूर दक्षिण में विजय-अभियान शुरू किया। उसने कर्नाटक पर विजय प्राप्त कर ली। जिंजी, वेलोर आदि अनेक किलों पर उसका अधिकार हो गया। इन विजयों से फिर पर्याप्त धन भी हाथ लगा। फिर औरंगजेब का ध्यान शिवाजी की ओर आकृष्ट हुआ। दिलेर खाँ को उसके विरुद्ध भेजा गया। किन्तु इसी बीच शिवाजी बीमार पड़ा और इस संसार से (१६८० ई०) चल बसा।

राज्य-विस्तार—इस तरह शिवाजी ने समस्त महाराष्ट्र पर आधिपत्य जमा लिया। उत्तर से दक्षिण की ओर उसका साम्राज्य दूर तक फैला हुआ था। उसके साम्राज्य में कोंकण, पश्चिमी घाट, कर्नाटक आदि और लगभग ३०० किले सम्मिलित थे। राज्य की वार्षिक आमदनी लगभग सात करोड़ की थी।

शिवाजी की शासन-प्रणाली

शिवाजी केवल विजेता एवं लुटेरा ही नहीं थे बल्कि एक कुशल शासक भी थे। इनकी शासन प्रणाली की निम्नलिखित विशेषताएँ थीं :—

केन्द्रीय शासन—शासन का प्रधान राजा होता था। वह सर्वेसर्वा था। उसके हाथ में सारी शक्तियाँ केन्द्रित थीं। सैद्धान्तिक दृष्टि से वह स्वेच्छाचारी था किन्तु व्यावहारिक दृष्टि से वह निरंकुश एवं अत्याचारी नहीं था। वह अपनी प्रजा के हित का ख्याल रखता था। हिन्दुओं के कुछ प्राचीन राजनीतिक सिद्धान्तों के आधार पर उसने अपनी शासन प्रणाली कायम की थी। योग्यता के आधार पर किसी को नौकरी दी जाती थी।

अष्टप्रधान—राजा को शासन में सहायता करने के लिये आठ पदाधिकारी थे। उन्हें अष्टप्रधान कहते थे। वे थे—(१) पेशवा—वह राज्य का प्रधान मंत्री था। राज्य के सभी कागज-पत्रों पर उसकी मोहर लगती थी। (२) अमात्य—वह राज्य का अर्थमंत्री था। वह आय-व्यय का व्योरा रखता था। (३) मंत्री—वह राजा के दैनिक कार्यों तथा दरबार का विवरण रखता था। (४) सचिव—वह राजा के पत्र-व्यवहार के लिये उत्तरदायी था। (५) सुमन्त—विदेश मंत्री था। (६) पंडित राव दान एवं धर्म विभागों के लिये उत्तरदायी था। (७) न्यायाधीश न्याय विभाग का अध्यक्ष था। (८) सेनापति सेना विभाग के लिये उत्तरदायी था।

आधुनिक उत्तरदायी मंत्रिमंडल से अष्टप्रधान की तुलना नहीं की जा सकती। अष्टप्रधान किसी धारासभा के प्रति उत्तरदायी नहीं था। इसके सभी सदस्य राजा के प्रति उत्तरदायी नहीं थे। इनकी सलाहों को मानना राजा की इच्छा पर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

निर्भर करता था। इन मंत्रियों को राजकोष से नकद वेतन दिया जाता था। अष्टप्रधान के अधिकांश सदस्य ब्राह्मण हुआ करते थे। पंडितराव एवं न्यायाधीश को छोड़कर अन्य मंत्रियों को सैनिक कार्य भी करना पड़ता था और युद्ध क्षेत्र में भी जाना पड़ता था। राजा सभी के कार्यों का निरीक्षण करता था। मंत्री का पद वंशानुगत या पैतृक नहीं था।

प्रान्तीय शासन—शासन की सुविधा के लिये मराठा साम्राज्य ४ प्रान्तों में विभाजित था। प्रत्येक प्रान्त में एक सूबेदार रहता था। वह राजा के ही आदेशानुसार कार्य करता था। उसकी सहायता के लिये भी आठ सदस्यों की एक समिति होती थी। प्रान्त अन्य इकाइयों में विभक्त था।

आर्थिक प्रबन्ध--शिवाजी के पिता जागीरदार थे। अतः शिवाजी जागीदारी प्रथा की बुराइयों से परिचित थे। जागीरदार या जमींदार के ही अधीन बहुत जमीन होती थी। किसानों का सरकार से सीधा सम्बन्ध नहीं था। अतः किसानों की दशा दयनीय थी। शिवाजी ने जागीरदारी प्रथा को तोड़ दिया। राज्य की सारी जमीन पर सरकार का अधिकार हो गया। जमीन की नाप करायी गई और भूमि की उपजाऊ शक्ति के अनुसार कर निश्चित हुआ। अच्छी खेती करनेवाले किसानों को $\frac{२}{५}$ सरकार को देना पड़ता था। लगान नगद या अन्न के रूप में दिया जा सकता था। अब किसानों से मनमाने ढंग से कोई कर नहीं ले सकता था। शिवाजी की इस भूमि व्यवस्था को रैयत-वाड़ी कहते थे।

किसानों को खेती के लिये प्रोत्साहन दिया जाता था। अच्छा बीज और पशु को खरीदने के लिये राज्य की ओर से कम सूद पर कर्ज दिया जाता था। कर्ज की वसूली किश्तों में होती थी। अकाल पड़ने पर भी आर्थिक सुविधाएँ दी जाती थीं।

लगान के अतिरिक्त चौथ और सरदेशमुखी भी आय के अन्य प्रमुख साधन थे। चौथ के सम्बन्ध में इतिहासकारों में गहरा मतभेद है। सर देसाई के मतानुसार चौथ विजित राज्यों से लिया जाता था और बदले में सुरक्षा का आश्वासन दिया जाता था। रानाडे के मतानुसार जो राज्य चौथ देता था उसकी रक्षा का भार राजा के ऊपर रहता था। लेकिन कुछ अन्य विद्वानों के मतानुसार मराठों के हमले से मुक्त रहने के लिये ही दुर्बल राज्य शिवाजी को चौथ देते थे। इसके बदले में सुरक्षा के लिये कोई गारंटी नहीं दी जाती थी।

शिवाजी महाराष्ट्र का सरदेशमुख थे। अतः वे अपनी प्रजा से आय का $\frac{१}{१०}$ भाग कर के रूप में वसूल करते थे। इस कर को सरदेशमुखी कहते थे।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सैनिक व्यवस्था—शिवाजी एक महान् विजेता थे। उन्हें मुगलों जैसे शक्तिशाली दुश्मनों का मुकाबला करना था। अतः उन्होंने सैनिक संगठन पर प्रारम्भ से ही ध्यान दिया।

दुर्ग मराठा सेना का एक प्रधान अंग था। मराठों के पास कई दुर्ग थे। उन्होंने कुछ दुर्ग तो दूसरों से जीता था और कुछ दुर्ग स्वयं निर्माण किया था। दुर्ग से मराठों को बहुत लाभ होते थे। दुर्ग सुरक्षा एवं शरण के लिये प्रमुख साधन था। अतः मराठे दुर्ग को माता की तरह मानते थे।

घुड़सवार और पैदल भी मराठा सेना के प्रमुख अंग थे। ये सेनाएँ पिरामिड की तरह संगठित थी। २५ घुड़सवारों की सबसे छोटी इकाई थी और यह हवलदार के अधीन होती थीं। ५ हवलदारों के ऊपर १ जुमलादार, १० जुमलादारों के ऊपर १ हजारी और ५ हजारियो के ऊपर १ पंच हजारी होते थे। इस सेना का सर्वोच्च अधिकारी सरनौबत कहलाता था। पद के अनुसार ही वेतन मिलता था। घुड़सवार दो प्रकार के थे—बर्गीर जिन्हें घोड़े और सामान राज्य की ओर से मिलते थे और सिलेदार जो घोड़े और सामान का स्वयं प्रबन्ध करते थे। बर्गीर को सरकार निश्चित वेतन देती थी। सिलेदार को जरूरत पड़ने पर बुलाया जाता था और उन्हें भत्ता के तौर पर कुछ रकम दी जाती थी। पैदल सेना का भी ऐसा ही संगठन था। ९ सैनिकों की सबसे छोटी इकाई थी और यह नायक के अधीन होती थी। ५ नायकों के ऊपर १ हवलदार, २ या ३ हवलदारों के ऊपर १ जुमलादार, १० जुमलादारों के ऊपर १ हजारी और ७ हजारियों के ऊपर १ सात हजारी होते थे। इस सेना का भी सर्वोच्च अधिकारी सरनौबत कहलाता था।

कहा जाता है कि शिवाजी के पास एक तोपखाना भी था। उसकी सेना में हाथी और ऊँट भी थे। उसने समुद्री बेड़े का भी संगठन किया था।

अनुशासन—मराठा सेना में अनुशासन पर बहुत जोर दिया जाता था। डा० ईश्वरी प्रसाद के मतानुसार सेना में हिन्दू और मुसलमान दोनों थे और उनके साथ एक समान वर्ताव होता था। सैनिक रणक्षेत्र में अपने साथ दास, दाई या किसी औरत को नहीं ले जा सकता था। सामान भी जरूरत से अधिक कोई नहीं ले जा सकता था। लूट में जो बहुमूल्य चीजें मिलती थीं वे राजकोष में जमा कर दी जाती थीं। साधारण चीजों को सैनिकों में बाँट दिया जाता था। बेईमानों, अनुशासनहीनों और चरित्रभ्रष्टों को कठोर सजा दी जाती थी। दुश्मन की स्त्रियों एवं बच्चों की रक्षा का ख्याल करना पड़ता था। चढ़ाई एवं लूट के समय ब्राह्मण और किसानों के हित का भी ख्याल करना पड़ता था। मराठे सैनिक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

८ महीने बाहर लूट एवं युद्ध करते थे और बाकी ४ महीने खासकर बरसात के समय छावनियों में पड़े रहते थे। डा० ईश्वरी प्रसाद के मतानुसार शिवाजी की मृत्यु के समय घुड़सवारों की संख्या ३० या ४० हजार थी और पैदल सैनिकों की संख्या एक लाख थी।

न्याय-व्यवस्था—न्याय-व्यवस्था प्राचीनता पर आधारित थी। ग्रामों में श्रेष्ठजन झगड़ों का निर्णय करते थे। पटेल नामक अधिकारी फौजदारी मामलों में निर्णय करते थे। दीवानी और फौजदारी दोनों मामलों में ब्राह्मण न्यायाधीश अपील सुनते थे। वे स्मृतियों के अनुसार निर्णय करते थे।

त्रुटियाँ—शिवाजी की शासन प्रणाली में कुछ त्रुटियाँ भी दीख पड़ती हैं। शिवाजी प्रजा के शुभ-चिन्तक थे किन्तु उन्होंने अपनी प्रजा के लिये बहुत उपयोगी काम नहीं किया। शिक्षा, साहित्य एवं कला के विकास की ओर समुचित ध्यान नहीं दिया गया। वाणिज्य, व्यापार एवं व्यवसाय की उन्नति पर भी जोर नहीं दिया गया। अतः आय के साधन नहीं बढ़ सके। न्याय के क्षेत्र में भी लिखित एवं स्पष्ट कानूनों का अभाव था। कार्यपद्धति भी अस्पष्ट थी।

शिवाजी का मूल्यांकन

भूमिका—शिवाजी के व्यक्तित्व के मूल्यांकन के सम्बन्ध में इतिहासकारों में मतभेद है। खफी खाँ और डा० स्मिथ जैसे इतिहासकारों ने शिवाजी की बहुत निन्दा की है। खफी खाँ के मतानुसार शिवाजी कुटिल, विश्वासघाती, कपटी और लुटेरा था। स्मिथ के मतानुसार शिवाजी डाकू था और उसका स्थापित राज्य डाकू राज्य था। कोई उसे पहाड़ी चूहा और नारकीय कुत्ता कहकर उसकी उपेक्षा करता है। किन्तु ये सभी मत एक पक्षीय हैं और इनका खंडन किया गया है। उनमें हृदय एवं मस्तिष्क के अनेक गुण भरे हुए थे। श्री यदुनाथ सरकार के शब्दों में "उनके चरित्र की आकर्षण शक्ति चुम्बक की तरह थी। वे हिन्दू जाति में उत्पन्न हुए अन्तिम रचनात्मक प्रतिभा एवं राष्ट्रनिर्माता थे।" निम्नलिखित विवरण से स्पष्ट हो जायगा कि शिवाजी एक महान् पुरुष, सफल सैनिक, चतुर राजनीतिज्ञ और कुशल प्रशासक थे।

मनुष्य के रूप में—मनुष्य की दृष्टि से शिवाजी के चरित्र में बहुत सी अच्छी बातें दीख पड़ती हैं। उन्हें अपने पिता का प्यार प्राप्त नहीं था फिर भी वे अपने पिता के प्रति सम्मान एवं आज्ञाकारिता का भाव रखते थे। वे अपनी पत्नी एवं सन्तानों से प्रेम रखते थे। वे अपनी माता को तो देवी-देवता की तरह पूज्य समझते थे। वे अपने युग की अनेक बुराइयों से मुक्त थे। अतः अपने व्यक्तिगत जीवन में वे अपने समय से बहुत कुछ आगे थे।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शिवाजी हिन्दू धर्म के समर्थक थे। वे गौ और ब्राह्मणों में बड़ी श्रद्धा रखते थे। उन्होंने गौ-ब्राह्मण प्रतिपालक की उपाधि ग्रहण की थी। वे अपने धर्म की रक्षा के लिये कोई कोर-कसर उठा नहीं रखते थे। किन्तु उनमें धार्मिकता थी, कट्टरता नहीं; उनमें सहिष्णुता थी, धर्मांधता नहीं। वे अन्य धर्मों के प्रति उदार थे। जाति या धर्म के नाम पर वे कोई भेदभाव नहीं करते थे। वे हिन्दू और मुसलमान सब के साथ एक समान व्यवहार करते थे। वे मस्जिदों पर कहीं प्रहार नहीं करते थे और कुरान का आदर करते थे। कहीं कुरान मिल जाने पर उसे किसी मुसलमान को दे दिया जाता था। वे स्त्रियों और बच्चों की रक्षा करते थे। वे दुश्मन पक्ष की स्त्रियों को भी सुरक्षित पहुँचवा देते थे। वे अनावश्यक किसी के प्रति कठोर नहीं थे। रावलिंसन के शब्दों में "औरंगजेब के हाथों की तरह शिवाजी के हाथ अपने सगे-सम्बन्धियों के खून से कलंकित नहीं थे।"[1]

शिवाजी स्वयं विद्वान नहीं थे लेकिन विद्वानों और कलाकारों का आदर करते थे। विद्यार्थियों को आर्थिक सहायता प्रदान कर प्रोत्साहन दिया जाता था। संस्कृत एवं वेद के अध्ययन को भी प्रोत्साहन मिलता था।

सैनिक के रूप में—शिवाजी में एक सफल सैनिक एवं सेनानायक के गुण भरे हुए थे। वे बहुत ही वीर, साहसी, अध्यवसायी एवं परिश्रमी थे। वे भय तो जानते ही नहीं थे। वे कष्ट एवं कठिनाइयों से घबराते नहीं थे। वे और उनके सैनिक छापेमार युद्धकला में बहुत ही प्रवीण थे। वे सेना में योग्यता के आधार पर भर्ती करते थे और अनुशासन एवं सदाचार पर बहुत जोर देते थे।

शिवाजी के दुश्मन बड़े ही प्रबल थे—मुगल, शिया-राज्य, जंजीरा के हब्शी और पुर्त्तगीज। इनमें भी मुगल सर्वशक्तिशाली थे। शिवाजी ने सभी शत्रुओं को परेशान और परास्त करके छोड़ दिया। श्री यदुनाथ सरकार के शब्दों में "उनके पहले कोई भी हिन्दू मध्याह्न के सूर्य की तरह प्रचण्ड तेज वाले बलवान् मुगल-साम्राज्य के विरुद्ध खड़े होने में समर्थ नहीं हुआ था। सभी हारकर पिस गये और लोप हो गये थे। यह देखकर भी एक साधारण जागीरदार का यह पुत्र नहीं डरा, वह विद्रोही बना और अन्त तक जय लाभ ही करता रहा।[2]

राजनीतिज्ञ के रूप में—हैदरअली और रणजीत सिंह की तरह शिवाजी पढ़े-लिखे नहीं थे। लेकिन शिवाजी राजनीति एवं कूटनीति में पारंगत थे। यद्यपि

१. His was a dark and violent ageand at least Shivaji's hands were not stained like those of Aurangzeb with the blood of his kindred.

२ शिवाजी—पृ० १६०

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वे एक बार जयसिंह के बहकावे में पड़कर औरंगजेब के दरबार में जाने के लिये सहमत हो गये किन्तु मुगल सम्राटों के वन्दीगृह से भाग निकलना उनकी कूटनीति का प्रबल प्रमाण है। अफजल खाँ उनकी जान का गाँहक था किन्तु हम देख चुके हैं कि किस चतुराई के साथ उन्होंने अपनी रक्षा कर ली और अफजल खाँ का काम तमाम कर दिया। वे शिया राज्यों स लड़ते भी थे, जरूरत पड़ने पर मित्रता भी करते थे।

शिवाजी के पूर्व महाराष्ट्रनिवासी विखरे हुए थे। उनमें एकता एवं उत्साह का अभाव था। वे शत्रुओं से घिरे हुए थे। उनमें स्वतन्त्रता की भावना दुर्वल थी। शिवाजी ने उन्हें संगठित कर उनमें नवजीवन प्रदान किया। सर यदुनाथ सरकार के शब्दों में "निरक्षर, गँवार बालक, शिवाजी ने कितना मामूली मसाला लेकर चारो ओर के कैसे-कैसे भिन्न-भिन्न प्रतापी शत्रुओं से लड़कर अपने को—साथ ही साथ उस मराठा जाति को—स्वाधीनता के आसन पर बैठाया था, यह कहानी भारत के इतिहास में अमर रहेगी।"[1]

शिवाजी कुशल प्रशासक भी थे। उनमें मौलिक प्रतिभा थी। उन्होंने राज्यों को जीता, इनका संगठन भी किया। बाबर या नेपोलियन की तरह शिवाजी का साम्राज्य असंगठित नहीं था। इन्होंने शासन का संगठन किया। खूबी तो यह है कि शासन-संगठन में इन्होंने रणजीत सिंह या महादजी सिन्धिया की तरह कोई विदेशी सहायता नहीं ली। सर यदुनाथ सरकार के शब्दों में "शासन पद्धति, सैन्य संगठन और कार्यकलाप सब अपना ही उत्पन्न किया हुआ था। उनकी राज्य-व्यवस्था बहुत दिनों तक स्थायी रही और पेशवावों के समय में भी आदर्श गिनी जाती रही।"[2] डा० ईश्वरी प्रसाद के शब्दों में "उन्होंने ऐसे शासन का संगठन किया जो कई दृष्टियों से मुगलों के शासन से अधिक निपुण था।"[3] इस तरह "एक छितराई हुई पराधीन जाति दृढ़ हुई, उसने अपनी शक्ति को समझा और वह उन्नति के शिखर पर पहुँची। उस आदि युग के गुप्त और पाल साम्राज्य के बाद शिवाजी को छोड़कर और किसी दूसरे हिन्दू ने इतना बड़ा पराक्रम नहीं दिखाया।"[4]

शिवाजी की सफलता के कारण

शिवाजी को जो अद्भुत सफलता प्राप्त हुई उसके निम्नलिखित कारण थे :—

(१) **अनुकूल पृष्ठभूमि**—शिवाजी के उत्थान के लिये अनुकूल पृष्ठभूमि तैयार हो चुकी थी। उनका उदय होने के पूर्व महाराष्ट्र में धर्म-सुधार आन्दोलन

---

१ शिवाजी—पृ० १६०   २ शिवाजी—पृ० १६०

३ He organised an administration which was in manys respects more efficient than that of the Mughals.
History of Muslim Rule. P. 598

४ शिवाजी—पृ० १६०

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हुआ। रामदास, तुकाराम, एकनाथ आदि सुधारक हुए। इन लोगों ने धर्म एवं समाज के क्षेत्र में एकता का प्रचार किया और मराठी भाषा का विकास किया। अतः सर यदुनाथ सरकार के शब्दों में शिवाजी द्वारा स्थापित राजनैतिक एकता के पूर्व भाषा, धर्म एवं जीवन के क्षेत्र में एकता कायम हो चुकी थी। शिवाजी भी अपने समय की उपज थे। उन्होंने अपने देशवासियों की आवश्यकता को समझा और उसे पूरा करने का प्रयास किया।

उन सुधारकों में गुरु रामदास ने शिवाजी को बहुत प्रभावित किया था। रामदास धर्मसुधारक और राष्ट्रनिर्माता दोनों ही थे। उन्होंने शिवाजी को बहुत प्रेरणा दी थी। सरदेसाई के मतानुसार मराठा राष्ट्र को उन्नत करने वाली दो शक्तियाँ थीं--एक आध्यात्मिक शक्ति जिसके नेता रामदास थे और दूसरी शारीरिक शक्ति जिसके नेता शिवाजी थे। इस तरह दोनों एक दूसरे के पूरक थे।

(२) भौगोलिक स्थिति—हम देख चुके हैं कि महाराष्ट्र की भौगोलिक स्थिति ने मराठों को वीर, साहसी, धैर्यशील, कष्टसहिष्णु और मितव्ययी बना दिया था। इसके अतिरिक्त शिवाजी तथा अन्य मराठों को अपने राज्य की भौगोलिक स्थिति का समुचित ज्ञान था। वे जानते थे कि कौन पहाड़, कौन घाटी, कौन किला और कौन मार्ग किधर और कहाँ है। किन्तु उनके दुश्मनों को महाराष्ट्र के भूगोल का उतना ज्ञान नहीं था।

महाराष्ट्र में दुर्गों की भरमार थी। इन दुर्गों से अपनी रक्षा करने में और आक्रमणकारियों से लड़ने में बहुत सुविधाएँ मिलती थीं। दुश्मनों को ऐसी सुविधाओं का अभाव था। उन्हें पर्वतीय विश्रामगृहों की पूरी जानकारी नहीं थी।

मराठों ने अपनी भौगोलिक स्थिति के अनुकूल ही लड़ने की कला का आविष्कार कर लिया था। वे खुलकर मैदान में नहीं लड़ते थे। उनकी रणनीति को छापामार या गोरिला प्रणाली कहते हैं। वे छोटे-छोटे टुकड़ों में जहाँ-तहाँ लुक-छिपकर दुश्मनों पर आक्रमण करते थे। वे दुश्मनों के सामानों को लूट कर भाग चलते थे। लेकिन मुगल खुला युद्ध करने की कला जानते थे। अतः उन्हें मराठे बहुत परेशान कर देते थे।

(३) सैनिक अनुशासन—मराठा सैनिकों में अनुशासन पर बड़ा ध्यान दिया जाता था। वे अपने साथ गुलाम या औरत लेकर नहीं चल सकते थे। अनुशासनहीनता के लिये कठोर सजा दी जाती थी। किन्तु मुगल सैनिक अपने साथ नर्तकियों, रखैलों तथा दासों को लेकर चलते थे। इसके अतिरिक्त मराठा सैनिक अपने साथ बहुत कम और आवश्यक सामान लेकर चलते थे किन्तु मुगल बहुत सामान साथ रखते थे।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मराठा सैनिकों में त्याग एवं बलिदान की भावना बलवती थी किन्तु मुगल सैनिकों में यह भावना दुर्बल थी। मुगल सेना में जो हिन्दू थे वे शिवाजी से कुछ सहानुभूति रखते थे किन्तु मुगल सैनिकों में पूरी सचाई एवं ईमानदारी का अभाव था।

मराठा अपने घर में और घर के निकट लड़ते थे। वे अपनी सुरक्षा एवं स्वतन्त्रता के लिये लड़ते थे। अतः उनका युद्ध राष्ट्रीय था। किन्तु मुगल आक्रमणकारी थे और वे अपनी राजधानी से दूर लड़ते थे। दक्षिण में मुगल सेनापतियों को सामानों एवं सुविधाओं का अभाव था। औरंगजेब जब दक्षिणी भारत में रहता था तो उत्तरी भारत में अराजकता फैलने लगती थी।

(४) शिवाजी का व्यक्तित्व—शिवाजी का व्यक्तित्व आकर्षक था। वे दूसरों को चुम्बक की तरह अपनी ओर खींचते थे। उनमें हृदय एवं मस्तिष्क के अनेक गुण भरे हुए थे। मनुष्य, सैनिक, राजनीतिज्ञ और शासक के रूप में हम उनकी सफलताओं पर दृष्टिपात कर चुके हैं। वे जन्मजात सैनिक एवं नेता थे। उनके अनुयायियों एवं देशवासियों का उनके नेतृत्व में गहरा विश्वास था। वे कोरे आदर्शवादी नहीं थे बल्कि व्यावहारिक राजनीतिज्ञ थे। उनमें व्यक्तित्व को परखने की अद्भुत क्षमता थी। अतः वे योग्य व्यक्तियों को ही राज्य या सेना में कोई पद देते थे। वे भलीभाँति समझते थे कि कब किसके साथ कैसा व्यवहार करना चाहिये। वे षड्यन्त्र रचने में कुशल थे और दुश्मनों की त्रुटियों से लाभ उठाने में नहीं चुकते थे। उनकी निर्णयात्मक शक्ति बहुत दृढ़ थी।

(५) औरंगजेब की त्रुटियाँ—हम देख चुके हैं कि औरंगजेब के चरित्र में बहुत त्रुटियाँ थीं। वह कठोर, संकीर्ण एवं धर्मांध था। उसमें दूरदर्शिता, राजनीतिक पटुता का अभाव था। वह एक साथ कई दुश्मनों से भिड़ जाता था। अतः किसी भी दुश्मन के विरुद्ध अपनी पूरी शक्ति नहीं लगा सकता था। वह किसी में विश्वास तो करता ही नहीं था। अतः वह अपने सैनिकों का प्रिय नहीं था। उसका दरबार षड्यन्त्र का केन्द्र था। उसे वीर राजपूतों का सहयोग नहीं मिला। वह स्वयं बहुत बूढ़ा भी हो गया था। अतः उसमें शिवाजी की स्फूर्ति का अभाव था।

अस्थायी राज्य की स्थापना के कारण

हम देख चुके हैं कि शिवाजी ने अपने परिश्रम से मराठा राज्य का निर्माण किया किन्तु उसका राज्य चिरस्थायी नहीं हो सका। शिवाजी के मरने के बाद शीघ्र ही मराठा राज्य छिन्न-भिन्न हो गया। इसके निम्नलिखित अनेक कारण थे:—

(१) समय का अभाव—१६७४ ई० में शिवाजी का राज्याभिषेक हुआ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इसके ६ वर्षों के बाद ही ५३ वर्ष की उम्र में शिवाजी की मृत्यु हो गयी। अतः राज्य में अधिक संगठन एवं सुधार के लिये शिवाजी को पर्याप्त समय नहीं मिला।

(२) दुश्मनों का विरोध—राज्याभिषेक के बाद भी शिवाजी के विरुद्ध दुश्मनों का विरोध जारी रहा। अतः संक्षिप्त अवधि में भी शिवाजी चैन से नहीं रहे और जब-तब दुश्मनों से लड़ते रहे।

(३) जातीय भेदभाव—जातीय भेदभाव भारतीय समाज का एक बड़ा कलंक रहा है। मराठों में भी जातीय भेदभाव का प्रचार था। ब्राह्मणों और गैर-ब्राह्मणों के बीच गहरी खाई थी। ब्राह्मण भी कई उपजातियों में विभक्त थे और उनमें भी आपस में मेलजोल नहीं था।

(४) कट्टरपंथी हिन्दुओं की प्रधानता—शिवाजी की अद्भुत सफलता से कट्टरपंथी हिन्दू बहुत ही प्रोत्साहित हुए। मुसलमानों के विरुद्ध उनमें प्रतिक्रिया हुई। इन हिन्दुओं में कर्मकांड एवं कृत्रिमता की प्रमुखता थी। ये धनी थे किन्तु गरीब इनसे सर्वथा भिन्न थे। अब इन धनी और गरीब दोनों वर्गों में भी भेद-भाव उत्पन्न होने लगा। शिवाजी के मरने के बाद इन कट्टरपंथी हिन्दुओं की प्रधानता होने लगी थी।

(५) वास्तविक एकता के लिये प्रयत्न का अभाव—उपर्युक्त कारणों से मराठों में वास्तविक एकता कायम नहीं हुई। सर यदुनाथ सरकार के शब्दों में "मराठा राज्य के निवासियों में जो एकता थी वह मौलिक नहीं बल्कि बनावटी एवं आकस्मिक थी; अतः ऐसी एकता खतरनाक थी।"[1] उनके मतानुसार शिवाजी या पेशवाओं के समय में वास्तविक एकता के लिये न तो शिक्षा का प्रचार हुआ और न कोई संगठित योजना का निर्माण हुआ।

(६) योग्य नेतृत्व का अभाव—मराठा राज्य में जो कुछ एकता उत्पन्न हुई थी वह शिवाजी के व्यक्तित्व पर निर्भर थी। उस एकता को कायम रखने के लिये शिवाजी जैसे नेता की ही जरूरत थी किन्तु शिवाजी के उत्तराधिकारी दिल एवं दिमाग में उनकी टक्कर के नहीं थे।

(७) शान्ति का अभाव—कहा जाता है कि युद्ध की अपेक्षा शान्ति की विजय कम गौरवपूर्ण नहीं होती है। शान्तिकाल में देश की धन-दौलत में वृद्धि होती है और संस्कृति का विकास होता है। लेकिन मराठा राज्य में बराबर ही युद्ध एवं अशान्ति का वातावरण कायम रहा। अतः आर्थिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्रों में ठोस प्रगति नहीं हो सकी।

---

1. The cohesion of the people in the Maratha state was not organic but artificial, accidental and therefore precarious.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(८) आर्थिक नींव की कमजोरी—मराठा राज्य की आर्थिक नींव कमजोर रह गयी। शिवाजी के समय में कृषि, व्यापार और व्यवसाय की उन्नति के लिये कोई ठोस कदम नहीं उठाया गया। मराठे अपनी आय के लिये लूटपाट पर ही अधिक निर्भर रहे। अतः राज्य समृद्धिशाली नहीं हो सका। धन के अभाव में बड़ी-बड़ी योजनाएँ भी न बन सकीं और न लागू हो सकीं।

(६) भूमि-व्यवस्था—भूमि के बहुत से टुकड़ों के लिये मराठा परिवार आपस में लड़ते-झगड़ते थे। शिवाजी ऐसे झगड़ों का निर्णय करते थे। जिसके विरुद्ध निर्णय होता था वह रंज होकर दुश्मनों के साथ सहानुभूति रखता था।

(१०) कूटनीति एवं षड्यन्त्रों पर निर्भरता—शिवाजी और बाजीराव प्रथम कूटनीति एवं षड्यन्त्र को महत्व देते थे। किन्तु कूटनीति एवं षड्यन्त्र के बल पर स्थायी राज्य का निर्माण नहीं हो सकता। शिवाजी के बाद मराठा सरदार इन चीजों को बहुत अधिक महत्व देने लगे 'मानो राज्य शतरंज का एक निष्क्रिय खेल हो।'

शिवाजी के उत्तराधिकारी

शम्भुजी (१६८०-८६)—शिवाजी को दो लड़के थे—शम्भुजी या शम्भाजी और राजाराम। शम्भुजी आलसी, विलासी और अयोग्य था। शिवाजी उससे बहुत असन्तुष्ट रहते थे और कुछ समय के लिये उन्होंने उसे किले में भी बन्द कर रखा था। किन्तु शिवाजी के मरने पर वही गद्दी पर बैठा। राजा होने के बाद उसने कई विरोधी सरदारों को और अपनी सौतेली माँ को मरवा दिया। वह भोग-विलास पर बहुत खर्च करने लगा। उसने उत्तरी भारत के एक ब्राह्मण—कलश को अपना पेशवा नियुक्त किया। कलश कवि एवं विद्वान था किन्तु सदाचारी नहीं था।

औरंगजेब का एक बागी पुत्र अकबर ने शम्भुजी के यहाँ शरण पायी थी। दोनों ने मिलकर औरंगजेब को पदच्युत करने के लिये एक योजना बनाई। किन्तु शम्भुजी ने तत्परता नहीं दिखाई। उधर औरंगजेब ने मराठा राज्य पर फिर हमला कर दिया। अब अकबर ईरान भागकर चला गया।

इस बीच औरंगजेब ने बीजापुर और गोलकुंडा पर अधिकार कर लिया। उसकी शक्ति बढ़ गयी। उसने मराठा राज्य पर भी तेजी से हमला किया। शम्भुजी एक किले में छिप गया। किन्तु किले पर मुगलों का अधिकार हो गया। शम्भुजी अपने पेशवा के साथ पकड़ लिये गये। दोनों औरंगजेब के सामने लाये गये। औरंगजेब ने शम्भुजी से राजकोष बताने और धर्म बदलने के लिये प्रस्ताव किया। शम्भुजी ने सम्राट के प्रस्तावों को ठुकरा दिया। अब उसका और उसके पेशवा का वध कर दिया गया।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

राजाराम (१६८९–१७००)—शम्भुजी के बाद उसका छोटा भाई राजाराम गद्दी पर बैठा। उसमें भी योग्यता का अभाव था फिर भी वह स्वाभिमानी था। मुगलों का आक्रमण जारी था। राजाराम जिंजी (कर्नाटक) के किले में छिप गया। इसके बाद मुगलों से मराठा संघर्ष का रूप लोकसंघर्ष में बदल गया। अर्थाभाव के कारण राजाराम ने फिर जागीरदारी प्रथा शुरू कर दी। मराठा सरदार मुगलों से छापेमार युद्ध करते रहे। मुगल तंग आ गये। इसी बीच १७०० ई० में राजाराम की मृत्यु हो गयी। मुगलों ने शम्भुजी के पुत्र साहु और उसकी माँ को गिरफ्तार कर लिया था।

तारावाई (१७००–१७०८)—राजाराम के मरने पर उसकी विधवा तारावाई ने अपने नाबालिग पुत्र को (शिवाजी द्वितीय) गद्दी पर बैठा दिया। वह स्वयं संरक्षिका के रूप में कार्य करने लगी। वह वीर एवं साहसी स्त्री थी। मराठों का लूटपाट जारी रहा। उन्होंने कई स्थानों को जीत लिया। उन्होंने शाही शिविर पर भी धावा बोल दिया। तारावाई अपने सैनिकों को खूब उत्साहित करती थी। इसी बीच १७०७ ई० में औरंगजेब की मृत्यु हो गयी।

साहुजी (१७०८–४९)—औरंगजेब का उत्तराधिकारी बहादुर शाह ने साहु को मुक्त कर दिया। साहु शम्भुजी का लड़का था और अपने को वास्तविक उत्तराधिकारी मानता था। उसने तारावाई को बन्दीगृह में (१७०८) डाल दिया और स्वयं गद्दी पर अधिकार कर लिया। किन्तु वह बहुत योग्य एवं चतुर नहीं था। उसके समय में पेशवा की शक्ति बहुत बढ़ गई। उसके मरने (१७४९) के बाद पेशवा के ही हाथ में शासनसूत्र चला आया।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अध्याय १३

सिक्खों का उत्कर्ष–गुरुगोविन्द सिंह

भूमिका—भारतवर्ष के इतिहास में सिक्खों का बड़ा ही महत्वपूर्ण स्थान है। इनका उदय धार्मिक सम्प्रदाय के रूप में १५ वीं सदी के चौथे चरण में हुआ। सल्तनत काल में १५ वीं सदी भक्ति आन्दोलन का युग था और उसी युग में सिक्ख धर्म एवं सम्प्रदाय का भी उदय हुआ। इसमें दस गुरु हुए। नानक इसके संस्थापक एवं प्रथम गुरु थे और गोविन्द सिंह अन्तिम दसवाँ गुरु थे। अकबर के समय तक (१६०५ ई०) यह सम्प्रदाय धार्मिक था किन्तु उसके बाद जहाँगीर के राज्य काल से यह राजनैतिक एवं सैनिक सम्प्रदाय में बदलने लगा। सिक्ख धर्म एवं सम्प्रदाय हिन्दू समाज का ही एक प्रमुख अंग है। सिक्ख का शाब्दिक अर्थ होता है शिष्य।

गुरु नानक (१४६६-१५३८)—नानक १४६६ ई० में लाहौर जिले के अन्दर नानकाना नामक स्थान पर पैदा हुए थे। तृप्ती इनकी माता थी और इनके पिता का नाम का कालु मेहता था। ये खत्री जाति के थे। इनके माँ-बाप ने इनकी पढ़ाई के लिये प्रबन्ध किया किन्तु इन्हें पढ़ने में मन नहीं लगता था। ये चिन्तन एवं मनन में लगे रहते थे। बाद में इनकी शादी कर दी गई और इन्हें बाल-बच्चे भी हुए। इन्होंने एक नौकरी भी शुरू की थी किन्तु गृहस्थाश्रम एवं सांसारिकता के जाल में ये फँस नहीं सके। ये चिन्तन करते रहे और अन्त में इन्हें ज्ञान प्राप्त हुआ। उस समय ये ४० वर्ष के थे।

नानक के उपदेश बड़े ही उपयोगी थे। ये कबीर की तरह समन्वय एवं समानता में विश्वास करते थे। ये आडम्बरपूर्ण धर्म से घृणा करते थे। ये ब्राह्मणों की श्रेष्ठता, पुरोहितों के कर्मकांड और मुल्लाओं की प्रधानता के विरोधी थे। ये शुद्ध धर्म चाहते थे जिसमें हृदय की शुद्धता, विचारों की पवित्रता एवं सत्कर्मों पर विशेष जोर दिया जाता था। उन्होंने ईश्वर भक्ति पर बहुत जोर दिया और इसके लिये आत्मसमर्पण कर देने की सलाह दी। वे जाति-पांति के

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भी विरोधी थे। वे कहते थे—जात-पाँत पूछै नहीं कोई, हरि को भजै सो हरि का होई। संक्षेप में सात्विक जीवन और उच्च विचार ही उनकी शिक्षा का उद्देश्य था।

नानक ने अपने उपदेशों के प्रचार के लिये कई स्थानों का भ्रमण किया। कहा जाता है कि इन्होंने इब्राहीम लोदी की कमजोरी और बाबर के आगमन को देखकर चिन्ता प्रकट की थी। बाबर ने नानक को बन्दीगृह में डाल दिया किन्तु जब वह अच्छी तरह समझ गया कि नानक साधु-सन्त है तो उसने उन्हें मुक्त कर दिया। १५३८ ई० में ६६ वर्ष की उम्र में गुरु नानक की मृत्यु हो गई। मरने से पूर्व उन्होंने अंगद नामक एक खत्री को अपना उत्तराधिकारी नियुक्त कर दिया था।

गुरु अंगद (१५३८-५२)—गुरु अंगद ने अपने पूज्य गुरु नानक के उपदेशों का पालन एवं प्रचार किया। उन्होंने गुरुमुखी लिपिका भी प्रचार किया और उनके पथ-प्रदर्शन में नानक का एक जीवनचरित्र लिखा गया। अंगद ने भी सदाचार एवं अनुशासन पर बहुत जोर दिया।

गुरु अमरदास—अमरदास (१५५२-७४) तीसरा गुरु हुए। इन्होंने देश में गुरु के प्रतिनिधियों की गद्दियाँ स्थापित कीं। गुरु प्रत्येक गद्दी के लिये एक प्रभावशाली सिक्ख को नियुक्त करने लगा। अमरदास ने सिक्खों में कुछ ऐसी प्रथाओं को चलाया जो हिन्दू समाज में प्रचलित नहीं थीं।

गुरु रामदास (१५७४-८१)—रामदास चौथा गुरु हुए। ये गुरु अमरदास के दामाद लगते थे। ये भी अपने पूर्व गुरुओं के आदर्शों पर चलते रहे। अकबर इन्हें बहुत आदर की दृष्टि से देखता था। उसने रामदास को कुछ जमीन जागीर के रूप में दे दी। वहीं पर एक तालाब और स्वर्ण मंदिर का निर्माण हुआ। धीरे-धीरे वहाँ एक अच्छा नगर बस गया। वह नगर अमृतसर के नाम से प्रसिद्ध है।

गुरु अर्जुन (१५८१-१६०६)—अर्जुन पाँचवाँ गुरु हुए। इन्हीं के समय से सिक्खों और मुगलों में संघर्ष का प्रारंभ हुआ। ये प्रथम गुरु थे जिन्होंने राजनीति में अभिरुचि दिखलायी। ये २५ वर्ष तक अपने पद पर बने रहे।

गुरु अर्जुन बड़े ही निर्भीक एवं योग्य व्यक्ति थे। सिक्ख समुदाय पर इनका गहरा प्रभाव था। इनमें मौलिक प्रतिभा थी। इन्होंने सिक्खों को संगठित किया और उन्हें शक्तिशाली बनाया। वे स्वयं भड़कीली वेश-भूषा धारण करने लगे। उन्होंने सिक्खों को व्यापार करने और धन कमाने के लिये प्रोत्साहन दिया। उन्होंने सिक्खों पर एक धार्मिक कर भी लगाया। अपनी आमदनी का दसांश

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

गुरु को देने के लिये आवश्यक कर दिया गया। इस तरह कर एवं दान की रकम से अमृतसर का कोष बड़ी तेजी से भरने लगा। अर्जुन ने गुरु पद को वंशानुगत बना दिया। उन्होंने कई तालाबों को खुदवाया और नगरों को स्थापित किया।

गुरु अर्जुन ने सिक्खों के धर्म-ग्रन्थ का संकलन किया। इसे आदिग्रन्थ कहते हैं। इसमें पूर्व गुरुओं तथा प्रमुख सन्तों के उपदेश का संग्रह किया गया। यह सिक्खों का मौलिक धार्मिक ग्रन्थ है जिसे वे बहुत आदर की दृष्टि से देखते हैं। इस तरह अनेक सुधारों एवं कार्यों के कारण गुरु अर्जुन की लोकप्रियता और अनुयायियों की संख्या बढ़ने लगी। इससे मुगल सम्राट जहाँगीर का ध्यान भी गुरु अर्जुन की ओर आकृष्ट होने लगा।

गुरु अर्जुन राजनीतिक क्षेत्र में भी प्रवेश कर गये। जहाँगीर का लड़का शाहजादा खुसरो ने विद्रोह किया। अर्जुन ने उसे अपने यहाँ शरण दी, उसे आर्थिक सहायता दी और उसे सफलता के लिये आशीर्वाद भी दिया। अब जहाँगीर बड़ा क्रुद्ध हुआ और उसने अर्जुन को कैद कर लिया। अर्जुन की सारी सम्पत्ति भी जब्त कर ली गई और उस पर दो लाख रुपये का अर्थदंड भी लगा दिया गया। अर्जुन ने स्पष्ट रूप से कह दिया कि "यदि तुझे धन लेना है तो जो कुछ मेरे पास है उसे तुम ले लो किन्तु यदि दंड के रूप में तुम धन लेना चाहते हो तब तो मैं तुझे एक कौड़ी भी नहीं दूँगा क्योंकि अर्थदंड दुष्ट सांसारिक पुरुषों पर लगाया जाता है, धार्मिक प्रचारकों एवं सन्तों पर नहीं।" इस पर जहाँगीर आपे से बाहर हो गया और उसने गुरु अर्जुन का वध कर देने के लिये आदेश दे दिया। १६०६ ई० में गुरु अर्जुन की फाँसी हो गई।

अर्जुन की हत्या का आधार धार्मिक था या राजनैतिक—इस सम्बन्ध में विद्वानों में मतभेद है। जहाँगीर की आत्मकथा से मालूम होता है कि वह अर्जुन की लोकप्रियता से क्षुब्ध था और उसे दंड देना चाहता था। उसने लिखा है कि "मैं गुरु के नवीन सम्प्रदाय की लोकप्रियता के कारण उनके विरुद्ध कोई कार्यवाही करने के लिये सोच रहा था।" अर्जुन के द्वारा विद्रोही खुसरो को मदद देने की बात से दंड देने के लिये एक बहाना मिल गया। इस दृष्टि से अर्जुन के वध का आधार धार्मिक कहा जा सकता है लेकिन अधिकांश विद्वान अर्जुन के वध का कारण राजनैतिक ही मानते हैं। स्मिथ का कहना है कि "यह दंड राजद्रोह के लिये दिया गया था। इसे धार्मिक अत्याचार का उदाहरण नहीं कह सकते।" डा० बेनी प्रसाद का कथन है कि "इस मृत्युदंड का मुख्य कारण राजनैतिक था। केवल एक ही व्यक्ति की फाँसी हुई। न किसी और

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सिक्ख को सताया गया था और न सिक्ख धर्म पर ही किसी प्रकार का प्रतिबन्ध लगाया गया था। यदि गुरु अर्जुन ने भी विद्रोही का पक्ष न लिया होता तो वह भी शान्तिपूर्वक अपने दिनों को व्यतीत कर सकता था।"[1]

गुरु अर्जुन के बध का कारण जो भी हो, जहाँगीर का यह कार्य बहुत ही अनुचित एवं गलत था। डा० बेनी प्रसाद भी इसे जहाँगीर की एक महान भूल मानते हैं। अर्जुन की शहीदी के कारण सिक्खों और मुगलों का सम्बन्ध बहुत कटु हो गया और दोनों में स्थायी शत्रुता का सूत्रपात हुआ। इससे मुगलों की बड़ी नुकसानी हुई। अतः जहाँगीर की यह भूल मुगलों के लिये बहुत ही घातक सिद्ध हुई।

गुरु हरगोविन्द (१६०६-४५)—गुरु अर्जुन के पुत्र हरगोविन्द छठे गुरु हुए। अपने पिता की हत्या के कारण इनका खून खौलने लगा था। मुगलों से इसका बदला लेने के लिये उन्होंने दृढ़ निश्चय कर लिया। हरगोविन्द ने अर्जुन के कार्य को और आगे बढ़ाया। अर्जुन ने सिक्ख सम्प्रदाय की आर्थिक स्थिति मजबूत की तो हरगोविन्द ने सैनिक एवं राजनीतिक स्थिति को सुदृढ़ किया। कनिंघम का कथन है कि "हरगोविन्द के समय में सिक्खों की संख्या में बहुत वृद्धि हुई। अर्जुन की आर्थिक व्यवस्था और उनके पुत्र के सैनिक संगठन ने सिक्खों को साम्राज्य के अन्दर एक अलग राज्य के रूप में बदल दिया।"

गुरु हरगोविन्द ने सच्चा बादशाह की पदवी ग्रहण की। उन्होंने शस्त्र, छत्र आदि राजचिन्ह भी धारण किया। उन्होंने भेंट में हथियार, घोड़े आदि देने के लिये प्रोत्साहित किया। गुरु की रक्षा के लिये अंगरक्षक तैयार किये गये। गुरु न्यायपति का भी कार्य करने लगे। इस तरह सिक्ख सम्प्रदाय राजनैतिक संगठन के रूप में बदलने लगा।

जहाँगीर ने हरगोविन्द को गिरफ्तार कर लिया और उसे १२ वर्षों तक ग्वालियर के किले में बन्द रखा। शाहजहाँ के समय में गुरु ने मुगलों के विरुद्ध तलवार उठा ली। तीन बार उन्होंने मुगलों को परास्त भी किया किन्तु अन्तिम बार वे स्वयं हार गये। उन्होंने काश्मीर में शरण पायी और १६४५ ई० में उनका देहावसान हो गया।

---

1. It is only fair to recognize that the whole affair amounts to a single execution due primarily to political reasons. No other Sikhs were molested. No interdict was laid on the Sikh faith. Guru Arjun himself would have ended his days in peace if he had not espoused the cause of a rebel.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हरिराय और हरिकिशन—गुरु हरगोविन्द के बाद हरिराय (१६४५-६१) और हरिकिशन (१६६१–६४) सातवें तथा आठवें गुरु हुए। हरिराय ने दारा के प्रति सहानुभूति दिखलायी थी। अतः औरंगजेब उनसे रंज रहता था किन्तु उनके समय में कोई महत्वपूर्ण घटना नहीं हुई। हरिराय के मरने पर उनका पुत्र हरिकिशन गुरु की गद्दी पर आसीन हुए किन्तु बाल्यावस्था में ही उनकी मृत्यु हो गयी।

गुरु तेगबहादुर (१६६४-७५)—तेगबहादुर नवें गुरु हुए। ये आनन्द पुर (काश्मीर) में रहते थे। औरंगजेब तो कट्टर सुन्नी था और वह सिक्खों की उन्नति से चिन्तित था। वह तेगबहादुर के विरुद्ध कदम उठाना चाहता था किन्तु राम सिंह के प्रभाव से शीघ्र कुछ करना कठिन हो गया। राम सिंह तेग बहादुर को कुछ समय के लिये अपने साथ आसाम लेकर चले गये। तेगबहादुर का परिवार कुछ समय के लिये पटना में ठहरा। उसी समय उन्हें एक पुत्र-रत्न पैदा हुआ जो गुरु गोविन्द सिंह के नाम से प्रसिद्ध हुआ। उधर औरंगजेब हिन्दू-धर्म विरोधी कार्य करने लगा। आसाम से लौटने पर तेगबहादुर ने औरंगजेब की हिन्दू धर्म विरोधी नीति का विरोध किया। सिक्ख सम्प्रदाय की लोकप्रियता बढ़ने लगी। तेगबहादुर ने काश्मीर के हिन्दुओं को भी मुगलों के विरुद्ध उत्तेजित किया।

अब औरंगजेब तेग बहादुर को दिल्ली आने के लिये आमंत्रित किया। दिल्ली पहुँचने पर औरंगजेब ने उन्हें इस्लाम धर्म स्वीकार करने के लिये कहा। अस्वीकार करने पर उसने तेग बहादुर का बध करा दिया।

इस तरह गुरु तेग बहादुर की हत्या औरंगजेब की धार्मिक असहिष्णुता का परिणाम थी। इससे हिन्दुओं में प्रतिशोध की भावना बलवती हुई।

गुरु गोविन्द सिंह

(१६७५-१७०८)

गुरु गोविन्द सिंह सिक्खों के अन्तिम दसवाँ गुरु थे। ये तेग बहादुर के पुत्र थे। इनका जन्म १६६६ ई० (२६ दिसम्बर) में बिहार राज्य की राजधानी पटना में हुआ था। इनके जन्मस्थान पर गुरुद्वारा है और वहाँ सिक्खों का जमघट लगा रहता है। ४२ वर्ष की ही उम्र में उनके जीवन का अन्त हो गया। इनके जीवन काल (१६६६–१७०८) को ३ भागों में बाँट सकते हैं—१६६६–७५, १६७५–६६ और १६६६–१७०८.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बाल्यावस्था—पहला काल (१६६६–७५) बाल्यावस्था का काल है। तेग बहादुर अपने परिवार को पटना में छोड़कर मिर्जा राजा राम सिंह के साथ आसाम गये थे। तब तक माता (गुजरी) और मामा की देखरेख में गोविन्द सिंह का पालन-पोषण होता रहा। तेग बहादुर का परिवार लगभग ७ वर्षों तक पटना में रहा। बीच-बीच में तेगबहादुर भी आते-जाते रहे। १६७३ ई० में सारा परिवार पटना से आनन्दपुर चला गया। बालक गोविन्द की शिक्षा के लिये प्रबन्ध हुआ। लेकिन दो ही वर्ष के बाद औरंगजेब ने इनके पिता को मरवा डाला। गोविन्द सिंह अभी ६ वर्ष के बालक थे। अब वे गुरु-गद्दी पर आसीन हुए।

पूर्व खालसा काल—गोविन्द सिंह के जीवन का दूसरा काल पूर्व खालसा काल (१६७५–६६) कहलाता है। मुगलों से अपने पिता के वध का बदला लेने के लिये गोविन्द सिंह का खून खौल रहा था। ये समझते थे कि मुगलों के साथ उनका युद्ध अनिवार्य है। अतः मुगलों की विघ्न-बाधाओं से बचने के लिये इन्होंने अपने परम्परागत स्थान-माखोवाल—को छोड़ दिया। ये आधुनिक हिमाचल प्रदेश के पहाड़ी क्षेत्र में चले गये और यमुना नदी के तट पर पाउठा में अपना डेरा डाले।

गुरुजी दो तरफ से हिन्दू समाज पर संकट का अनुभव करते थे। पहला संकट ब्राह्मणों की ओर से था। ब्राह्मण अन्धविश्वास एवं कर्मकांड का प्रचार कर हिन्दू समाज की बुराई कर रहे थे। दूसरा संकट मुगलों की ओर से था। मुगल हिन्दू समाज एवं धर्म पर तरह-तरह के अत्याचार कर रहे थे। गुरुजी ने हिन्दू समाज को इन दोनों संकटों से बचाने का दृढ़ संकल्प किया।

पहले संकट को दूर करने के लिये गुरुजी ने हिन्दू समाज में सुधार लाने का प्रयास किया। हिन्दू लोगों में आत्मविश्वास एवं आत्मनिर्भरता की भावना का अभाव दीख पड़ता था। गुरुजी ने हिन्दुओं में इस भावना को जगाया। रामायण, महाभारत तथा अन्य पौराणिक ग्रन्थों के प्रमुख अंशों का पंजाबी एवं हिन्दी में अनुवाद कराया गया और सर्वसाधारण में इनका वितरण किया गया। गुरुजी ने हिन्दी एवं पंजाबी में वीररस की कविताओं को भी लिखा और इनका प्रचार किया। इस तरह साहित्य के द्वारा गुरुजी ने सिक्खों तथा अन्य हिन्दुओं का मानसिक स्तर उन्नत किया। दूसरे संकट का सामना करने के लिये गुरुजी ने सिक्खों के शारीरिक विकास पर जोर दिया। अतः उनके खेल-कूद एवं व्यायाम पर विशेष ध्यान दिया जाने लगा और उन्हें कुश्ती लड़ने, घोड़े पर चढ़ने तथा तीर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

धीरे-धीरे खालसा का विस्तार होने लगा। गुरु के सच्चे अनुयायियों की संख्या दिन-प्रतिदिन बढ़ने लगी। सभी सिक्खों के लिये उपर्युक्त नियम अनिवार्य थे। इस तरह बहादुर एव साहसी सिक्खों की एक सेना तैयार हो गयी। अब गुरु गोविन्द सिंह के जीवन का तीसरा काल (१६६६–१७०८) शुरू हुआ। इसे उत्तर खालसा काल कहते हैं। सिक्ख जाति वीर एवं सैनिक जाति में परिवर्तित हो गई। गुरु गोविन्द सिंह समानता एवं भाईचारे का प्रबल समर्थक थे। अतः उन्होंने खालसा और गुरु में भी कोई भेदभाव नहीं रखा।

पहाड़ी राजाओं से संघर्ष—गुरु गोविन्द सिंह की बढ़ती हुई शक्ति को देखकर पहाड़ी राजा फिर भयभीत होने लगे। उन्होंने आनन्दपुर पर हमला कर दिया (१७०३) किन्तु वे सिक्खों से परास्त

मुगलों से संघर्ष—अब पहाड़ी क्षेत्र के पराजित राजाओं ने औरंगजेब से मदद माँगी। सरहिन्द के सूबेदार वजीर खाँ को सिक्खों को कुचलने का भार सौंपा गया। मुगलों ने आनन्दपुर को घेर लिया। कई दिनों तक घेरा जारी रहा। सिक्ख रसद की कमी से भूखों छटपटाने लगे। मुगल भी घेरा से ऊबने लगे थे। अतः सिक्खों को कहा गया कि यदि वे चाहें तो आनन्दपुर से शान्तिपूर्वक बाहर चले जायँ। सिक्खों ने मुगलों की बात में विश्वास कर लिया। किन्तु जब वे चलने लगे तो मुगलों ने पीछे से उन पर हमला कर दिया। मुगलों और पहाड़ी राजाओं ने विश्वासघात किया। गुरुजी की माता और उनके दो छोटे पुत्र[१] पकड़ लिये गये। गुरुजी किसी तरह बच गये। दोनों पुत्रों को इस्लाम धर्म स्वीकार कर लेने के लिये आदेश दिया गया। अस्वीकार करने पर दोनों ही दीवार में चुन दिये गये। अब गुरुजी की माता का भी देहान्त हो गया।

अब घूमते हुए गुरु गोविन्द सिंह चमकौर नामक स्थान पर पहुँचे। वहाँ फिर मुगलों से संघर्ष हुआ। गुरुजी के पास केवल ४० सिक्ख थे। फिर भी सिक्खों ने डटकर मुगलों का सामना किया। इस युद्ध में गुरुजी के दो बड़े पुत्र[२] और तीन प्यारे सिक्ख बलिदान हो गये। गुरुजी निकल भागे। अब वे कुछ दिनों तक भटकते रहे। मुगल भी उनके पीछे परेशान रहे। खिदराना नामक स्थान पर मुगलों से फिर संघर्ष हो गया। यह अन्तिम संघर्ष था। इसमें गुरु गोविन्द सिंह को सफलता भी मिली। मुगल हार गये।

---

१ फतह सिंह और जोरावर सिंह

२ अजीत सिंह और जुझार सिंह

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

और तलवार चलाने की शिक्षा दी जाने लगी। सैनिक शिक्षा के लिये कुछ पठानों को भी नौकरी में रख लिया गया।

पहाड़ी राजाओं से युद्ध—गुरु गोविन्द सिंह की तैयारी देखकर पहाड़ी राजा भयभीत होने लगे। उनकी सुरक्षा संदेहात्मक हो गयी। अतः कुछ राजाओं ने मिलकर गुरु के विरुद्ध युद्ध घोषित कर दिया। भंगनी नामक स्थान पर युद्ध (१६८६) हुआ। गुरु गोविन्द सिंह की ही विजय हुई। इस विजय से सिक्खों में नवीन साहस एवं स्फूर्ति का उदय हुआ। पहाड़ी राजा भी गुरुजी की शक्ति को देखकर बहुत प्रभावित हुए। अब वे गुरुजी से मित्रता के लिये उत्सुक हो उठे और यह मित्रता कायम भी हुई।

मुगलों से युद्ध—गुरुजी की सफलता ने औरंगजेब के सिर में दर्द पैदा कर दिया। गुरुजी और पहाड़ी राजाओं के विरुद्ध एक विशाल सेना भेजी गई। इस समय गुरुजी पाउठा से आनन्दपुर चले गये थे। वहाँ आवन्दपुर की किलेबन्दी कर दी गई और चार अन्य दुर्गों का भी निर्माण कराया गया। मुगलों के साथ नदौन में युद्ध हुआ। मुगल परास्त हुए। इसके बाद औरंगजेब ने अपने पुत्र शाहजादा मुअज्जम के अधीन एक सेना भेजी। मुअज्जम पहाड़ी राजाओं को दबाने में सफल हुआ। किन्तु वह गुरु गोविन्द सिंह को दबाने में समर्थ नहीं हो सका।

खालसा की स्थापना—इस समय गुरु गोविन्द सिंह ने सिक्खों में कमजोरी का अनुभव किया। अतः उन्होंने नये सिरे से उनका संगठन करने के लिये प्रयास किया। सिक्खों की एक विशाल सभा बुलायी गयी। उसमें लगभग ८० हजार सिक्ख इकट्ठे हुए। गुरुजी ने सिक्खों की धार्मिक भावना को उभाड़ा। उन्होंने हाथ में एक तलवार लेकर कहा—मुझे कुछ ऐसे सिक्ख चाहिये जो इस तलवार के द्वारा खुशी से बलिदान हो सकें। गुरुजी की यह बात सुनकर पहले तो सभी लोग चुप रहे किन्तु धीरे-धीरे एक-एक करके पाँच सिक्ख सामने उपस्थित हुए। गुरुजी ने उनकी परीक्षा ली और वे सफल घोषित हुए। वे गुरु के प्यारे हुए और उन्हें पाँच प्यारों की संज्ञा दी गई। वे ही खालसा या खालिस (शुद्ध) भी कहलाये। उनके लिये गुरु ने निम्नलिखित नियम बनायाः—

(१) केश, कंघी, कच्छा, कड़ा और कृपाण धारण करना, (२) अपने नाम के अन्त में 'सिंह' जोड़ना और सिंह या शेर की तरह साहस दिखलाना, (३) आपस के सभी भेदभाव को दूर कर भाईचारे का सम्बन्ध रखना, (४) मांस खाने, तम्बाकू पीने और पर स्त्री गमन पर प्रतिबन्ध, (५) सवेरे स्नान करके गुरुओं के वचनों का पाठ और ईश्वर-स्मरण।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इसके बाद गुरु गोविन्द सिंह को कुछ समय तक विश्राम मिला। १७०७ ई० में औरंगजेब की मृत्यु हो गयी। गुरु गोविन्द सिंह तलवंडी नामक स्थान पर एक वर्ष तक ठहरे। उस अवधि में आदि गुरु ग्रन्थ का सम्पादन हुआ। उसमें कुछ भाग बढ़ाया गया जिसे दसवें गुरु का ग्रन्थ कहा गया।

गुरु गोविन्द सिंह का वध—औरंगजेब के बाद बहादुरशाह सम्राट की गद्दी पर बैठा। उसने सिक्खों के साथ मित्रतापूर्ण सम्बन्ध कायम रखा। एक बार बहादुरशाह दक्षिण की ओर गया तो उसने गुरुगोविन्द सिंह को भी उधर चलने के लिये प्रभावित किया। गुरु गोविन्द सिंह दक्षिण में गये और एक स्थान (नांदेड़) पर ठहरे। वहीं एक दुश्मन पठान ने गुरुजी का वध (१७०८ ई०) कर दिया।

गुरु गोविन्द सिंह का मूल्यांकन

भारत के इतिहास में गुरु गोविन्द सिंह का बड़ा ही महत्त्वपूर्ण स्थान है। जैसे शिवाजी ने मराठों का संगठन किया वैसे ही गुरु गोविन्द सिंह ने भी सिक्खों का संगठन किया। शिवाजी की तरह गुरुगोविन्द सिंह ने भी हिन्दू धर्म एवं समाज की बहुमूल्य सेवा की। उन्होंने कायरों को वीर बना दिया और दलितों तथा अछूतों को ऊपर उठाया। उन्होंने सिक्खों और अन्य हिन्दुओं में राष्ट्रीय भावना को जाग्रत किया। उन्होंने मुगलों की सत्ता को चुनौती दी और उनके साथ खुला संघर्ष किया।

गुरु गोविन्द सिंह हिन्दू धर्म के समर्थक थे किन्तु कट्टर नहीं थे। उन्हें मुगलों की धर्मान्धता एवं अत्याचार से विरोध था—समस्त मुसलमानों से नहीं। उन्होंने मुगलों से युद्ध किया तो पर्वतीय हिन्दू राजाओं से भी युद्ध किया। कुछ मुसलमान भी उनके भक्त एवं रक्षक थे। वे सिक्खों को चेतावनी देते थे कि तलवार से दुर्बलों की रक्षा की जाय, अनुचित ढंग से इसका व्यवहार नहीं किया जाय।

गुरु गोविन्द सिंह धर्म एवं समाज के सुधारक थे। उन्होंने हिन्दू धर्म में प्रचलित बुराइयों एवं पाखंडों को दूर करने का प्रयत्न किया।

इस तरह गुरु गोविन्द सिंह एक वीर सैनिक, धार्मिक नेता और समाज सुधारक थे। वे साहित्यिक एवं कवि भी थे। वे पंजाबी, हिन्दी और फारसी के अच्छे ज्ञाता थे।

गुरु गोविन्द सिंह दूरदर्शी एवं राजनीतिज्ञ भी थे। उन्होंने मुगलों की नीति को घातक समझा, समय की माँग को परखा और मुगलों के अत्याचार को मिटाने

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

के लिये कमर कस ली। उन्होंने यह भी अनुभव किया कि गुरु की गद्दी को लेकर सिक्खों में परस्पर द्वेष बढ़ेगा। अतः उन्होंने गुरु-पद को उठा दिया। खालसा का नेतृत्व गुरुग्रन्थ साहब की अध्यक्षता में सिक्ख संगत को सौंप दिया गया। उनका कहना था कि "जो गुरु को देखना चाहता है वह गुरु नानक के ग्रन्थ को देखे। जहाँ कहीं भी ५ सिक्ख इकट्ठे होंगे वहीं मैं स्वयं निवास करूँगा।" संगत के बहुमत द्वारा निर्णय करने पर जोर दिया गया। इस तरह पंचायत व्यवस्था को अधिक महत्व दिया गया। श्री इन्दुभूषण बनर्जी के शब्दों में भारत के ऐतिहासिक क्षेत्र में एक नयी प्रभावोत्पादक शक्ति का प्रादुर्भाव हुआ। लेकिन सर यदुनाथ सरकार का मत है कि खालसा के निर्माण से सिक्ख अधिक सांसारिक एवं सैनिक बन गये और उनकी प्रतिभा एवं विकास का क्षेत्र संकुचित हो गया। उनमें आध्यात्मिकता का अभाव हो गया।

बन्दा (१७०८-१५)

प्रारम्भिक जीवन—बन्दा डोगरा राजपूत था। उसका प्रारंभिक नाम था लछमनदास। उसे शिकार का बड़ा शौक था। उसने एकबार एक गर्भवती हिरणी को मार डाला। उसे देखकर लछमनदास का दिल द्रवित हो गया। तब से वह वैरागी हो गया और माधोदास कहलाने लगा। इसके बाद वह दक्षिण चला गया और नांदेड़ में एक मठ बनाकर रहने लगा। वहीं उसे गुरु गोविन्द सिंह से भेंट हुई। वह गुरुजी से बहुत प्रभावित हुआ और उनका शिष्य बन गया। अब वह बन्दा (दास) कहलाने लगा। गुरु गोविन्द सिंह ने सिक्खों का नेतृत्व करने का भार उसी बन्दा पर सौंप दिया। इसके बाद बन्दा पंजाब में चला आया और वह सिक्खों का पथ प्रदर्शन करने लगा। सिक्ख भी उसके झंडे के नीचे आने लगे।

बन्दा की लड़ाइयाँ—अब बन्दा सिक्खों के दुश्मनों के पीछे पड़ गया। उसने साढौरा के शासक उस्मान खाँ पर आक्रमण किया। उस्मान खाँ हार गया। बहुत से मुसलमान मौत के घाट उतार दिये गये। साढौरा पर बन्दा ने अधिकार कर लिया। इसके बाद मुखलिसपुर पर अधिकार हुआ और लोहगढ़ नामक एक किले का निर्माण हुआ।

सरहिन्द पर अधिकार—सरहिन्द पर बन्दा की विजय बहुत बड़ी उपलब्धि मानी जाती है। सरहिन्द का शासक वजीर खाँ ने ही गुरु गोविन्द सिंह के पुत्रों की हत्या की थी। अब वजीर खाँ पर हमला हुआ। उसे मार कर उसकी लाश को पेड़ में पक्षियों के खा जाने के लिये लटका दिया गया। नगर के बहुत से मुसलमानों का भी वध हुआ। बच्चे, स्त्री, मुल्ला, मौलवी कोई भी नहीं बच

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सका। लतीफ ने उस दृश्य का मार्मिक शब्दों में वर्णन किया है। सरहिन्द पर सिक्खों का अधिकार हो गया (१७१० ई०)।

इसके बाद जालंधर, अमृतसर, सहारनपुर आदि स्थानों पर सिक्खों ने अधिकार कर लिया।

शासन प्रबन्ध—बन्दा सैनिक ही नहीं, शासक भी था। उसने विजित राज्यों का संगठन भी किया। बन्दा ने बाजसिंह को सरहिन्द का सूबेदार बनाया। बहुत से मुस्लिम कर्मचारियों को हटा दिया गया और हिन्दू कर्मचारियों को नियुक्त कर दिया गया। वह स्वयं लौहगढ़ के किले में रहने लगा। उसने अपने गुरु के नाम सिक्के को चलाया। उसने एक नवीन मुहर का भी प्रचार किया। उसने अपने राज्य में जमींदारी प्रथा को भी उठा दिया।

सिक्खों की हार—बन्दा के कारनामों से मुगल सम्राट बहादुरशाह बड़ा क्रुद्ध था। बहादुरशाह ने अमीन खाँ के अधीन बन्दा के विरुद्ध एक सेना भेजी। लौहगढ़ को घेर लिया गया। सिक्ख हार गये किन्तु बन्दा बचकर भाग निकला और पहाड़ों में जा छिपा। बहादुरशाह बन्दा को पकड़ने के लिये परेशान रहा किन्तु सफल न हो सका।

बहादुरशाह के मरने के बाद बन्दा ने पहाड़ों से निकलकर लौहगढ़ को फिर ले लिया और सरहिन्द को खूब लूटा। इस बीच बहादुरशाह मर गया। फरुख-सियर ने सिक्खों को दबाने का बीड़ा उठाया। उसने अब्दुल सयद के नेतृत्व में सिक्खों के विरुद्ध एक विशाल सेना भेजी। गुरुदासपुर के किले में बन्दा घेर लिया गया। मुगलों और सिक्खों में घमासान लड़ाई हुई। ८ महीने तक लड़ाई जारी रही। अन्त में सिक्ख हार गये। बन्दा अपने ७०० सहकर्मियों के साथ पकड़ लिया गया।

बन्दी सिक्खों के साथ अपमानजनक व्यवहार किया गया। पहले उन्हें दिल्ली नगर में घुमाया गया और उसके बाद (१७१६) वे सभी मार डाले गये। बन्दा का वध हो गया और उसी के सामने उसकी पुत्री की भी हत्या कर दी गई।

बन्दा के बाद सिक्खों की स्थिति—बन्दा के मरने के बाद सिक्खों की स्थिति बिगड़ने लगी। अब सुयोग्य नेता का अभाव हो गया। मुगल सिक्खों को तंग करते रहे। लेकिन मुगलों की स्थिति भी कोई अच्छी नहीं थी। नादिरशाह और अहमदशाह के हमलों से मुगल साम्राज्य की स्थिति और भी अधिक खराब होने लगी। सिक्खों को अपनी स्थिति सुधारने का मौका मिल गया। उनमें धैर्य

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

एवं साहस की कमी नहीं थी। पंजाब पर अधिकार करने के लिये सिक्खों के प्रयत्न जारी रहे। उन्होंने पंजाब से अफगानों को खदेड़ दिया और अपना अधिकार जमा लिया। अहमदशाह अब्दाली के लौट जाने के बाद सिक्खों ने पंजाब को आपस में बाँट लिया और १२ मिस्लों की स्थापना हुई। आगे चलकर अंग्रेजी शासन काल में रणजीत सिंह ने सभी मिस्लों को मिलाकर पंजाब में एक शक्तिशाली राज्य स्थापित किया।

⊙

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अध्याय १४

मुगल साम्राज्य का पतन

१५२६ और १७०७ ई० के बीच मुगल वंश में ६ सम्राट हुए—बाबर, हुमायूँ, अकबर, जहाँगीर, शाहजहाँ और औरंगजेब। इन सम्राटों को महान् मुगल सम्राट कहते हैं। १७०७ ई० के बाद भी १८५८ ई० तक मुगल साम्राज्य कायम रहा और इस अवधि में कई सम्राट गद्दी पर बैठे किन्तु वे सभी साधारण श्रेणी के सम्राट थे। इन सम्राटों को उत्तरकालीन मुगल सम्राट कहते हैं। इनके समय में मुगल साम्राज्य दिन-प्रतिदिन पतन की ही ओर अग्रसर होता रहा।

उत्तरकालीन मुगल सम्राट—औरंगजेब को ५ लड़के थे। उनमें दो—मुहम्मद और अकबर १७०७ ई० के पहले ही मर चुके थे। औरंगजेब के मरने के बाद ३ पुत्र बचे थे—मुअज्जम, आजम और कामबख्स। पहला काबुल का, दूसरा गुजरात का और तीसरा बीजापुर का सूबेदार था। उत्तराधिकार युद्ध को रोकने के ख्याल से औरंगजेब ने एक वसीयत लिख दी थी। किन्तु उसके बावजूद तीनों भाइयों में युद्ध हो ही गया। उसमें मुअज्जम सफल हुआ और बहादुर शाह के नाम से गद्दी पर बैठा।

बहादुर शाह ने ५ वर्षों (१७०७–१२) तक राज्य किया। उसने साम्राज्य की एकता को किसी तरह बनाये रखा। किन्तु धार्मिक दृष्टि से वह भी अनुदार था। वह ६३ वर्ष का बूढ़ा था। अतः १७१२ ई० में उसकी मृत्यु हो गयी। उसके ४ लड़के थे। **जहाँदार शाह** सबसे बड़ा था। उसने तीन भाइयों को मार कर गद्दी पर अधिकार कर लिया। वह अयोग्य, विलासी और क्रूर था। वह एक ही वर्ष तक (१७१२–१३) राज्य भोग सका। उसके भतीजा फरूखसियर ने उसे मरवा दिया और गद्दी पर अधिकार कर लिया।

फरूखसियर ने करीब ६ वर्षों (१७१३–१९) तक राज्य किया। गद्दी पाने में उसे हुसेनअली और अब्दुला नामक दो भाइयों से सहायता मिली थी। ये सैयद भाई कहलाते थे। अब्दुला इलाहाबाद का सूबेदार था और हुसेनअली पटना का

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नायब सूबेदार था। इन दोनों का खूब चला हुआ था और ये किसी को राजा बनाने में, किसी को पदच्युत करने में बड़े दक्ष थे। अतः इन्हें 'राजा-निर्माता' (किंग मेकर्स) कहते थे। फरुखसियर के समय में वास्तविक शासनसूत्र इन्हीं दोनों भाइयों के हाथ में था। हुसेनअली मीरबख्शी और अब्दुला वजीर के पद पर नियुक्त थे। सम्राट पर इन दोनों का गहरा प्रभाव था। लेकिन सम्राट विलासी, विवेकहीन और अदूरदर्शी था। वह सैयद भाइयों की मदद से गद्दी पर बैठा था किन्तु वह पीछे उनकी जड़ खोदने लगा। सम्राट उनके विरुद्ध षड्यन्त्र करने में व्यस्त रहने लगा। अन्त में सैयद भाइयों ने सम्राट को पदच्युत कर वन्दीगृह में डाल दिया। पीछे उसे निर्दयतापूर्वक मार डाला गया।

फरुखसियर के ही समय में सिक्खों का नेता बन्दा का बध हुआ। चुरामन के नेतृत्व में जाटों ने भी विद्रोह किया।

फरुखसियर के बध के बाद रफीउतदराजात और रफीउद्दौला बारी-बारी से गद्दी पर बैठे। ये दोनों बहादुरशाह के भतीजे थे। ये दोनों ही बहुत थोड़े समय तक गद्दी पर रह सके। रफीउद्दौला ने शाहजहाँ द्वितीय की उपाधि धारण की थी। उसके मरने के बाद जहाँशाह का बेटा रोशन अख्तर मुहम्मदशाह के नाम से गद्दी पर बैठा।

मुहम्मदशाह ने पर्याप्त समय तक (१७१६-४८) राज्य किया। उसने सैयद भाइयों से छुटकारा पाने के लिये भरपूर प्रयत्न किया। वह सफल भी हुआ। इस सफलता का विशेष श्रेय निजामुलमुल्क को प्राप्त है। हुसेनअली एक बार मालवा की तरफ जा रहा था और रास्ते में ही (१७२०) उसकी हत्या कर दी गई। अब्दुला मुहम्मद शाह को गद्दी से उतार कर दूसरे को (इब्राहिम शाह) बैठाना चाहता था किन्तु उसका प्रयास विफल हुआ। वह कैद कर लिया गया और कुछ समय के बाद उसकी भी (१७२२ ई०) हत्या कर दी गई।

इस तरह मुहम्मदशाह सैयद भाइयों से तो मुक्त हो गया किन्तु वह भी भोग विलास में विशेष अभिरुचि रखता था। उसके समय में साम्राज्य की स्थिति अधिक बिगड़ने लगी थी। उसी के समय में विदेशी हमले भी होने लगे। नादिर शाह (१७३६) और अहमदशाह (१७४८) के हमलों ने लड़खड़ाते साम्राज्य को और भी झकझोर दिया।

मुहम्मदशाह के उत्तराधिकारी—मुहम्मदशाह के बाद मुगल साम्राज्य का ढाँचा कायम रहा। उसके बाद अहमदशाह (१७४८-५४), आलमगीर द्वितीय (१७५४-५६), शाहआलम द्वितीय (१६५६-१८०६), अकबर द्वितीय (१८०६-३७) और बहादुरशाह द्वितीय (१८३७-५८, १८५८-६२ कैद खाने

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

में) गद्दी पर बैठे। ये सभी नाममात्र के ही सम्राट थे। इस तरह १८५८ ई० में मुगल साम्राज्य का नामोनिशान मिट गया। उसके अवशेष पर अंगरेजी राज्य कायम रहा।

पतन के कारण

भूमिका—हम देख चुके कि बाबर ने मुगल साम्राज्य की स्थापना की, अकबर, जहाँगीर और शाहजहाँ ने मुगल साम्राज्य का विस्तार किया। औरंगजेब के समय में मुगल साम्राज्य ह्रास एवं पतन की ओर उन्मुख हो गया। इस तरह मुगल साम्राज्य के पतन के कारण दो प्रकार के हैं। एक श्रेणी में वे कारण हैं जिनका औरंगजेब से सम्बन्ध है और दूसरी श्रेणी में वे कारण हैं जिनका औरंगजेब से सम्बन्ध नहीं है। नीचे इन सभी कारणों पर प्रकाश डाला जाता है।

औरंगजेब का उत्तरदायित्व

१. **साम्राज्य विस्तार**—औरंगजेब के राज्यारोहण के समय तक ही मुगल साम्राज्य का बहुत विस्तार हो चुका था। औरंगजेब ने दक्षिण के भी कुछ राज्यों पर अधिकार कर लिया। इस तरह साम्राज्य के क्षेत्र में बहुत वृद्धि हो गयी। किन्तु उस समय आजकल की तरह यातायात के साधन उन्नत नहीं थे। अतः इस विशाल देश में एक भाग से दूसरे भाग में आने-जाने में कठिनाई होती थी। कहीं विद्रोह हो जाने पर शीघ्र सेना भेज कर उसे दबा देना सरल कार्य नहीं था। सम्राट जब उत्तर में रहता था तो दक्षिण में गड़बड़ी होती थी और जब वह दक्षिण में रहता था तो उत्तर में अराजकता फैल जाती थी।

२. **औरंगजेब का चरित्र**—औरंगजेब के चरित्र में कुछ बहुत बड़े दोष थे। वह महत्वाकांक्षी. अदूरदर्शी और विवेकहीन व्यक्ति था। सबसे बढ़कर वह सन्देहशील प्रकृति का व्यक्ति था। राज्य के कर्मचारियों की बात तो दूर रहे, वह अपने सम्बन्धियों तथा पुत्रों पर भी विश्वास नहीं करता था। अतः उसने बहुत सी शक्तियों एवं अधिकारों को अपने ही हाथों में केन्द्रित रखा। लेकिन वह था तो मनुष्य ही। विशाल राज्य के सभी कर्मचारियों एवं विभागों पर एक व्यक्ति का नियमित निरीक्षण करना होना ही नहीं असंभव था। दूसरे, कर्मचारियों एवं राजकुमारों के हाथों में उत्तरदायित्वपूर्ण कार्य नहीं सौंपने से उन्हें राजनीतिक शिक्षा के लिये अवसर ही नहीं प्राप्त हुआ। तीसरे, दुनिया परस्पर आदान-प्रदान, लेन-देन पर चलती है। जब सम्राट दूसरों में विश्वास नहीं करता था तो दूसरे भी सम्राट को श्रद्धा एवं सम्मान की दृष्टि से नहीं देखते थे।

३. **धार्मिक संकीर्णता**—औरंगजेब धार्मिक दृष्टि से संकीर्ण एवं अनुदार था। यह उसके चरित्र का दूसरा बड़ा दोष था। भारत में हिन्दुओं की संख्या बहुत

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अधिक थी। अकबर ने अपनी उदारतापूर्ण नीति से उन्हें अपने पक्ष में कर लिया था। अतः वे राज्य के प्रबल समर्थक हो गये थे। किन्तु औरंगजेब ने अपनी अनुदारता एवं असहिष्णुता के कारण हिन्दुओं को मुगलों का दुश्मन बना दिया। उसने हिन्दुओं की मूर्तियों एवं मन्दिरों को तोड़ा, उनके स्थान पर मस्जिदें बनवा दीं और उन पर विविध कर लगाया। औरंगजेब स्वयं सुन्नी था। अतः उसने शिया मत वालों को भी तंग किया। अतः वह भारत जैसे देश में जहाँ विभिन्न जाति एवं धर्म के लोग रहते हैं, शासक होने की क्षमता नहीं रखता था।

४. **राजपूतों से द्वेष**—अकबर ने राजपूतों को मिलाकर मुगल साम्राज्य की वृद्धि में उनकी सेवाओं को प्राप्त किया। किन्तु औरंगजेब ने उन्हें दुश्मन बनाकर मुगल साम्राज्य को उनकी बहुमूल्य सेवाओं से वंचित कर दिया। राजपूत बड़े ही वीर, बहादुर, साहसी एवं ईमानदार सैनिक एवं सेनानायक होते थे।

५. **औरंगजेब की दक्षिणी-नीति**—हम देख चुके हैं कि औरंगजेब ने किस तरह बीजापुर एवं गोलकुंडा के राज्यों से युद्ध कर उन पर अधिकार कर लिया। ये शिया राज्य थे। औरंगजेब ने लगभग २५ वर्ष दक्षिण में व्यतीत किया था। उसका अधिकांश समय युद्धों में ही बीता। इस नीति का साम्राज्य पर बड़ा बुरा प्रभाव पड़ा। बहुत धन-जन की हानि हुई। मराठों से मुगलों की सीधी टक्कर होने लगी। उत्तर में अव्यवस्था फैलने लगी। अतः कहा जाता है कि "दक्षिण के घाव ने औरंगजेब को नष्ट ही कर दिया।"[1]

इस प्रकार मुगल साम्राज्य औरंगजेब की नीतियों एवं कार्यों से खोखला बन गया लेकिन ऊपर से अभी ठीक ही दीख पड़ता था। इसकी दशा एक ऐसे शव के समान थी जो ऊपर से बहुत ही सुन्दर कपड़े से ढका हो। लेकिन मुगल साम्राज्य के पतन के लिये औरंगजेब एकमात्र कारण नहीं था। पतन के लिये केवल उसीको उत्तरदायी ठहराना गलत होगा। मुगल साम्राज्य के पतन के लिये कुछ दूसरे भी कारण थे जिनके लिये औरंगजेब उत्तरदायी नहीं था।

१. **त्रुटिपूर्ण सैनिक व्यवस्था**—सैन्य संगठन मनसबदारी प्रथा पर आधारित था। इस प्रथा में कई दोष थे। (क) सम्राट के पास सैनिक, घोड़े एवं अस्त्र-शस्त्र नहीं रहते थे बल्कि वे मनसबदारों के ही पास रहते थे। मनसबदार उन चीजों को पर्याप्त संख्या में नहीं रखते थे। (ख) सैनिकों पर मनसबदारों का अधिकार रहता था, सम्राट का नहीं। अतः सम्राट और सैनिकों में सीधा सम्पर्क नहीं था। (ग) विभिन्न मनसबदारों में एकता नहीं थी। (घ) महत्वाकांक्षी मनसबदार सम्राट की सत्ता को भी चुनौती दे सकते थे। वे जागीर को धीरे-धीरे अपनी पैतृक

१ देखिये अध्याय ११

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सम्पत्ति समझने लगे। (ङ) घोड़ों तथा अन्य सामानों की रक्षा के लिये मनसबदार बहुत ईमानदारी से युद्ध में भाग नहीं लेते थे। जितने ही सामान नष्ट होते थे या घोड़े मर जाते थे उतने ही मनसबदार को क्षति होती थी। (च) अस्त्र-शस्त्र पुराने ढंग के थे और लड़ने के तरीके भी पुराने ही थे। (छ) सैनिकों में अनुशासनहीनता थी। वे अपने साथ बहुत से सामान एवं औरतों को युद्धस्थल पर ले जाते थे। (ज) उनमें भोग-विलास की भावना बलवती होने लगी थी जिससे उनकी शक्ति की क्षति होने लगी। (झ) मध्य एशिया एवं उत्तर-पश्चिमी भाग से सम्बन्ध टूट जाने के कारण शक्तिशाली सैनिकों का मिलना कठिन हो गया। (ञ) जहाँ-तहाँ असफलता होने से मुगल सैनिकों की प्रतिष्ठा को गहरा धक्का लगने लगा। शाहजहाँ के समय में कन्धार और मध्य एशिया में और औरंगजेब के समय दक्षिण में मुगल सैनिकों को पराजित एवं अपमानित होना पड़ा था। इससे उनका दिल टूटने लगा, आत्मविश्वास की भावना दुर्बल होने लगी।

मुगल सैनिकों में राष्ट्रीय मौलिक एकता नहीं थी। सेना में भिन्न-भिन्न जाति के लोग थे जैसे राजपूत, तुर्क, अफगान, ईरानी आदि। कभी-कभी वे अपने जातीय हित को ही अधिक महत्व देते थे। संगठन एवं नेतृत्व में एकता का अभाव था।

मुगल सम्राटों ने समुद्री शक्ति के विकास की ओर कोई ध्यान नहीं दिया। अतः उन्होंने नौसेना का संगठन नहीं किया। इसके अभाव में वे समुद्री शक्तियों का सामना करने में असमर्थ रहे।

२. राष्ट्रीय समर्थन का अभाव—मुगल विदेशी थे। भारत में उनका राज्य सैनिक शक्ति पर आधारित था। अकबर को छोड़कर अन्य मुगल सम्राट ने प्रजाहित को अपनी नीति का आधार नहीं बनाया। अतः मुगल शासन को राष्ट्रीय समर्थन नहीं प्राप्त हुआ। ऐसा राज्य टिकाऊ नहीं होता है।

३. उत्तरकालीन मुगल सम्राटों की कमजोरी—औरंगजेब के बाद जितने मुगल सम्राट हुए सभी के चरित्र में कुछ न कुछ बड़े दोष थे। बहादुरशाह प्रथम असावधानी के लिये प्रसिद्ध था और शाहे बेखबर कहलाता था। जहाँदार शाह मूर्खता के लिये और फरुखसियर भीरुता के लिये बदनाम था। मुहम्मदशाह रंगीला सम्राट कहलाता था। औरंगजेब के बाद के सभी सम्राट भोग-विलास में विशेष अभिरुचि रखते थे। अतः वे अपना अधिकांश समय महल एवं महिलाओं के बीच व्यतीत करते थे। वे राज्य के कामों में उदासीनता दिखलाते

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

थे। वे दिन-प्रतिदिन अनैतिकता के गढ़े में गिरते जा रहे थे और उनकी कीर्ति कम होती जाती थी। ऐसी स्थिति में दरबारियों एवं सरदारों का प्रभाव बढ़ता था।

४. सरदारों का पतन—जब मुगल सम्राटों का पतन हो गया तो मुगल सरदारों की भी स्थिति अच्छी नहीं थी। मुगल सरदार भी भोग-विलासमय जीवन अधिक पसन्द करते थे। वे भी अधिकतर महलों एवं महिलाओं के बीच रहने लगे। अतः उनकी शारीरिक एवं मानसिक शक्ति का क्रमशः ह्रास होने लगा। उनमें नेतृत्व की क्षमता नहीं रह गयी। एक लेखक का कहना है कि यदि किसी सरदार की सफलताओं का वर्णन तीन पृष्ठों में होता था तो उसके लड़के के वर्णन के लिये एक ही पृष्ठ पर्याप्त हो जाता था और उसके पोते का वर्णन तो तीन-चार पंक्तियों में ही समाप्त हो जाता था।

५. भारत की जलवायु—मुगल सम्राटों एवं सरदारों के लिये भारत की जलवायु भी अनुकूल सिद्ध नहीं हुई। उनके मौलिक देश की जलवायु ऐसी थी कि वे शक्तिशाली और परिश्रमी हो गये थे किन्तु भारत की जलवायु ने उन्हें विशेष आलसी एवं विलासी बना दिया। राज्य एवं धन की लिप्सा ने उनकी भोग-विलास की भूख को और भी अधिक प्रज्वलित कर दिया।

६. संकीर्ण दलबन्दी—मुगल दरबार में दो दल थे—हिन्दुस्तानी (हिन्दू-मुस्लिम) और गैर हिन्दुस्तानी (मुगल)। हिन्दुस्तानी दल में वे लोग थे जो भारत में पैदा हुए थे या यहाँ दीर्घकाल से रहते थे। गैर हिन्दुस्तानी दल में विदेशियों की प्रधानता थी। यह दल दो भागों में बँटा था—ईरानी जिसमें शिया मत वालों की प्रधानता थी और तुरानी जिसमें सुन्नी मत वालों की प्रधानता थी। इन सभी दलों में द्वेष था और प्रत्येक दल दूसरे के विरुद्ध सम्राट का कान भरता रहता था। इस तरह मुगल दरबार षड्यन्त्रों का अड्डा बन गया था।

७. उत्तराधिकार सम्बन्धी नियम का अभाव—मुगल साम्राज्य में उत्तराधिकार के सम्बन्ध में कोई निश्चित नियम नहीं था। तलवार के द्वारा ही निर्णय किया जाता था। अतः प्रत्येक सम्राट की मृत्यु के बाद उत्तराधिकार युद्ध होता था। राजत्व के सामने भ्रातृत्व या पितृत्व का कोई मूल्य नहीं था। अतः पुत्र को पिता और भाई को भाई का बध करने में कोई संकोच नहीं था। ऐसी स्थिति में धन एवं जन का नाश और अव्यवस्था का प्रचार अनिवार्य था।

८. आर्थिक दुर्बलता—किसी भी राज्य की सुरक्षा एवं स्थायित्व उसकी सबल आर्थिक स्थिति पर निर्भर करती है। अर्थ सरकार की रीढ़ के समान है। अकबर के बाद मुगल साम्राज्य की आर्थिक स्थिति दिन पर दिन बिगड़ने लगी।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

खेती, व्यापार एवं व्यवसाय के विकास के लिये समुचित ध्यान नहीं दिया गया। जागीरदारी एवं ठीकेदारी प्रथा के कारण कृषि एवं कृषकों की दशा खराब थी। जनता पर करों का बोझ था। आमदनी का अधिकांश भोग-विलास एवं युद्धों में अपव्यय होता था। बड़े मुगल सम्राटों ने वैभव-प्रदर्शन पर बहुत खर्च किया। शाहजहाँ के समय में और दूसरे सम्राटों के समय में भी भवन-निर्माण तथा अन्य कलाओं पर धन पानी की तरह बहाया गया। फिर औरंगजेब तथा अन्य सम्राटों ने युद्ध पर भी बहुत खर्च किया। इस तरह राजकोष पर बहुत धक्का पहुँचा। विदेशी हमले और लूट के कारण आर्थिक स्थिति और भी अधिक भयंकर हो गयी। सैनिकों एवं पदाधिकारियों को समय पर वेतन मिलना कठिन हो गया। औरंगजेब की मृत्यु के लगभग ५० वर्ष बाद अकाल की स्थिति उत्पन्न हो गयी। सर यदुनाथ सरकार के मतानुसार "एक बार राजमहल के रसोईघर में तीन दिनों तक चूल्हे नहीं जले। शाहजादियाँ भूख से पीड़ित होकर पर्दे को तोड़कर बाहर निकल पड़ीं। बड़ी कठिनाई से रनिवास में जाने के लिये उन्हें प्रभावित किया गया।"

९. **शान्ति एवं सुरक्षा का अभाव**—किसी भी देश की उन्नति के लिये शान्ति एवं सुरक्षा बहुत ही आवश्यक चीजें हैं। जो सरकार इन चीजों को प्रदान नहीं कर सकती उसे रहने का कोई अधिकार ही नहीं है। औरंगजेब के समय से ही देश में शान्ति का अभाव होने लगा। अराजकता एवं भ्रष्टाचार कर प्रचार होने लगा। घूसखोरी एवं पक्षपात बढ़ने लगे। अतः शासन का ढाँचा कमजोर होने लगा।

अशान्ति एवं अराजकता की स्थिति में विदेशी हमले को प्रोत्साहन मिला। पश्चिमोत्तर सीमा असुरक्षित थी। अतः १७३८ ई० में नादिरशाह के और १७४७ ई० में अहमदशाह अब्दाली के हमले हुए। नादिर ने खूब लूटपाट किया। अब्दाली ने तो १७४७ और १७६१ ई० के बीच कई बार हमला किया। इन विदेशी हमलों ने दुर्बल मुगल साम्राज्य को और भी अधिक झकझोर दिया। बहुत धन-जन की नुकसानी हुई। अबतक जर्जर मुगल साम्राज्य के ऊपर जो एक पर्दा था वह पर्दा अब हट गया। इर्विन का कथन है कि इन आक्रमणकारियों ने उस आडम्बर का अन्त कर दिया जिसके कारण लोगों को अलंकृत लाश एक शक्तिशाली राक्षस की तरह दिखाई पड़ता था।

१०. **प्रान्तीय सूबेदारों की कृतघ्नता**—प्रान्तीय सूबेदार महत्त्वाकांक्षी एवं कृतघ्न थे। जब मुगल सम्राट के अधीन केन्द्रीय शासन दुर्बल होने लगा तब प्रान्तीय सूबेदार अपनी स्वतन्त्रता घोषित करने लगे। वे स्वतन्त्र राज्य ही स्थापित करने लगे।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

११. हिन्दू शक्तियों का पुनरुत्थान—औरंगजेब की मृत्यु के बाद हिन्दू शक्तियों का पुनरुत्थान हुआ। राजपूतों, सिक्खों, जाटों और मराठों में नवजीवन का संचार हुआ। उनमें मुगलों के विरुद्ध आन्दोलन उठ खड़ा हुआ। पतित एवं दुर्बल मुगल सम्राट उनको दबाने में असमर्थ रहे।

१२. अंग्रेज व्यापारियों का आगमन–ईस्ट इंडिया कम्पनी की स्थापना १६०० ई० में पूर्वी देशों से व्यापार करने लिये हुई थी। यह कम्पनी भारत में भी व्यापार करने के लिये आयी थी। समय-समय पर इसने मुगल सम्राटों से अनेक सुविधाएँ प्राप्त कीं। लेकिन अंग्रेज बहुत चतुर एवं दूरदर्शी थे। वे यहाँ की राजनीतिक अव्यवस्था एवं मुगल सम्राटों की दुर्बलता से लाभ उठाने लगे। अब वे राजनीतिक क्षेत्र में हस्तक्षेप करने लगे। उन्हें प्लासी (१७५७) और बक्सर (१७६४) की लड़ाइयों में महत्त्वपूर्ण विजय प्राप्त हुई। अब भारत में अंग्रेजी साम्राज्य की नींव पड़ गयी।

इस तरह स्पष्ट है कि अनेक कारणों से मुगल साम्राज्य का पतन हुआ। अतः इसका पतन आकस्मिक नहीं, क्रमिक था।

⊙

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अध्याय १५

मराठों का पुनरुत्थान--पेशवा

हम पहले ही कह चुके हैं कि शाहू (शिवाजी द्वितीय) ने गृहयुद्ध में ताराबाई को हराकर कैद कर लिया और वह स्वयं गद्दी पर बैठ गया। किन्तु वह विलास-प्रिय व्यक्ति था। उधर गृहयुद्ध की आशंका अभी भी बनी हुई थी। मराठे सरदार प्रभावशाली हो रहे थे। स्थिति गंभीर दीख पड़ती थी। इस समय एक बहुत ही योग्य एवं दूरदर्शी व्यक्ति की आवश्यकता थी। बालाजी विश्वनाथ के रूप में ऐसा ही एक व्यक्ति मराठा रंगमंच पर उपस्थित हुआ। वह शाहू का पेशवा था। शिवाजी ने ही पेशवा के पद का निर्माण किया था। वह मराठा राज्य का प्रधान मंत्री था।

बालाजी विश्वनाथ (१७१३-२०)—बालाजी विश्वनाथ कोंकण के चितपावन ब्राह्मण वंश में पैदा हुआ था। उसका परिवार गरीब था किन्तु वह स्वयं बड़ा ही योग्य एवं ईमानदार था। वह चतुर एवं दूरदर्शी राजनीतिज्ञ भी था। वह मुगल साम्राज्य की दुर्बलता को समझता था और उससे लाभ उठाने के लिये उत्सुक था। शाहू ने उसीको १७१३ ई० में पेशवा के पद पर नियुक्त किया। पहले वह मराठा राज्य में एक सैनिक पदाधिकारी के अधीन लिपिक का काम करता था। इसके बाद वह एक अन्य प्रमुख पद पर काम करने लगा। इस तरह उसे शासन तथा सेना सम्बन्धी अनुभव प्राप्त हुए। उसके गुणों एवं कार्यों से ही प्रभावित होकर शाहू ने उसे पेशवा बना दिया। बालाजी विश्वनाथ के समय में पेशवा का पद बहुत ही शक्तिशाली एवं महत्त्वपूर्ण हो गया।

मुगल सम्राट फरुखसियर बालाजी विश्वनाथ का समकालीन था। उसके समय में सैयद भाइयों का बड़ा चलता हुआ था। उन्होंने ही फरुखसियर को राजा बनाया था। उनके सामने सम्राट का कुछ चलता नहीं था। अतः सम्राट मन ही मन सैयद भाइयों से ईर्ष्या कर रहा था। वह उन भाइयों से छुटकारा पाने के लिये उपाय भी सोच रहा था। अतः उसने अब्दुला को वजीर और हुसेनअली को दक्षिण का सूबेदार बना दिया। सैयद भाई भी सम्राट को पसन्द नहीं करते थे। हुसेनअली

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जब दक्षिण का सूबेदार था तो फरुखसियर ने उसके विरुद्ध मराठों को प्रोत्साहित किया था। लेकिन हुसेनअली भी बहुत चालाक था। उसने शाहू से सन्धि कर दोस्ती कर ली। इस सन्धि से मराठों को बहुत लाभ हुए। शिवाजी के द्वारा जीते गये सभी प्रदेश शाहू को सौंप दिये गये। जो भी मराठे मुगलों की कैद में थे अब मुक्त कर दिये गये। दक्षिण के ६ प्रदेशों से चौथ और सरदेशमुखी वसूलने के लिये मराठों को अधिकार मिल गया। शाहू ने मुगलों को सैनिक सहायता (१५ हजार) और १० लाख वार्षिक कर देने के लिये वादा किया।

इस तरह सैयद भाइयों और मराठों में मित्रता कायम हो गई। लेकिन फरुखसियर को उपर्युक्त सन्धि स्वीकार नहीं थी। सैयद भाई भी फरुखसियर को गद्दी से हटाना चाहते थे। इसमें भी उन्होंने मराठों से मदद माँगी। शाहू ने अनुमति दे दी। बालाजी विश्वनाथ अपने मराठा सरदारों के साथ दिल्ली गया। फरुखसियर को गद्दी से हटाकर वध कर दिया गया। थोड़े ही समय के अन्दर तीन सम्राट गद्दी पर बैठे। इन सम्राटों ने मराठों के साथ पहले की गई सन्धि को मान लिया। सैयदों ने बालाजी को कर एवं स्वराज्य के सम्बन्ध में तीन सनदें प्रदान कर दीं।

अब मराठों की शक्ति एवं प्रतिष्ठा में बहुत वृद्धि हुई। उन्होंने राजधानी में मुगल साम्राज्य की दुर्बल एवं दयनीय दशा को भी देखा। इससे उनके उत्साह और आत्म विश्वास में भी वृद्धि हुई। अब मराठों की राजनैतिक दृष्टि उत्तर की ओर केन्द्रित होने लगी।

बालाजी विश्वनाथ ने राज्य की आर्थिक स्थिति में सुधार किया। उसने आय बढ़ाने की कोशिश की। कृषि के विकास पर जोर दिया गया। लगान वसूली के सम्बन्ध में नियम बनाये गये। उसने सरदारों में परस्पर एकता कायम करने की कोशिश की। उसने सरदारों और राजा के बीच निकट सम्पर्क स्थापित किया। लेकिन जागीरदारी प्रथा के कारण उसे आर्थिक सुधार में बहुत सफलता नहीं मिली। वह मराठा सरदारों को भी अनुशासनप्रिय एवं नम्र भी नहीं बना सका।

लेकिन बालाजी ने एक और महत्वपूर्ण कार्य किया। पहले पेशवा के पद पर कोई भी व्यक्ति नियुक्त होता था किन्तु अब यह पद वंशानुगत हो गया। राजतन्त्र की तरह पेशवा के मरने के बाद उसका पुत्र ही उसका उत्तराधिकारी बनने लगा।

बाजीराव प्रथम (१७२०-४०)—बालाजी विश्वनाथ के मरने के बाद उसका पुत्र बाजीराव प्रथम पेशवा के पद पर नियुक्त हुआ। अभी वह २० वर्ष

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

का ही नवयुवक था। अतः बहुत से मराठा सरदार उसे पेशवा होने के योग्य नहीं समझते थे। लेकिन शाहू को बाजीराव की योग्यता एवं प्रतिभा में दृढ़ विश्वास था। वास्तव में बाजीराव प्रथम योग्य पिता का योग्य लड़का था। वह महान् राजनीतिज्ञ, कुशल सेना नायक और निपुण वक्ता था। वह घुड़सवारी में भी पारंगत था। वह दूरदर्शी, निर्भीक एवं परिश्रमी था। वह छापामार युद्धकला में बहुत दक्ष था। उसके सैनिक उसे बहुत मानते थे।

चरित्र एवं नीति

बाजीराव की राजनीतिक सूझ-बूझ की शक्ति अद्भुत थी। वह और उसका छोटा भाई (चिम्माजी अप्पा) अपने पिता के साथ पहले ही दिल्ली गये हुए थे। वहाँ बाजीराव ने अपनी आँखों से मुगल साम्राज्य की दयनीय दशा को देखा और हिन्दू साम्राज्य की स्थापना के लिये उत्साहित हुआ। वह समस्त भारत में हिन्दुओं के राजनैतिक प्रभुत्व को कायम करना चाहता था। इसे वह हिन्दू-पद-पादशाही की संज्ञा देता था। इस तरह बाजीराव में साम्राज्यवादी भावना प्रबल थी।

कुछ मराठा सरदारों का मत था कि पहले अपने स्वराज्य को सुदृढ़ कर दक्षिण में अपनी स्थिति को सबल बनाना चाहिये। उसके बाद ही उत्तर की ओर विस्तार पर ध्यान देना चाहिये। किन्तु बाजीराव ने इस मत का समर्थन नहीं किया। वह कहता था कि अब विदेशियों (मुगलों) को हिन्दुओं के देश से निकाल कर सारे देश में हिन्दू राज्य का झंडा फहराने के लिये समय आ गया है। "हमें कमजोर वृक्ष (मुगल साम्राज्य) की जड़ पर चोट करनी चाहिये; उसकी शाखाएँ स्वयं टूट कर गिर जायँगी।" यही 'मूले कुठारः' की नीति कहलाती है।

उत्तरी भारत में राज्य-विस्तार की नीति के पीछे बाजीराव का एक और उद्देश्य था। मराठा राज्य में बहुत से सरदार थे जो उद्दंड और महत्त्वाकांक्षी थे। वे बाजीराव के मार्ग में बाधा पैदा कर सकते थे। अतः बाजीराव ने सोचा कि उत्तरी भारत में राज्य-विस्तार की नीति से उन सरदारों का भी ध्यान बँट जायगा। वे भी आन्तरिक क्षेत्र में कोई बाधा खड़ा करने के लिये अवकाश नहीं पायेंगे। सफलता मिलने पर सभी सरदार उसके (बाजीराव) नेतृत्व को खुशी से स्वीकार कर लेंगे।

युद्ध—बाजीराव ने अपनी सेना का संगठन किया। उसने मालवा पर आक्रमण कर उसे ले लिया। पेशवा ने गुजरात पर भी अधिकार कर लिया। उसने कर्नाटक पर भी हमला किया और बरार पर विजय प्राप्त की। बाजीराव का निजाम से भी संघर्ष हुआ। निजाम कोल्हापुर के शम्भाजी द्वितीय को बाजीराव

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

के विरुद्ध भड़का रहा था। अतः दोनों में (१७२८) पालखेद नामक स्थान पर युद्ध हुआ। निजाम की हार हो गयी। निजाम सन्धि करने के लिये बाध्य हुआ। १७१६ ई० में मुगलों और मराठों में जो सन्धि हुई थी उसे निजाम ने भी मान लिया। इस तरह दक्षिण के ६ प्रदेशों से चौथ और सरदेशमुखी वसूल करने के लिये मराठों का अधिकार सुदृढ़ हो गया। निजाम ने शम्भाजी से कोई सम्पर्क नहीं रखने के लिये भी वादा किया।

लेकिन निजाम चुप बैठने वाला नहीं था। उसने त्रयम्बक राव दामादे को बाजीराव के विरुद्ध उभारा। बाजीराव ने दामादे से भी (१७३१) युद्ध किया। निजाम ने भी दामादे को मदद दी। किन्तु बाजीराव ने दमादे को युद्ध में हरा दिया। दामादे मारा भी गया। निजाम को निराशा हुई। पेशवा के उत्साह में वृद्धि हुई। निजाम ने फिर एक सन्धि की। उसने प्रतिज्ञा की कि उत्तरी भारत में पेशवा की प्रगति में वह बाधक नहीं होगा।

अब गंगा-यमुना के दोआब की ओर बाजीराव का ध्यान गया। १७३३ ई० में बुन्देलखंड का छत्रसाल मर गया। मुगल बुन्देलखंड पर अधिकार करना चाहते थे। बाजीराव ने मुगलों के विरुद्ध बुन्देलों को मदद दी। बुन्देलखंड की रक्षा हुई। बुन्देलों ने अपने प्रदेश का अधिकांश भाग पेशवा के अधीन सौंप दिया।

अब बाजीराव दिल्ली के निकट पहुँच गया। मुगल सम्राट मुहम्मद शाह बहुत डर गया। उसने निजाम से मदद के लिये अनुरोध किया। निजाम पहले की सन्धियों को भुलाकर सम्राट की मदद में चल पड़ा। भोपाल के पास निजाम और पेशवा की सेनाओं (१७३८) में मुठभेड़ हुई। निजाम हारकर सन्धि करने के लिये बाध्य हुआ। चम्बल और नर्मदा के बीच के समस्त भू-भाग पर पेशवा का अधिकार मान लिया गया। मालवा और गुजरात बाजीराव के ही अधिकार में रहे। ५० लाख रुपये युद्ध की क्षति पूर्ति के रूप में बाजीराव को दिये गये।

भोपाल की विजय ने बाजीराव की सैनिक प्रतिष्ठा में चार चाँद लगा दिये। दूसरे ही साल (१७३६) बाजीराव ने पुर्तगालियों पर धावा बोल दिया और सालसेट तथा बेसीन पर अधिकार कर लिया। अब पेशवा की शक्ति बहुत बढ़ गयी। इस बीच नादिरशाह ने दिल्ली पर हमला कर दिया था। बाजीराव ने उससे भी लड़ने के लिये निश्चय किया किन्तु तब तक नादिरशाह ने वापसी यात्रा शुरू कर दी।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मूल्यांकन—इस तरह बाजीराव ने मराठा शक्ति को बहुत बढ़ा दिया। उसने मराठा राज्य का विस्तार किया। वह योजनाओं को बनाने और उन्हें कार्यान्वित करने में बड़ा कुशल था। उसने अपने सभी विरोधियों को नाकों चने चबवा दिया। निजाम एक चतुर कूटनीतिज्ञ था किन्तु बाजीराव के सामने उसके भी होश ठिकाने आ गये। उसके समय में पूना भारतीय राजनीति का प्रमुख केन्द्र बन गया।

किन्तु पेशवा की नीति में कुछ त्रुटियाँ भी थीं। उसे हैदराबाद में निजाम के राज्य की स्वतन्त्रता को समाप्त कर देना चाहिये था। निजाम का स्वतन्त्र राज्य मराठा राज्य के विस्तार के लिये बाधक स्वरूप था। दूसरे, वह विरोधियों को परास्त कर देता था किन्तु उन्हें अपने पक्ष में नहीं करता था। तीसरे, वह मराठा सरदारों को एक सूत्र में नहीं बाँध सका। जागीरदारी प्रथा में भी कोई सुधार नहीं हुआ। अतः सरदारों में परस्पर द्वेष की भावना पनपती रही। संघर्ष को दूर करने के ख्याल से उसने मराठों का एक संघ कायम कर दिया। मराठा राज्य प्रमुख सरदारों में बाँट दिया दिया। इस तरह सिन्धिया को ग्वालियर, होल्कर को इन्दौर, गायकवाड़ को बड़ौदा और भोंसले को नागपुर सौंप दिये गये।

बाजीराव की मृत्यु—बाजीराव के चरित्र में एक और दोष था। वह मस्तानी नामक एक मुस्लिम महिला के प्रेम में बुरी तरह फँस गया। वह बहुत सुन्दर थी और संगीत में भी बहुत निपुण थी। बाजीराव ने उसे अपनी पत्नी के रूप में स्थान दे दिया। इससे बहुत से मराठा सरदार क्रुद्ध हो गये। एक दिन मस्तानी को पकड़कर बन्दीगृह में डाल दिया गया। इससे बाजीराव को बड़ा दुख हुआ और वह इस संसार से चल बसा। मस्तानी भी बाजीराव की मृत्यु से बहुत दुखी हुई और उसका भी प्राणान्त हो गया। इस तरह १७४० ई० में दोनों का देहावसान हो गया।

बालाजी बाजीराव (१७४०-६१)—बाजीराव की मृत्यु के बाद उसका पुत्र बालाजी बाजीराव पेशवा की गद्दी पर आसीन हुआ। उसे नाना साहब भी कहा जाता था। अभी गद्दी पर बैठने के समय उसकी उम्र १८ वर्ष की थी। वह अपने योग्य था किन्तु अपने पिता की बराबरी नहीं कर सकता था। लेकिन उसका चचेरा भाई सदाशिवराव बहुत ही योग्य एवं बुद्धिमान था। उसी की सलाह एवं सहायता से बालाजी बाजीराव राज्य-कार्य सँभालने लगा।

मुख्य घटनाएँ

छत्रपति की शक्ति का अन्त—बालाजी बाजीराव के समय में दो प्रमुख घटनाएं हुईं। पेशवा ने राजा के पद को भी हथिया लिया। यह पहली घटना

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हुई। १७४६ ई० में साहू की मृत्यु हो गयी। उसे कोई लड़का नहीं था। पिछले ५-६ वर्षों से उत्तराधिकार के प्रश्न पर विचार हो रहा था। साहू ने अपने जीवन काल में ही ताराबाई के पोते राजाराम द्वितीय को अपना उत्तराधिकारी मनोनीत कर दिया था। किन्तु साहू के मरने पर कुछ मराठा सरदार राजाराम को उसका उत्तराधिकारी मानने में आनाकानी करने लगे। ताराबाई भी राजाराम से असन्तुष्ट हो गयी थी क्योंकि वह (ताराबाई) अपनी इच्छा के अनुसार कार्य नहीं कर सकती थी। ताराबाई ने विद्रोह कराने की कोशिश की किन्तु विद्रोह दबा दिया गया। ताराबाई और राजाराम द्वितीय को सतारा के किले में रहने के बाध्य किया गया। राजाराम के लिये पेंशन निश्चित कर दी गई। अब छत्रपति की शक्ति समाप्त हो गई। अब वास्तविक शक्ति पेशवा के हाथ में आ गई। अब पेशवा राजा भी बन गया। वही मराठा मंडल का प्रधान हो गया। पूना में उसकी राजधानी कायम हुई।

छत्रपति की शक्ति का अन्त करना उचित नहीं था। वह मराठा जाति की एकता का प्रतीक था। उसे लोग बड़ी श्रद्धा एवं सम्मान की दृष्टि से देखते थे। अब छत्रपति के कमजोर हो जाने से मराठा जाति की एकता जाती रही।

मराठा शक्ति का विकास—बालाजी बाजीराव ने मराठा संघ को संगठित किया। बड़ौदा, ग्वालियर, इन्दौर और बरार में चार प्रमुख मराठा रियासतें कायम हुई। पूना में केन्द्रीय शासन संगठित हुआ। अब मराठे भिन्न-भिन्न दिशाओं में राज्य-विस्तार के लिये तत्पर हो गये।

अभी समस्त दक्षिणी भारत पर मराठा का आधिपत्य कायम नहीं हुआ था। सदाशिवराम के नेतृत्व में दक्षिण में साम्राज्यवादी नीति जारी हुई। कर्नाटक पर हमला हुआ और मराठों को वहाँ के नवाब से बहुत बड़ी धनराशि प्राप्त हुई। मैसूर पर भी हमला हुआ किन्तु हैदर के उदय के कारण विशेष सफलता नहीं मिली। हैदराबाद में निजामुलमुल्क की मृत्यु हो चुकी थी। सलावतजंग गद्दी पर बैठा था और उसकी मदद के लिये फ्रांसीसी सेनाएं मौजूद थीं। मराठों ने हैदराबाद पर भी आक्रमण कर दिया। उदगीर के युद्ध में निजाम की पराजय हुई। दोनों में सन्धि हुई। मराठों को बीजापुर, बीदर तथा असीरगढ़ प्राप्त हुए।

इस तरह दक्षिण में मराठों को शानदार सफलता प्राप्त हुई किन्तु उधर अंगरेजों और हैदर की प्रगति के कारण मराठे अपनी विजयों का पूरा उपभोग नहीं कर सके।

उत्तरी भारत में मराठा राज्य का विस्तार—उत्तरी भारत में भी राज्य-विस्तार हुआ। जयपुर और भरतपुर के राजपूत राज्यों से चौथ वसूल

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

किया गया। रघुजी भोंसले के नेतृत्व में मराठों ने उड़ीसा और बंगाल पर हमला किया और खूब लूटपाट किया। अन्त में बंगाल के नवाब अलीवर्दी खाँ ने १२ लाख रुपया चौथ के रूप में देना स्वीकार किया। उड़ीसा पर भी मराठों का अधिकार मान लिया गया।

पेशवा के भाई रघुनाथ राव (राघोबा) के नेतृत्व में मराठों ने उत्तरी भारत के कई अन्य भागों को रौंद डाला। दिल्ली और पंजाब पर महत्वपूर्ण विजय प्राप्त हुई। दिल्ली की गद्दी पर अहमद शाह को हटाकर आलमगीर द्वितीय को बैठाया गया। इस कार्य में मराठों ने मुगल वजीर इमादुलमुल्क को सहायता दी थी। अतः अब मुगल सम्राट और वजीर दोनों मराठों के प्रभाव में थे।

इस बीच अहमदशाह अब्दाली ने दिल्ली पर चढ़ाई (चौथा भारतीय आक्रमण) कर दी। मुगल सम्राट ने अपनी हार मान ली और पंजाब उसे सौंप दिया। सम्राट पर नियंत्रण रखने के लिये नजीबुद्दौला को दिल्ली में नियुक्त किया गया। अब्दाली ने अपने लड़के तिमूर को पंजाब का सूबेदार नियुक्त किया। इसके बाद वह अपने देश की ओर लौट गया।

लेकिन अब्दाली की अनुपस्थिति में रघुनाथ राव ने फिर दिल्ली पर (१७५७-५८) हमला किया। अब्दाली का प्रतिनिधि नजीबुद्दौला परास्त हुआ और पकड़ा गया। इससे मुगल सम्राट और वजीर दोनों ही बहुत खुश हुए और मराठों का खूब स्वागत किया गया। इसके बाद पंजाब की बारी आई। उस पर भी हमला हुआ। अफगान हार गये। अफगान सूबेदार तिमूर भाग चला। मराठों ने पंजाब के लिये अपना सूबेदार (अदीना बेग खाँ) नियुक्त किया।

इस प्रकार साहू और बाजीराव प्रथम की इच्छा पूरी हुई। मराठों ने अटक तक अपना ध्वज फहरा दिया। लगभग समस्त भारत पर मराठों का प्रभुत्व कायम हो गया मराठा राज्य पूर्व और पश्चिम में समुद्र से घिर गया। यह उत्तर में पंजाब से लेकर दक्षिण में कर्नाटक तक फैला हुआ था।

पानीपत का तीसरा युद्ध

१७६० ई० के अन्त तक मराठा शक्ति अपने विकास की चरम सीमा पर पहुँच गयी। अब पतन की ही संभावना थी। अतः बड़ी सावधानी की आवश्यकता थी किन्तु इस पर विशेष ध्यान नहीं दिया गया। १७६१ ई० में ही मराठों और अफगानों में पानीपत के मैदान में युद्ध छिड़ गया। यह युद्ध कई दृष्टियों से हानिकारक सिद्ध हुआ।

अहमदशाह अब्दाली के प्रारंभिक हमले—अहमदशाह अब्दाली (दुर रानी) नादिरशाह की सेना में एक नायक था। वह बड़ा ही वीर, साहसी एवं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

महत्वाकांक्षी था। सैनिकों ने अन्त में नादिरशाह से असन्तुष्ट होकर विद्रोह कर दिया। नादिरशाह का वध हो गया। अब सैनिकों ने अब्दाली को ही अपना सेनापति तथा सम्राट बनाया।

उधर पंजाब में शाहनवाज खाँ मुगल सूबेदार था। वह स्वतन्त्र राज्य कायम करना चाहता था। उसने अब्दाली से सहायता माँगी। अब्दाली भारत पर हमला करने के लिये तैयार हो गया। उसने पहला हमला मुगल सम्राट मुहम्मद शाह के समय में (१७४८) पंजाब पर किया किन्तु वह हार कर वापस चला गया। फिर दूसरे ही साल (१७४९) अहमदशाह के समय में पंजाब पर हमला हुआ। इस बार पंजाब का मुगल सूबेदार हार गया और उसने वार्षिक कर देना स्वीकार किया। लेकिन इस वादे का पालन नहीं हुआ। अतः १७५२ ई० में तीसरी बार पंजाब पर हमला हुआ। इस बार मुगल सम्राट अहमदशाह ने अपनी हार मान ली और पंजाब तथा मुलतान पर अब्दाली का अधिकार मान लिया। लेकिन १७५४ ई० में आलमगीर द्वितीय के वजीर इमादुलमुल्क ने पंजाब पर अधिकार कर लिया। अतः १७५६ ई० में अब्दाली ने चौथी बार पंजाब पर हमला किया। उसने दिल्ली पर भी हमला किया। उसने दिल्ली में नजीबुद्दौला को अपना प्रतिनिधि रख छोड़ा। उसने पंजाब को अपने पुत्र तिमूर के अधीन सौंपा। इसके बाद लूटपाट का धन लेकर अब्दाली लौट गया।

पानीपत के युद्ध का कारण—अब मुगल सम्राट और उसके वजीर इमादुलमुल्क ने पंजाब से अफगानों को भगाने के लिये मराठों से मदद माँगी। मराठे तैयार हो गये। मराठों की मदद से नजीबुद्दौला को गिरफ्तार कर लिया गया। इसके बाद पंजाब पर भी हमला हुआ। तिमूर भाग चला और पंजाब पर मराठों का अधिकार हो गया। मराठों ने अदीनाबेग खाँ को अपना सूबेदार नियुक्त किया।

मराठों ने रुहेलखण्ड पर भी हमला किया था। वहाँ भी अफगान लोग रहते थे। उन अफगानों ने भी मराठों के विरुद्ध अब्दाली से शिकायत की थी। अतः अब्दाली ने भारत पर पाँचवीं बार हमला कर दिया। उसने दिल्ली पर अधिकार कर लिया। मुगल या मराठे उसकी प्रगति को रोक नहीं सके। अब पेशवा ने सदाशिवराव भाऊ के नेतृत्व में एक विशाल सेना भेजी। अफगान और मराठे दोनों एक दूसरे का सामना करने के लिये पानीपत के मैदान में इकट्ठे हुए।

घटनाएँ—मराठों ने अफगानों पर हमला करने में शीघ्रता नहीं की। करीब दो महीने ऐसे ही समाप्त हो गये। मराठे अपने घर से दूर चले आये थे।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अब्दाली ने चारों ओर से रास्ते को घेरवा लिया ताकि मराठों को बाहर से रसद आदि नहीं मिल सके। अब्दाली का उद्देश्य पूरा हुआ। जब मराठों की खाद्य सामग्री समाप्त होने लगी तो उनकी बेचैनी बढ़ने लगी। उन्होंने चट अफगानों पर हमला कर दिया। कई घंटों तक लड़ाई होती रही। प्रारंभ में मराठों को सफलता मिल रही थी किन्तु अन्त में युद्ध का पासा पलट गया। पेशवा का पुत्र विश्वासराव मारा गया। इससे सदाशिवराव का भी दिल टूट गया। मराठे सैनिक घबड़ा कर भागने लगे। अफगानों ने उनकी खूब खबर ली। सदाशिवराव तथा अन्य कई मराठे सैनिक मौत के घाट उतर गये। अफगानों को विजय श्री मिली।

परिणाम—पानीपत का तीसरा युद्ध भारतीय इतिहास में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। यह निर्णायक युद्ध था। इसके कई परिणाम हुए—

(१) धन-जन का विनाश—पहला स्पष्ट परिणाम हुआ धन-जन का विनाश। बहुत धन बर्बाद हुआ और साथ ही बहुत से लोग मारे गये। २५ हजार से अधिक ही मराठा सैनिक तलवार के घाट उतरे। सर यदुनाथ सरकार का कथन है कि "यह युद्ध एक जातीय विनाश था। महाराष्ट्र में कोई भी ऐसा घर नहीं था जिसमें किसी न किसी मृत व्यक्ति के लिये शोक न मनाया गया हो। बहुत से घरों के तो मालिक ही मारे गये थे और बहुतों की पीढ़ियाँ तक समाप्त हो गयीं।" मारे जाने वालों में बहुत से सैनिक और सेनापति ही थे।

पानीपत में मराठों की हार एवं क्षति से पेशवा बालाजी बाजीराव के हृदय में गहरी चोट पहुँची। उसका दिल दर्द से भर गया। इसके बाद उसी साल वह भी इस संसार से चल बसा।

(२) मराठों की कमजोरी—धन-जन के विनाश से मराठों की शक्ति कमजोर हो गयी। अब उनसे किसी को कोई भय नहीं रह गया। उनका उत्साह घट गया लेकिन उनके दुश्मनों का उत्साह बढ़ गया।

लेकिन याद रहे कि मराठे कमजोर ही हुए, बिलकुल नष्ट नहीं हो गये। १७६१ ई० के बाद भी चौथे पेशवा माधवराव के समय में उनकी शक्ति में वृद्धि हुई। अतः १७७२ ई० में माधवराव के मरने से मराठों को बहुत क्षति हुई। अतः एक इतिहासकार का कहना है कि मराठों को पानीपत की हार से उतनी क्षति नहीं हुई जितनी माधवराव की असामयिक मृत्यु से हुई।

(३) मराठे आदर्श की अपूर्णता—मराठों का आदर्श था मुगल साम्राज्य के अवशेष पर हिन्दू साम्राज्य स्थापित करना। अब उनका यह आदर्श अपूर्ण रह गया—उनका सुन्दर स्वप्न भंग हो गया।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(४) अन्य शक्तियों की प्रगति—मराठों के कमजोर होने से दक्षिण में मैसूर के हैदर को बढ़ने का मौका मिला। सबसे बढ़कर भारत में ब्रिटिश साम्राज्य की स्थापना में मदद मिली। अंगरेज ४ वर्ष पूर्व प्लासी में विजय प्राप्त करके अंगरेजी साम्राज्य की स्थापना के लिये नींव तैयार कर चुके थे। उनके मार्ग में मराठे बहुत बड़े बाधक थे किन्तु १७६१ ई० में मराठों के कमजोर होने से अंगरेजों के मार्ग में जो बड़ी बाधा थी वह आप से आप दूर हो गयी। मराठों को कमजोर करने के लिये अंगरेजों को कोई तैयारी नहीं करनी पड़ी। इस तरह पानीपत के युद्ध में तीसरी बार भारत का भाग्यनिर्णय हुआ। तीन वर्ष के ही बाद अंगरेजों ने बक्सर में विजय प्राप्त कर अपने साम्राज्य की नींव दृढ़ कर ली।

(५) अब्दाली की वापसी यात्रा—अब्दाली ने ५ बार भारत पर हमला किया था। यह उसका अन्तिम हमला था। किन्तु वह दिल्ली और पंजाब से आगे नहीं बढ़ सका। अफगान भी लड़ते-लड़ते थक गये थे। उन्हें भी पानीपत के युद्ध में कम परेशानी नहीं उठानी पड़ी। अफगानों की ओर भी धन-जन की हानि हुई। अतः अब्दाली विजय प्राप्त कर और कुछ धन-दौलत लेकर भारत से लौट गया।

(६) पंजाब में सिक्खों की प्रगति—मराठों के हारने और अफगानों के लौट जाने से पंजाब में सिक्खों की प्रगति के लिये सुअवसर मिला। इस तरह पंजाब में रणजीत सिंह सिक्ख राज्य स्थापित करने में समर्थ हुआ।

मराठों की हार के कारण

पानीपत के तीसरे युद्ध में मराठों की हार के निम्नलिखित अनेक कारण थे:—

(१) सदाशिवराव की दुर्बलताएँ—मराठा सेना का सबसे बड़ा नायक सदाशिवराव भाऊ था। उसे पहले कुछ युद्धों में विजय प्राप्त हो चुकी थी। अतः वह अपनी शक्ति एवं योग्यता में जरूरत से बहुत अधिक विश्वास करने लगा था। वह अहंकारी और दंभी हो गया था। वह किसी की सलाह पर ध्यान नहीं देता था और बहुत कुछ मनमाना काम करने लगा। इस तरह उसने अपने बहुत से साथियों को असन्तुष्ट कर दिया। उसने कई अन्य भूलें भी कीं जो हानिकारक सिद्ध हुईं।

मराठा सैनिक सुसज्जित एवं सुशिक्षित नहीं थे। तोपखाने का नायक इब्राहिम गार्दी था किन्तु वह भी बहुत योग्य नहीं था। उसके तोपची भी संगठित और प्रशिक्षित नहीं थे। सैनिकों के पास बन्दूकों का भी अभाव था और बन्दूकों की बहुत जरूरत थी।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भाऊ व्यूह रचना में भी कुशल नहीं था। वह यूरोप की नकल करना चाहता था किन्तु इसके लिये भी उसमें क्षमता नहीं थी। पैदल बन्दूकचियों के पीछे घुड़सवार तैनात नहीं किये गये थे।

भाऊ में साहस एवं धैर्य का भी अभाव था। वह पेशवा के पुत्र विश्वासराव को मरा हुआ देख कर घबड़ा गया और अपना साहस खो बैठा। अब वह अपने सैनिकों में आत्मविश्वास नहीं पैदा कर सकता था। फिर एक समय वह अपने हाथी से अचानक नीचे उतर गया। इससे सैनिक हतोत्साह हो गये थे। उन्हें ऐसा लगा कि उनका नेता मारा गया।

मराठे सैनिकों की संख्या भी कम ही थे। वे ४५ हजार थे किन्तु अफगान सैनिक ६० हजार थे।

(२) पुरानी युद्ध नीति का त्याग – मराठे छापामार युद्ध में बहुत दक्ष थे किन्तु उन्होंने पानीपत के मैदान में आमने-सामने युद्ध करने का निश्चय किया। इस तरह उन्होंने अपनी परम्परागत युद्धनीति का त्याग कर बड़ी भूल की।

(३) समय का दुरुपयोग—युद्ध क्षेत्र में पहुँचने पर भी मराठों ने दो महीने का समय प्रतीक्षा में गँवा दिया। तब तक अफगानों ने अपनी पूरी तैयारी कर ली और चारों ओर से रास्ते को घेर लिया। इससे मराठों को नयी रसद मिलने में कठिनाई होगई और पुरानी रसद समाप्त होने लगी।

४. संगठन का अभाव—मराठे चार प्रमुख रियासतों में बँट गये थे—गायकवाड़, सिन्धिया, होल्कर और भोंसले। इन लोगों में संगठन एवं राष्ट्रीयता का अभाव था। मराठी सेना में अनेक सेनापति थे और उनमें एकता नहीं थी।

५. अन्य जातियों के सहयोग का अभाव—अभी भारत के समस्त लोगों में ही राष्ट्रीय भावना बलवती नहीं थी। अतः राजपूतों, सिक्खों तथा जाटों ने मराठों को कोई मदद नहीं दी। वे युद्ध की ओर से उदासीन रहे।

६. अफगानों का सैन्य संगठन—मराठों की तुलना में अफगान सैनिकों की संख्या अधिक थी। वे सुसज्जित एवं सुसंगठित थे। उनके पास बन्दूक बहुत थे। अन्य सामानों की भी कमी नहीं थी। सबसे बढ़कर उनका सेनापति अब्दाली बहुत ही योग्य एवं साहसी था। सैनिकों का उसके नेतृत्व में दृढ़ विश्वास था।

मराठों का पुनरुत्थान

माधवराव—बालाजी बाजीराव के मरने (१७६१) के बाद उसका पुत्र माधवराव चौथा पेशवा हुआ। अभी वह १६ वर्ष का लड़का था। अतः उसका चाचा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रघुनाथ राव उसका संरक्षक बनकर राजकाज देखने लगा। माधवराव बड़ा ही योग्य एवं दूरदर्शी व्यक्ति था। बालिग होते ही उसने शासन की बागडोर अपने हाथों में ले ली। पानीपत में हार होने से मराठों की जो भयंकर क्षति हुई थी उसे पूरा करने के लिये माधवराव ने भरपूर कोशिश की। इसमें उसे बहुत कुछ सफलता भी मिली।

विजय—हैदराबाद के निजाम और मैसूर के हैदरअली मराठों की कमजोरी से लाभ उठाने के लिए प्रयत्नशील थे। इन दोनों ने मराठों के कई इलाकों को दखल कर लिया था। निजाम के पास बहुत सैनिक थे। माधवराव ने उसके विरुद्ध युद्ध छेड़ दिया। तीन वर्षों तक लड़ाई होती रही। अन्त में निजाम की ही हार हो गई। हैदरअली के साथ भी लड़ाई हुई। उसके साथ तीन बार लड़ाई हुई। अन्त में हैदर को भी हारना पड़ा। उसने क्षतिपूर्ति के रूप में ३१ लाख रुपया मराठों को दिया। निजाम और हैदर ने मराठों के जिन इलाकों पर अधिकार कर लिया था वे इलाके भी मराठों को फिर प्राप्त हो गये।

अंग्रेजों से मित्रता—उस समय भारत में अंग्रेजों की भी शक्ति बढ़ने लगी थी। मराठों को अंग्रेजों से भय था कि वे उनकी प्रगति में बाधक हो सकते थे। माधवराव ने उनसे युद्ध करना उचित नहीं समझा। अतः उनके साथ एक सन्धि कर ली गई जिससे दोनों में मित्रता स्थापित हो गई।

अन्य जातियों पर प्रभुत्व—राजपूतों, जाटों तथा रुहेलों ने भी मराठों का प्रभुत्व मानकर उन्हें चौथ देने के लिये अपनी स्वीकृति दी।

शाहआलम को सहायता—मुगल सम्राट शाहआलम द्वितीय गद्दी से वंचित हो गया था। वह पिछले १२ वर्षों से (१७६०-७२ ई०) इधर-उधर भटकते हुए ठोकरें खा रहा था। मराठों ने उसे सहायता प्रदान की। सिन्धिया के नेतृत्व में दिल्ली एक सेना भेजी गई। ऐसी सेना की मदद से शाहआलम को गद्दी प्रदान की गई। शाहआलम ने मराठों के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट की और उन्हें ४० लाख रुपया देना स्वीकार किया। उसने मराठों की प्रभुता भी मान ली।

मृत्यु—इस तरह माधवराव के नेतृत्व में मराठों की शक्ति बड़ी तेजी से बढ़ रही थी। पानीपत के मैदान में हारने से जो घाव पैदा हो गया वह अब भरने लगा था। किन्तु २८ वर्ष की ही उम्र में माधवराव इस संसार से (१७७२ ई०) चल बसा। उसकी असामयिक मृत्यु से मराठों की बड़ी क्षति हुई। एक लेखक का मत है कि पानीपत के युद्ध में हारने से मराठों को उतनी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

क्षति नहीं हुई जितनी क्षति माधवराव पेशवा की असामयिक मृत्यु से हुई। उसके मरने के बाद मराठे निश्चित रूप से पतन के मार्ग पर अग्रसर हो गये।

अन्य पेशवा—माधवराव के बाद और तीन पेशवा हुए—नारायणराव (१७७२-७३), माधवराव द्वितीय (१७७४-९६) और बाजीराव द्वितीय (१७९६-१८१८)। ये पेशवा योग्य और बुद्धिमान् नहीं थे। इनके समय में अंग्रेजों से तीन बार युद्ध हुए। अन्तिम युद्ध १८१७ ई० में हुआ। पेशवा की हार हो गई। उसे ८ लाख रुपये की वार्षिक पेंशन मंजूर कर दी गई। वह कानपुर के निकट बिठूर नामक स्थान पर रहने के लिये बाध्य किया गया। वहाँ उसे जागीर भी प्रदान कर दी गई। इस तरह मराठों के गौरवपूर्ण इतिहास का अन्त हो गया।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अध्याय १६

मुगल शासन प्रणाली

विशेषताएँ

१. मिश्रित शासन प्रणाली—मुगल शासन प्रणाली में देशी और विदेशी तत्वों का मिश्रण था। श्री यदुनाथ सरकार के शब्दों में मुगल शासन-प्रणाली भारतीय एवं अभारतीय तत्वों का मिश्रण थी या यह भारतीय पृष्ठभूमि में फारस एवं अरब की प्रणाली थी। दूसरे शब्दों में मुगल विदेशी थे और उन्होंने विदेशी शासन प्रणाली का भारतीयकरण कर दिया था। केन्द्रीय और प्रान्तीय क्षेत्रों में विदेशी तत्वों की और स्थानीय क्षेत्रों में भारतीय तत्वों की प्रधानता थी।

२. निरंकुशता—मुगल सम्राट निरंकुश एवं स्वेच्छाचारी था। शक्ति का पार्थक्य सिद्धान्त लागू नहीं था। सम्राट की शक्ति असीमित थी। उसके ऊपर कोई नियंत्रण नहीं था। मन्त्री या सलाहकार होते थे किन्तु उनकी बात मानना सम्राट की इच्छा पर ही निर्भर करता था। यदि सम्राट योग्य एवं चतुर होता था तो उसके सलाहकारों का कोई वश नहीं चलता था। इस तरह मुगल साम्राज्य में राजतन्त्र निरंकुशता पर आधारित था। मुगल सम्राटों ने इस्लाम को अपना आदर्श बनाया था और वे कुरान से बहुत प्रभावित थे किन्तु यहाँ भी उनकी इच्छा ही सर्वोपरि थी। अकबर इस्लाम से प्रभावित नहीं हुआ किन्तु मौलवी और उलेमा उसका कुछ बिगाड़ नहीं सके। उसे पदच्युत करने के लिये किसी ने हिम्मत नहीं की। इस प्रकार मुगल सम्राट धर्म एवं राजनीति दोनों क्षेत्रों में शक्तिशाली बने रहे।

३. सैनिकवाद—निरंकुश राजतन्त्र की शक्ति का आधार सैनिकवाद था। मुगल साम्राज्य में सैनिकों की प्रधानता थी। मुगल विदेशी एवं विजेता थे। अतः उनकी शक्ति का प्रमुख स्रोत सेना ही थी। जबतक सेना सशक्त रही

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jagaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तबतक मुगल सम्राट बाहरी हमलों और भीतरी विद्रोहों से सुरक्षित रहे किन्तु सैनिक शक्ति के कमजोर होते ही उपद्रवों और बाधाओं की वृद्धि होने लगी।

४. **साम्राज्यवादिता**—अनेक पूर्ववर्ती सम्राटों की तरह मुगल सम्राटों का उद्देश्य भी साम्राज्य विस्तार था। बाबर से लेकर औरंगजेब तक—सभी राज्य एवं सीमा विस्तार के लिये प्रयत्नशील थे।

५. **केन्द्रीयकरण**—मुगल शासन व्यवस्था केन्द्रीयकरण के सिद्धान्त पर आधारित था। सम्राट का स्थान सर्वोपरि था। आजकल की तरह न तो मंत्रिमंडल था और न कोई पार्लियामेंट थी। सम्राट सर्वेसर्वा था। स्थानीय वैयक्तिक प्रभुता पर बहुत जोर दिया जाता। स्थानीय शासन व्यवस्था ग्रामों तक ही सीमित थी। फिर भी केन्द्र की भुजा समस्त राज्य में फैली हुई थी। केन्द्रित शासन होने के कारण राजधानी में कागजों या फाइलों की भरमार रहती थी। अतः मुगल राज्य को कागजी राज्य भी कहते हैं।

६. **सर्वसाधारण के सहयोग का अभाव**—मुगल साम्राज्य सर्वसाधारण के सहयोग एवं सद्भावना पर कायम नहीं था। मुगल राज्य कल्याणकारी राज्य नहीं था बल्कि पुलिस राज्य था। राज्य में कुछ समय शान्ति एवं व्यवस्था कायम रही किन्तु व्यापक स्तर पर समाज के हित की दृष्टि से सांस्कृतिक विकास के लिये कोई प्रयत्न नहीं हुआ। केवल अकबर के समय में कुछ सीमा तक प्रजा के हित को ध्यान में रखा गया किन्तु अन्य मुगल सम्राटों के समय में नहीं। शिक्षा, साहित्य एवं कला के क्षेत्र में जो कुछ विकास हुआ वह सम्राटों की राजसी एवं तामसी प्रवृत्तियों को सन्तुष्ट करने के फलस्वरूप हुआ था। मुगल सम्राटों में वैभव-प्रदर्शन की भावना बलवती थी।

७. **धार्मिक असहिष्णुता**—अकबर को छोड़कर अन्य मुगल सम्राट धार्मिक दृष्टि से असहिष्णु एवं संकीर्ण थे। शाहजहाँ और औरंगजेब में असहिष्णुता अपनी चरम सीमा पर पहुँच गयी थी। इस तरह मुगल सम्राट अपनी मुस्लिम प्रजा के हित की ओर विशेष ध्यान देते थे। हिन्दुओं की उपेक्षा की जाती थी और उनको धार्मिक भावना पर चोट पहुँचायी जाती थी। हिन्दू प्रजा कर देती थी किन्तु उस अनुपात में उनके साथ उचित व्यवहार नहीं होता था।

१. केन्द्रीय शासन

सम्राट—मुगल सम्राट शासन का प्रधान था। वह सर्वोच्च शासक, सेनापति और न्यायाधीश था। उसकी शक्ति सर्वोपरि थी। धार्मिक क्षेत्र में भी उसी की

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रधानता थी। वह ईश्वर का अंश समझा जाता था। वह इस्लाम का संरक्षक और मुस्लिम प्रजा का शुभचिन्तक था। सैद्धान्तिक रूप से सम्राट कुरान के नियमों से बंधा हुआ था। इन नियमों की उपेक्षा करने पर सम्राटों को पदच्युत किया जा सकता था। किन्तु अकबर जैसा शक्तिशाली सम्राट कुरान की आयतों का अर्थ भी अपनी इच्छा के अनुसार लगवा लेते थे। धर्माचार्यों ने भी अकबर को धार्मिक विषयों में भी सर्वोच्च अधिकारी मान लिया था।

सम्राट को सलाह देने के लिये मंत्रिमंडल था। शासन की सुविधा के लिये मंत्रियों के अधीन विभाग सौंपे गये थे। वजीर या वकील सर्वोच्च मंत्री था। उसे प्रधान-मंत्री कह सकते हैं। किन्तु आधुनिक मंत्रिमंडल से उसकी तुलना नहीं हो सकती। सम्राट के लिये मंत्रियों की सलाह मानना आवश्यक नहीं था। सलाह मानना उसकी इच्छा पर निर्भर करता था। अतः मंत्रियों को सचिव और मंत्रि-मंडल को सचिवालय कहना कहीं अधिक उचित एवं उपयुक्त है। मंत्रियों की कमजोर स्थिति का प्रमुख कारण यह था कि उनका पद वंशानुगत नहीं था। उनकी नियुक्ति और उनकी उन्नति तथा अवनति–सब सम्राट की इच्छा पर निर्भर करती थी। अतः मन्त्री सम्राट को हर तरह से खुश रखने के लिये ही प्रयत्नशील रहा करते थे।

सम्राट सभी प्रमुख पदाधिकारियों को नियुक्त करता था। वही उन्हें पदच्युत भी कर सकता था। जब सम्राट अयोग्य रहता था तो योग्य मंत्रियों की प्रधानता रहती थी। बड़े मुगल सम्राटों में कुछ सम्राट थे जो अपनी प्रजा के हित का ध्यान रखते थे। उन्हें उदार और निरंकुश शासक कह सकते हैं।

सम्राट को बहुत से विशेषाधिकार प्राप्त थे। वही उपाधियों का वितरण करता था। वह अपनी प्रजा को सवेरे दर्शन देता था। इसे झरोखा दर्शन कहते थे। राजकीय आदेशों पर वही मुहर लगा सकता था। वही किसी को अंग-भंग का दंड दे सकता था। उसके बहुत से कर्त्तव्य भी थे। बहुत से मुगल सम्राट राज्य के ही कामों में अपना अधिकांश समय व्यतीत करते थे। वे बहुत से कार्य अपने ही करते थे। वे बहुत से आदेशों को स्वयं लिखते या लिखवाते थे।

प्रमुख पदाधिकारी—केन्द्र में निम्नलिखित प्रमुख विभाग एवं पदाधिकारी थे :—

१. **वकील**—सम्राट के बाद वकील सबसे बड़ा पदाधिकारी था। कुछ सीमित अर्थ में उसे प्रधानमंत्री (वजीरे आजम) कह सकते हैं। वह सम्राट के बहुत ही निकट सम्पर्क में रहता था। सम्राट की अनुपस्थिति में वही राजकाज

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

देखता था। वह राज्य के किसी भी क्षेत्र में निरीक्षण कर सकता था। वह सैन्य अभियान में भी जाता था। अकबर के राज्यकाल में बैरम खाँ और अबुलफजल बारी-बारी से इस पद पर नियुक्त हुए थे।[1]

२. दीवान—दीवान मुगलकाल का वित्तमंत्री था। वही राजस्व-विभाग एवं कोष का प्रधान था। उसी की अनुमति से कोष से रकम निकाली जाती थी। आय-व्यय की देखभाल वही करता था। कर वसूली का भार भी उसी के ऊपर था। अकबर के राज्यकाल में टोडरमल इस पद पर नियुक्त हुआ था।

३. बख्शी—बख्शी को मीरबख्शी भी कहा जाता था। वह सेना-विभाग का प्रधान था। वही सेना में लोगों को भरती करता था। वह मनसवदारों की सूची बनाता था। उसी की राय से मनसबदारों को युद्ध के सामान मिलते थे और उनका उत्थान या पतन होता था। वह वेतन भी बाँटता था।

४. खानसामा—खानसामा राजकीय गृह-विभाग का प्रधान था। वह सम्राट के रसोईघर, हरम, नौकर-चाकर आदि की व्यवस्था करता था। इस पद पर वही व्यक्ति नियुक्त होता था जो सम्राट का बहुत विश्वासी होता था।

५. सद्र उससदर—सद्र उससदर धर्मार्थ-विभाग का प्रधान था। इस पद पर शुद्ध आचार-विचार वाले की नियुक्ति होती थी। उसी की सिफारिश पर किसी संस्था या व्यक्ति को दान या आर्थिक मदद दी जाती थी।

६. प्रधान काजी—प्रधान काजी को काजी-उल-कुजात कहते थे। वह न्याय-विभाग का अध्यक्ष था। वह मुस्लिम परम्परा के अनुसार फौजदारी मामलों का निर्णय करता था। वह समुचित न्याय के लिये उत्तरदायी था।

७. चरित्र निरीक्षक—चरित्र निरीक्षक को मुहतसिब कहा जाता था। वह लोगों खासकर मुस्लिम जनता के आचरण पर निगरानी रखता था। इस्लामी नियमों के विरुद्ध आचरण करने वाले को दंड दिया जाता था। औरंगजेब कट्टर सुन्नी मुसलमान था। अतः उसके समय में मुहतसिब के पद का महत्त्व बहुत बढ़ गया था।

उपर्युक्त पदाधिकारियों के अतिरिक्त कुछ और भी पदाधिकारी थे। तोपखाने के प्रधान को मीरआतिष, गुप्तचर-विभाग के प्रधान को दारोगा-ए-डाक चौकी,

---

१. कभी-कभी दीवान को वकील के पद पर भी नियुक्त कर दिया जाता था।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सिक्का निर्माण-विभाग के प्रधान को दारोगा-ए-टकसाल और समुद्री बेड़े के प्रधान को मीरबहर कहते थे।

प्रान्तीय शासन

प्रान्तों की संख्या—मुगल साम्राज्य विशाल था। अतः शासन की सुविधा के लिये इसे कई प्रान्तों में विभाजित कर दिया गया था। भिन्न-भिन्न सम्राटों के समय में प्रान्तों की संख्या भी भिन्न-भिन्न थी। अकबर के समय में सूबों की संख्या १५ थी, जहाँगीर के समय में इनकी संख्या १७, शाहजहाँ के समय में २२ और औरंगजेब के समय में २० या २१ थी। केन्द्र की ही तरह प्रान्तों का भी शासन प्रबन्ध था। श्री यदुनाथ सरकार के शब्दों में 'सूबों में प्रशासकीय ढाँचा केन्द्रीय शासन के ही अनुरूप था।' केन्द्र की तरह प्रान्तों में भी कई मुख्य अधिकारी रहते थे।

१. **सूबेदार**—प्रान्तों के मुख्य पदाधिकारियों में सूबेदार का स्थान सर्वोपरि था। वह अपने प्रान्त का प्रधान था। वह शासन तथा सेना दोनों का ही प्रधान था। वह अपने प्रान्त का सबसे बड़ा न्यायाधीश भी था। लेकिन वह मृत्युदंड नहीं दे सकता था। वह किसी से युद्ध या सन्धि भी नहीं कर सकता था। वह अपने प्रान्त में शान्ति-व्यवस्था के लिये उत्तरदायी था। वह दीवान की मदद से कर वसूली का भी प्रबन्ध कर देता था। वह सम्राट के प्रति उत्तरदायी था। उसे सिपहसालार या नाजिम भी कहते थे।

२. **दीवान**—दीवान भी प्रान्त का प्रमुख पदाधिकारी था। वह सूबेदार के अधीन नहीं बल्कि उसके समान था। सूबेदार राजनैतिक क्षेत्र में तो दीवान आर्थिक क्षेत्र में सर्वेसर्वा था। वह केन्द्र की ओर से नियुक्त होता था और केन्द्रीय दीवान के प्रति वह उत्तरदायी था। वह किसानों को कर्ज देता था।

३. **काजी या सदर**—काजी का सम्बन्ध न्याय से और सदर का सम्बन्ध दान-पुण्य से था। प्रान्त में दोनों कामों के लिये एक ही व्यक्ति की नियुक्ति होती थी।

४. **बख्शी**—बख्शी प्रान्त में सेना सम्बन्धी कार्यों के लिये उत्तरदायी था। सैनिकों की भर्ती, उनकी उन्नति और उनकी बदली—ये सब उसी के अधीन थे।

५. **फौजदार**—फौजदार शान्ति-व्यवस्था की स्थापना में सूबेदार का सहायक था।

६. **कोतवाल**—बड़े-बड़े नगरों में शान्ति-व्यवस्था के लिये कोतवाल नियुक्त होते थे। उनके कर्त्तव्य बहुत विस्तृत थे।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

स्थानीय शासन

सरकार—प्रान्त सरकारों में विभाजित था। सरकार आधुनिक जिले की तरह था। इसका प्रधान फौजदार कहलाता था। सूबेदार उसे नियुक्त करता था। उसके अधीन सेना की एक टुकड़ी रहती थी। वह सरकार में शान्ति-व्यवस्था के लिये उत्तरदायी था। वह करवसूली में भी मदद करता था।

परगना—सरकार परगनों में विभाजित था। परगना का प्रधान शिकदार था। उसकी मदद के लिये भी कई कर्मचारी होते थे। आमिल लगान वसूलने के लिये उत्तरदायी था। फोतदार खजांची था। कानूनगो भूमिसम्बन्धी रेकार्ड का मालिक था।

ग्राम—ग्रामों में पंचायतों की व्यवस्था थी। पंचायतें बहुत से स्थानीय कामों की देखभाल कर लिया करती थीं। वे छोटे-मोटे झगड़ों का भी निर्णय कर लेती थीं। ग्राम के मुखिया को मुकद्दम कहते थे। वह लगान-वसूली और शान्ति-स्थापना के लिये विशेष रूप से उत्तरदायी था।

२. राजस्व प्रणाली

सल्तनत काल में देश की समस्त भूमि जागीरदारों के अधीन थी। वे मनमाने ढंग से रैयत से लगान वसूल करते थे और निश्चित रकम सरकार को देकर बाकी अपनी पाकिट में रख लेते थे। इस प्रथा में प्रजा को बहुत कठिनाइयाँ थीं। सरकार के साथ किसानों का सीधा सम्बन्ध नहीं था। बाबर और हुमायूँ के समय में भी यही प्रणाली प्रचलित थी। किन्तु शेरशाह ने राजस्व के सम्बन्ध में नयी व्यवस्था की। उसने जागीरदारी प्रथा तोड़ दी। अकबर के समय में शेरशाह की नीति के ही आधार पर नयी राजस्व व्यवस्था स्थापित हुई। इसका श्रेय टोडरमल को प्राप्त है। अकबर के समय में जो व्यवस्था कायम हुई वह सम्पूर्ण मुगल काल में मामूली हेरफेर के साथ कायम रही। अकबर की राजस्व व्यवस्था की निम्नलिखित विशेषताएँ हैं:—

(क) **भूमि की पैमाइश**—सारी भूमि की पैमाइश कराई गई। शेरशाह ने रस्सी की जरीब से भूमि की माप करायी थी। सूखी या भींगी रहने पर वह रस्सी बढ़ या घट जाती थी। अतः भूमि की शुद्ध पैमाइश नहीं हो पाती थी। टोडरमल ने लोहे की जरीब से भूमि की माप करायी। अतः वह माप बहुत शुद्ध हुई। नापने के बाद भूमि को हलकों में विभाजित कर दिया गया।

(ख) **भूमि का वर्गीकरण**—भूमि की माप के बाद उपजाऊ शक्ति के आधार पर भूमि का वर्गीकरण किया गया। उत्तम श्रेणी की भूमि को पोलज कहा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

गया। इसमें खूब उपज होती थी। मध्यम श्रेणी की भूमि को परौती कहा गया। इस भूमि को पैदावार काटने के बाद कुछ समय के लिये परती छोड़नी पड़ती थी। साधारण श्रेणी की भूमि को चाचर कहा गया। यह भूमि एक फसल के बाद चार वर्षों के लिये परती रहती थी। चौथी श्रेणी की भूमि को बंजर कहा गया। फसल के लिये यह भूमि एकदम बेकार होती थी।

(ग) निश्चित लगान—भूमि मापने के बाद यह देखा गया कि प्रतिवर्ष किस भूमि में कितना उत्पादन होता था और उसका औसत मूल्य कितना होता था। इस आधार पर प्रत्येक प्रकार की जमीन के लिये लगान निश्चित कर दिया गया। लगान उपज का $\frac{1}{3}$ भाग निश्चित किया गया।

(घ) लगान की वसूली—लगान निश्चित करने में उदारता दिखाई गई किन्तु वसूली में कड़ाई का सिद्धान्त था। किन्तु किसानों को तंग करना उद्देश्य नहीं था। किसान को लगान अन्न या नकद के रूप में देने की सुविधा थी। लगान वसूल करने के लिये कोई मध्यस्थ नहीं था। किसानों का सरकार से सीधा सम्बन्ध था। सरकारी कर्मचारियों पर कड़ा नियंत्रण था। वे किसानों को तंग नहीं कर सकते थे। आपत्तिकाल में किसानों को लगान की रकम में छूट मिलती थी।

यह व्यवस्था बहुत लाभदायक सिद्ध हुई। जागीरदारों के अत्याचार से किसानों को मुक्ति मिल गयी। अब वे उत्पादन-कार्य बड़ी तत्परता से करने लगे। इससे फसल में वृद्धि होने लगी। इससे खाद्य पदार्थ सस्ता होने लगे। इसके अलावा बाजारों में खाद्य पदार्थों तथा अन्य चीजों के मूल्यों में भी स्थिरता आने लगी। इस व्यवस्था से सरकार को भी सुविधाएँ हुईं। अब सरकार को निश्चित रकम निश्चित समय पर मिलने लगी। इससे उसे अपनी योजनाओं को बनाने तथा लागू करने में सुविधा प्राप्त हुई।

३. सैन्य-व्यवस्था

सल्तनतकाल में सैन्य-व्यवस्था त्रुटिपूर्ण थी। सुलतान सेना के लिये अपने जागीरदारों पर निर्भर करते थे। जागीरदारों को जागीरें दी जाती थीं और वे बदले में सेना की व्यवस्था करते थे। सेना पर जागीरदार का ही अधिकार रहता था। इस प्रथा में एक बड़ा दोष यह था कि सुलतान और जागीरदार में मतभेद होने पर सुलतान की स्थिति कमजोर हो जाती थी। सैनिक अपने स्वामी जागीरदार को सुलतान के विरुद्ध भी मदद देने के लिये सदा तैयार रहते थे। दूसरा दोष यह था कि जागीरदार के मरने पर उसका लड़का अयोग्य होने पर भी उसका उत्तराधिकारी बनता था।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मुगल वंश में अकबर बड़ा योग्य सम्राट हुआ। उसने जागीरदारी प्रथा के दोष को भली-भाँति समझा। अतः उसने नये सिरे से सैन्य संगठन किया। वही संगठन बाद में भी जारी रहा। अकबर की सेना तीन तरह की थी। अधीनस्थ राजपूत राजाओं के पास सेनाएँ थीं। आवश्यकता पड़ने पर ये सेनाएँ सम्राट की सहायता करती थीं। कुछ सेनाएँ सम्राट के अधीन होती थीं। इन्हें अहदी कहते थे। तीसरे प्रकार की सेना मनसबदारी सेना थी। मुगलकाल में सैन्य संगठन का प्रमुख आधार मनसबदारी प्रथा थी। अतः इस प्रथा पर विस्तारपूर्वक प्रकाश डालना आवश्यक है।

मनसबदारी का अर्थ—मनसब अरबी भाषा का एक शब्द है। इसका अर्थ होता है पद या प्रतिष्ठा। मनसब १० से लेकर १० हजार तक का होता था। ७ हजार तक का मनसब राजपरिवार वालों को और १० हजार का मनसब केवल राजकुमारों (शाहजादों) को दिया जाता था। मनसबदार अपने-अपने पद के अनुसार सेना रखते थे। आवश्यकता पड़ने पर वे सम्राट की मदद करते थे। सेना सम्बन्धी खर्च की रकम मनसबदार को ही दे दी जाती थी। मनसबदार सैनिकों को वेतन देता था और अन्य अस्त्र-शस्त्र का प्रबन्ध करता था।

सम्राट स्वयं मनसबदारों को नियुक्त करता था। सम्राट की इच्छा के अनुसार ही वे अपने पद पर बने रहते थे। उनकी पदोन्नति या पदच्युति भी सम्राट की इच्छा पर निर्भर करती थी। वह जिसे चाहता उसे मनसबदार बना सकता था।

विभाजन—मनसबदार कई श्रेणियों में विभाजित थे। इनकी ३३ श्रेणियाँ थीं और प्रत्येक श्रेणी का वेतन पद के अनुसार अलग-अलग था। १० का उच्चतम और १० का सबसे छोटा मनसब था। लेकिन अकबर के बाद १० हजार का मनसब कुछ और ऊपर तक बढ़ा दिया गया था। धीरे-धीरे मनसबदार दो तरह के हो गये। कुछ ऐसे मनसबदार थे जो अपनी श्रेणी के अनुसार सैनिक तथा सामान रखते थे किन्तु बहुत से ऐसे भी मनसबदार हो गये जिन्होंने अपनी मान-मर्यादा को कायम रखा लेकिन वे अपनी श्रेणी के अनुसार सैनिक एवं सामान नहीं रखते थे। पहले वर्ग के मनसबदार को सवार और दूसरे वर्ग के मनसबदार को जात कहते थे।

आलोचना—अकबर के समय में मनसबदारी प्रथा लाभदायक सिद्ध हुई। सैन्य-व्यवस्था में सल्तनत काल के जो दो बड़े दोष थे वे दूर हो गये। मनसबदार को विशेष रूप से योग्यता के आधार पर नियुक्त किया जाता था। उसका पद भी वंशानुगत नहीं था। अतः मुगल सेना में योग्य सैनिकों की संख्या बढ़ने लगी। पद वंशानुगत नहीं होने से विद्रोह का डर भी कम हो गया।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

लेकिन मनसबदारी प्रथा भी बिलकुल ही निर्दोष नहीं थी। इसमें भी कई त्रुटियाँ थीं। सेना का सारा प्रबन्ध मनसबदार के ही हाथ में था। किन्तु सभी मनसबदार एक समान ईमानदार नहीं होते थे। जो मनसबदार बेईमान थे वे निश्चित संख्या से कम ही सैनिक या सामान रखते थे। आवश्यकता पड़ने पर इधर-उधर से लोगों को भरती कर निश्चित संख्या पूरी कर देते थे। दूसरे, आवश्यक खर्च में कमी कर देते थे और आवश्यक हाथी, घोड़े, सामान आदि नहीं रखते थे। तीसरे, मनसबदार ही सैनिकों को वेतन बाँटते थे। वेतन बाँटने में भी गड़बड़ी होती थी। कम वेतन पर अयोग्य सैनिक भी रख लिये जाते थे और पैसे बचा लिये जाते थे।

उपर्युक्त दोषों से बचने के लिये अकबर ने घोड़ों को दागने की प्रथा चलायी। इससे घोड़ों की चोरी नहीं होती थी और घोड़े बदले नहीं जा सकते थे। सैनिकों का पूरा विवरण भी लिखा जाने लगा।

किन्तु अभी मनसबदार प्रचलित प्रथा से अनुचित लाभ उठा सकते थे। सेना पर मनसबदारों का ही पूरा प्रभाव रहता था। सम्राट के विरुद्ध संघर्ष होने पर सैनिक अपने मनसबदार का ही पक्ष लेते थे। इसके अलावा इस प्रथा के कारण सैन्य संचालन एवं युद्ध पद्धति में एकरूपता नहीं रह गयी थी। सेना में भिन्न-भिन्न जाति एवं धर्म के सैनिक थे। वे विभिन्न मनसबदारों के अधीन थे। प्रत्येक मनसबदार अपने ढंग से सेना एवं युद्ध का संचालन करता था।

मुगल सैनिक अपने साथ बहुत सामान एवं औरतों को भी लेकर चलते थे। अतः उनकी गति मन्द होती थी। उनमें अनुशासन एवं एकाग्रता का भी अभाव रहता था।

मुगल सेना में ५ विभाग थे—पैदल, घुड़सवार, तोपखाना, हाथी और नौसेना। इनमें नौसेना शक्तिशाली नहीं थी। जंगी बेड़े का अभाव था।

न्याय-व्यवस्था

न्याय का आदर्श—मुगलकाल में न्याय का आदर्श ऊँचा था। मुगल सम्राट न्यायप्रिय होते थे। किसी के प्रति अन्याय होने पर अकबर अपने विरुद्ध भी न्याय करने को तैयार रहता था। जहाँगीर की सोने की जंजीर बहुत प्रसिद्ध ही है। शाहजहाँ औरंगजेब भी न्याय करने के लिये प्रयत्नशील रहते थे। न्याय में निष्पक्षता एवं तत्परता पर जोर दिया जाता था। दोषी पदाधिकारी भी दंड का भागी होता था।

मुगल सम्राट न्याय का स्रोत समझा जाता था। वह सर्वोच्च न्यायालय था। वह नीचे की अदालतों से अपील सुनता था। वह कुछ प्रारंभिक मामलों को भी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

देखता था। सम्राट के नीचे प्रधान काजी था। वह भी प्रारम्भिक मामलों और अपीलों को सुनता था।

कानून—कानून दो प्रकार के प्रचलित थे—धर्मशास्त्रों पर आधारित कानून जो शरई कहलाते थे और सम्राट द्वारा प्रचारित कानून जो उर्फी कहलाते थे। धार्मिक एवं सामाजिक क्षेत्र में शरई की और अन्य क्षेत्रों में उर्फी की प्रधानता थी। शरई कानून का मुख्य स्रोत कुरान था। स्थानीय प्रथाओं की भी उपेक्षा नहीं की जाती थी।

न्यायालय—मुगलकाल में न्यायालय चार प्रकार के थे—धार्मिक, दीवानी, फौजदारी और माली। धार्मिक मामलों की सुनवाई काजी के यहाँ होती थी। काजी के निर्णय के विरुद्ध ऊपर अपील होती थी। स्थानीय काजी के ऊपर प्रान्तीय काजी और प्रान्तीय काजी के ऊपर केन्द्रीय काजी (काजी उल्कुजात) होते थे। दीवानी, फौजदारी और माली मामलों के लिये न्यायालय तो अलग थे किन्तु सभी न्यायालयों में एक ही प्रकार के न्यायाधीश काम कर सकते थे। इन मामलों में भी अपील की व्यवस्था थी।

दंडविधान—दंडविधान कठोर था। अंगभंग और मृत्युदंड की भी सजा दी जाती थी। शरीर पर कोड़े लगाये जाते थे। लेकिन प्राणदंड की सजा सम्राट की ही अनुमति से दी जा सकती थी। अपराधियों को जेल में भी रखा जाता था। अर्थदंड भी लगता था।

दोष—मुगलकालीन न्याय व्यवस्था में कुछ बड़े दोष मौजूद थे। पहिले तो लिखित कानूनों का अभाव था। कानूनों में एकरूपता भी नहीं थी। बाद में जहाँगीर ने १२ आदेशों को प्रचलित किया। औरंगजेब ने फतवा-ए-आलमगिरी नामक कानून की पुस्तक निकलवायी। यह बहुत ही महत्वपूर्ण ग्रन्थ है। दूसरे, आधुनिक काल की तरह न्यायालयों का संगठन नहीं था। तीसरे, व्यावहारिक दृष्टि से न्याय के क्षेत्र में भ्रष्टाचार का प्रचार था। रिश्वत की प्रथा प्रचलित थी। चौथे, जेल का प्रबन्ध ठीक नहीं था। जेलों में अपराधियों को अनावश्यक तकलीफें दी जाती थीं।

इस तरह मुगलकाल में न्यायविभाग में कई त्रुटियाँ थीं। कहा जाता है कि यह विभाग बहुत ही उपेक्षित था।

⊙

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अध्याय १७

मुगलकालीन समाज

किसी देश के इतिहास का मतलब केवल राजनैतिक इतिहास नहीं है। वास्तव में इतिहास का व्यापक अर्थ होता है। किसी देश का वास्तविक इतिहास उसके समाज का पूर्ण अध्ययन है—जीवन सम्बन्धी प्रत्येक पहलू का अध्ययन है। अबतक हमने मुगलकाल के राजनैतिक इतिहास का अध्ययन किया है। अब उस काल के सामाजिक इतिहास का अध्ययन करना है।

सामाजिक दशा—मुगलकालीन समाज सामन्त पद्धति पर आधारित था। इसमें तीन तरह के लोग थे—उच्च, मध्यम और निम्न।

उच्च वर्ग—समाज में सबसे ऊपर सम्राट और उसके परिवार थे। राज-परिवार के नीचे अमीर लोग थे। अमीर राजधानी में और प्रान्तों में रहते थे। राजधानी में रहने वाले बहुत से अमीर दरबार के अंग थे। राजपरिवार, अमीर, सरदार, बहुत से पदाधिकारी—ये सभी उच्च वर्ग में थे। उच्च वर्ग के लोगों का जीवन विलासमय था। वे मौज एवं मस्ती का जीवन व्यतीत करते थे। मुगल दरबार ठाट-बाट, तड़क-भड़क और सज-धज का आकर्षक केन्द्र था। दरबार में वैभव का प्रदर्शन अपनी चरम सीमा पर पहुँचा हुआ था। राजमहल सुरा और सुन्दरियों से भरा हुआ था। उत्तम मेवा, फल, भोजन, शराब आदि चीजों की भरमार थी। विदेशी वस्तुओं की भी कोई कमी नहीं थी। इमारतें सुन्दर थीं; उन इमारतों में सजावट भी अद्‌भुत थी। पहनने की पोशाक और सजावट के सामान भी खूब आकर्षक थे। इस तरह सम्राट के महल और दरबार में भोग-विलास पर धन पानी की तरह खर्च होता था।

वर्ष में समय-समय पर कई प्रकार के उत्सव मनाये जाते थे। उन उत्सवों के अवसर पर भी खूब खर्च होता था। राजकुमारों और राजकुमारियों के विवाह के अवसर पर भी खर्च की कोई सीमा नहीं मालूम पड़ती थी।

तरह-तरह की सवारियाँ थीं। हाथी और घोड़े बड़ी संख्या में थे। पालकियों एवं डोलियों का भी व्यवहार होता था। मनबहलाव के अनेक साधन थे। नाच-गान, रास-रंग, शिकार आदि साधनों पर बहुत जोर दिया जाता था।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जब सम्राट ही विलासिता एवं व्यभिचार के शिकार थे तो फिर अन्य अमीरों का क्या कहना है। अमीर लोग हर बात में अपने सम्राट का अनुकरण करते थे। एक नियम भी था कि अमीरों के मरने पर उनकी सम्पत्ति उनके उत्तराधिकारियों को न मिलकर राज्य को मिल जाती थी। अतः अमीरों का सिद्धान्त था कि जितना हो सके उतना धन का जीवन में उपभोग कर लिया जाय। अतः वे भी अपने सुख एवं सुविधा को ध्यान में रखकर खूब खर्च करते थे। सम्राट और अमीरों के पास बहुत दास और दासी रहते थे।

मध्यम वर्ग—मध्यम वर्ग में कई प्रकार के लोग थे किन्तु वे प्रधानतः बुद्धिजीवी थे। उनमें अधिकांश लोगों का जीवन समुन्नत था और वे आराम से अपना दिन काट लेते थे। इस वर्ग में भी कुछ ऐसे लोग थे जिनकी प्रवृत्ति भोग-विलास की ही ओर थी। व्यापारी भी इसी वर्ग में आते थे। उनके पास पैसे भी थे किन्तु वे सादा जीवन व्यतीत करते थे। वे अपने धन-वैभव का प्रदर्शन करना नहीं चाहते थे। उन्हें भय था कि धन का पता लगने पर अधिकारी उचित या अनुचित ढंग से उसे हड़पने की कोशिश करेंगे।

निम्न वर्ग—निम्न वर्ग में किसान, मजदूर तथा कुछ अन्य लोग थे। सभी युगों और सभी देशों की तरह मुगलकाल में भी निम्न वर्ग की दशा सन्तोष-जनक नहीं थी। ऐसे इस वर्ग में भी लोग थे जो भरपेट खाकर अपना जीवन व्यतीत कर लेते थे किन्तु इस वर्ग के अधिकांश लोगों की दशा दयनीय थी। इस वर्ग के लोगों का रहन-सहन, खान-पान सब सादा थे। ये सन्तुष्ट और कष्ट-सहिष्णु थे।

नारी—हिन्दूकालीन भारत में स्त्रियों का जो सम्मानपूर्ण स्थान था वैसा स्थान मुगलकालीन भारत में उन्हें प्राप्त नहीं था। मुगलकालीन भारत में स्त्रियाँ भोग-विलास का साधन समझी जाती थीं। राजमहल में तो पत्नियों एवं रखैलों की भरमार थी। अकबर के रनिवास में ५ हजार स्त्रियाँ थीं। इस तरह वे सम्राटों और अमीरों को शारीरिक सन्तोष प्रदान करती थीं। उन्हें अधिकारों या सुविधाओं का अभाव था। औरंगजेब के मरने के बाद जब साम्राज्य की आर्थिक स्थिति बिगड़ने लगी थी तो रनिवास की औरतों को बहुत तकलीफ होने लगी थी। एक समय तो ऐसा आया कि उन्हें भोजन मिलना कठिन हो गया और वे भूखों छटपटाने लगीं।

नारी समाज में कई कुप्रथाएँ प्रचलित थीं। उनमें बाल-विवाह एवं पर्दाप्रथा का प्रचार था। धनियों एवं अमीरों के भ्रष्ट आचरण के कारण बालविवाह का भी खूब प्रचार था। बालविवाह के कारण विधवाओं की भी संख्या समाज में

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कम नहीं थी। विधवा विवाह का प्रचार भी नहीं था। केवल कुछ भागों में कुछ जातियों के अन्दर विधवा विवाह का प्रचार था। सतीप्रथा भी प्रचलित थी। पति के मरने पर जीवित औरत पति के साथ जल मरती थी। अकबर ने बाल-विवाह एवं सतीप्रथा को रोकने के लिये कुछ प्रयत्न किया था किन्तु उसे सफलता नहीं मिली। अकबर के बाद भी दीर्घकाल तक ये प्रथाएँ जारी रहीं।

अभिभावक ही लड़के-लड़कियों का विवाह तय करते थे। दहेज की प्रथा भी प्रचलित थी। लड़का और लड़की की राय को कोई महत्व नहीं दिया जाता था। उच्च वर्ग के लोगों में बहुविवाह का प्रचार था। एक व्यक्ति कई औरतों से शादी कर लेता था। जाटों में एक औरत कई पतियों को रख सकती थीं। हिन्दुओं में परित्याग (तलाक) प्रथा नहीं थी किन्तु मुसलमानों में इस प्रथा का प्रचार था।

उच्चवर्ग और निम्नवर्ग की स्त्रियों के जीवन स्तर में बहुत अन्तर था। किन्तु कुछ दृष्टियों से निम्नवर्ग की स्त्रियों की स्थिति अच्छी थी। उच्चवर्ग की औरतों की तरह निम्नवर्ग की औरतें पर्दा और चहारदीवारी के अन्दर जकड़ी हुई नहीं थीं। उच्चवर्ग की लड़कियों का यथासमय विवाह नहीं हो पाता था। उन्हें स्वच्छन्दता नहीं थी। किन्तु निम्नवर्ग की औरतों को अधिक स्वतन्त्रता थी। समय एवं आवश्यकता आने पर वे मजदूरी करके भी अपना भरण-पोषण कर लेती थीं। किन्तु उच्चवर्ग की औरतों को असहाय होने पर भूखों मरना पड़ता था। विवशता की हालत में अनैतिक उपायों का सहारा लेना पड़ता था।

ग्रामीण जीवन—मुगलकाल में शहरों की वृद्धि हो रही थी। शहर का जीवन अधिक आकर्षक भी था। शहरों में सभी सुविधाएँ उपलब्ध थीं। किन्तु ग्रामीण जीवन भी पूर्ववत् कायम था। ग्राम के लोगों की आवश्यकताएँ साधारण थीं और उनका जीवन सरल था। ग्रामों में पंचायतों की भी व्यवस्था थी।

आर्थिक दशा—हम देख चुके हैं कि मुगलकाल में समाज तीन भागों में विभाजित था—उच्च, मध्य और निम्न। तीनों वर्गों के बीच आर्थिक विषमता थी और उनका जीवन स्तर भिन्न-भिन्न था। उच्चवर्ग के लोग धनीमानी थे और उनका जीवन स्तर उच्च कोटि का था। मध्यवर्ग के लोगों की आमदनी कम थी और उनका जीवन स्तर साधारणतः अच्छा था। निम्नवर्ग में किसान और मजदूर थे। आर्थिक दृष्टि से इनकी दशा दयनीय थी। ये अपनी कमाई से किसी तरह अपने परिवार वालों का पालन-पोषण करते थे। इस वर्ग में कितने ऐसे भी थे जिन्हें अन्न और वस्त्र का सदा अभाव ही रहता था।

कृषि—कहा जाता है कि मुगलकाल में उत्पादकों और उपभोक्ताओं के बीच गहरी खाई थी। समाज में भिखमंगों की भी संख्या कम नहीं थी। उस समय

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भी भारत कृषिप्रधान देश था। अधिकांश लोग कृषि पर निर्भर करते थे। अनेक प्रकार के अन्न—धान, जौ, गेहूँ, बाजरा, मक्का, रहर आदि—पैदा होते थे। गन्ना, तम्बाकू और नील की भी खेती होती थी। लेकिन खेती करने के तरीके और साधन सभी पुराने ही थे। सिंचाई की भी समुचित व्यवस्था नहीं थी। कृषि प्रकृति की कृपा पर निर्भर थी। वर्षा के अभाव में कुएँ, तालाब आदि से सिंचाई का काम होता था। देश में आवागमन की भी सुविधा नहीं थी। अतः एक भाग से दूसरे भाग में मालों को ले जाने में बड़ी कठिनाई होती थी। फिर कृषिकों के ऊपर अधिकारियों का अत्याचार होता रहता था। सरकार की ओर से कृषि के लिये उन्हें पूरी सहायता नहीं मिलती थी। समय-समय पर उनका शोषण ही होता था।

व्यवसाय—देश में खनिज पदार्थों की प्रचुरता थी। देश के कई भागों में लोहा पाया जाता था। कुमायूं पर्वत के आस-पास सोना मिलता था। मध्य भारत में तांबे और राजस्थान में संगमरमर मिलते थे। दक्षिण में भी बहुमूल्य धातुएँ मिलती थीं। गोलकुन्डा में हीरे की खान थी। ऐसी ही कई अन्य चीजें भी मिलती थीं। इन धातुओं से नाना प्रकार की वस्तुएँ तैयार होती थीं।

देश में रूई की पैदावार बहुत थी। अतः सूत कातना और कपड़े बुनना प्रमुख व्यवसाय थे। सूती व्यवसाय के कई केन्द्र थे। अहमदाबाद उस समय भी सूती वस्त्र के लिये प्रसिद्ध था। ढाका और गुजरात मलमल कपड़े के लिये प्रसिद्ध थे। ढाका का मलमल बहुत ही बारीक और महीन होता था। विदेशों में भी सूती कपड़े विशेष कर मलमल की माँग होती थी। मछलीपट्टम में कपड़े पर डिजाइन तैयार होती थी। रेशमी कपड़े भी तैयार होते थे। लकड़ी के भी अनेक प्रकार के सामान तैयार होते थे। मिट्टी के अच्छे वर्त्तन भी बनते थे।

मुगलकालीन भारत में अनेक प्रमुख व्यावसायिक केन्द्र एवं नगर थे। आगरा, फतहपुर, अहमदाबाद, जौनपुर, बुरहानपुर (खानदेश), लाहौर आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। फीच के मतानुसार आगरा और फतहपुर दो महान् नगर थे। इनमें से प्रत्येक लन्दन से भी बड़ा और अधिक आबादी वाला था। दोनों नगरों के बीच सुन्दर बाजारों की भरमार थी। टेरी के मतानुसार लाहौर में धन और जन दोनों की प्रचुरता थी। अबुलफजल ने अहमदाबाद की बड़ी प्रशंसा की है। वह उसे अद्वितीय नगर कहता था। नगरों में कई उद्योग-धन्धों को सम्राट की ओर से भी प्रोत्साहन दिया जाता था।

व्यापार—बड़े मुगल सम्राटों के समय में व्यापार उन्नत दशा में था। कई वस्तुओं का आयात और निर्यात होता था। यहाँ की कई चीजें विदेशों में जाती

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

थीं और विदेशों से भी कई चीजें मँगायी जाती थीं। विदेशों से शृंगारिक वस्तुएँ और शराब विशेष रूप से मँगायी जाती थीं। यहाँ से मसाले, अफीम और सूती वस्त्र विशेष रूप से बाहर भेजे जाते थे। आन्तरिक और विदेशी दोनों तरह के व्यापार होते थे। जल और स्थल दोनों मार्गों से भी व्यापार होता था। नदियों में नावें चलती थीं। देश के अन्दर कई प्रसिद्ध बन्दरगाह थे। पश्चिम की ओर भड़ौंच, कौम्बे, सूरत, बेसीन और गोआ प्रसिद्ध थे। मालाबार तट पर कालीकट और कोचीन उल्लेखनीय हैं। पूर्वीतट पर मछलीपट्टम, चटगांव, सोनारगांव आदि प्रसिद्ध बन्दरगाह थे। कई अन्य बन्दरगाह भी थे।

आवागमन—सड़कों की व्यवस्था थी। कच्ची और पक्की दोनों तरह की सड़कें थीं। कहीं-कहीं कुछ मार्गों को छोड़कर सड़कें सुरक्षित थीं। सरायों का भी प्रबन्ध था। रात में व्यापारी तथा यात्री सरायों में विश्राम करते थे।

बाजार दर—मुगलकाल में वस्तुओं का मूल्य साधारण और सस्ता था। अबुलफजल ने आइन-ए-अकबरी में वस्तुओं के मूल्य का उल्लेख किया है। खाद्य पदार्थ सस्ते थे। डा० स्मिथ के मतानुसार भूमिहीन मजदूरों को भी खाने और पहनने की कमी नहीं थी। माल-मवेशी भी सस्ते थे। एक रुपये में एक बकरी और दस रुपये में एक गाय कहीं-कहीं मिल जाती थी। लेकिन मोरलैंड का कथन है कि आम तौर से मुगलकाल में भी सर्वसाधारण की दशा वैसी ही थी जैसी आजकल है। किसानों और मजदूरों की क्रयशक्ति सीमित थी। किसानों पर लगान का भारी बोझ था तो मजदूरों की मजदूरी कम थी। सामन्त और राजकर्मचारी शिल्पियों एवं कारीगरों का शोषण करते थे। वे बहुत सी चीजों का मूल्य बहुत कम दिया करते और मनमाने ढंग से चीजों को ले लिया करते थे।

अकाल—मुगलकाल में देश के कई भागों में समय-समय पर भयंकर अकाल का आगमन हुआ करता था। बड़े मुगल सम्राटों का शासनकाल भी अपवाद नहीं था। अकबर, जहाँगीर और शाहजहाँ के शासनकाल में भी देश के कई भागों में अकाल का प्रकोप हुआ था। अकबर के समय में काश्मीर और बंगाल में अकाल आया था। जहाँगीर के समय में पंजाब में और शाहजहाँ के समय में गुजरात में अकाल पड़ा था। औरंगजेब के समय में भी देश के कई भाग अकाल से पीड़ित हुए। बहुत से लोग अकाल की स्थिति में काल के गाल में चले गये। अकाल के साथ महामारी भी आती थी। महामारी के भी बहुत से लोग शिकार हो जाते थे। अकाल पीड़ितों को सहायता देने के लिये कोशिश होती थी किन्तु आवागमन की कठिनाइयों और शासन की त्रुटियों के कारण उचित एवं शीघ्र सहायता नहीं मिल पाती थी।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पतन—औरंगजेब के शासनकाल से ही देश का आर्थिक पतन भी शुरू हो गया। श्री यदुनाथ सरकार का कथन है कि उसके समय में "भारत की दरिद्रता प्रारंभ हुई। राष्ट्रीय कोष की ही क्षति नहीं हुई बल्कि कला-कौशल और सभ्यता के स्तर की बड़ी तेजी से अवनति हुई। देश के बहुत बड़े हिस्से से संस्कृति का लोप हो गया।" औरंगजेब के मरने के बाद प्रायः सभी क्षेत्रों में अवनति का का क्रम जारी रहा। अतः १८ वीं सदी को भारत के इतिहास में अन्धकार युग माना जाता है।

धार्मिक दशा

हिन्दू धर्म—हिन्दू धर्म भारत का प्राचीन धर्म था। इसी को प्रारंभ में ब्राह्मण धर्म कहते थे। इसकी कई शाखाएँ थीं। इन शाखाओं में वैष्णव सम्प्रदाय का विशेष प्रचार था। इस सम्प्रदाय के भी कई भाग थे जैसे चैतन्य का सम्प्रदाय, रामानुज का सम्प्रदाय, वल्लभ सम्प्रदाय और रामानन्द का सम्प्रदाय। इन सभी सम्प्रदायों के अनुयायी वैष्णव थे किन्तु इनके विचारों में कुछ अन्तर पाया जाता था। कोई सम्प्रदाय ज्ञान को तो कोई सम्प्रदाय भक्ति को अधिक महत्व देते थे। इन सम्प्रदायों में परस्पर प्रेम एवं सहानुभूति का अभाव था। भक्तिमार्गी सगुण ब्रह्म की और ज्ञानमार्गी निर्गुण ब्रह्म की कल्पना एवं उपासना करते थे। भक्ति-मार्गी राधा और कृष्ण चरित्र को अनेक रूपों में चित्रित करते थे। इससे समाज में अनैतिकता को प्रोत्साहन मिलता था। सखी सम्प्रदाय से तो अनैतिकता को को और भी अधिक बल मिलता था। ज्ञानमार्गी नैतिकता को प्रोत्साहित करते थे। वे जातिवाद के विरोधी थे।

वैष्णव विष्णु के अनुयायी थे, किन्तु भारत में शिव के अनुयायियों की भी संख्या कम नहीं थी। दुर्गा या शक्ति के भी उपासक थे।

हिन्दू समाज में अन्धविश्वास का बहुत प्रचार था। गंगा और गंगाजल में हिन्दुओं की बड़ी श्रद्धा थी। विशेष अवसरों पर लोग बहुत बड़ी संख्या में गंगा-स्नान करते थे। कई कुरीतियाँ प्रचलित थीं। उनमें बाल-विवाह और सतीप्रथा विशेष उल्लेखनीय हैं। भक्तिमार्गी और तान्त्रिक सम्प्रदाय वाले अनैतिकता को बढ़ावा देते थे। लोग भूत-प्रेत में विश्वास करते थे। अतः जादू-टोने, जन्त्र-मन्त्र का भी प्रचार था। कई धार्मिक उत्सव एवं त्योहार मनाये जाते थे। ज्योतिष में भी लोगों का बहुत विश्वास था।

विभिन्न हिन्दू सम्प्रदायों में कटुता भी थी। कुछ सम्प्रदाय अपने को सर्व-श्रेष्ठ समझते थे और दूसरे सम्प्रदाय का अस्तित्व नहीं देखना चाहते थे। अतः कुछ ऐसे कवि एवं सन्त हुए जिन्होंने विभिन्न सम्प्रदायों के बीच समन्वय स्थापित करने की कोशिश की। ऐसे सन्तों एवं कवियों में तुलसीदास जी का नाम विशेष

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उल्लेखनीय है। उन्होंने विभिन्न हिन्दू सम्प्रदायों के उद्देश्यों में समानता का भाव बतलाया।

इस्लाम धर्म—मुगलकालीन भारत में इस्लाम धर्म का भी जोर था। इस धर्म के मानने वाले मुसलमान लोग थे। इस्लाम धर्म के अनुयायियों में कुछ बहुत कट्टर थे तो कुछ बहुत उदार भी थे। इनकी कई शाखाएँ थीं। एक शाखा थी महादवी जिसका प्रारम्भ जौनपुर में हुआ था। दूसरी शाखा थी रोशनी जिसका प्रारम्भ अफगानिस्तान में हुआ था। ये दोनों ही सम्प्रदाय मसीहा के आगमन पर जोर देते थे, किन्तु कुछ अन्य बातों में दोनों में अन्तर था। इस्लाम के दो अन्य प्रमुख सम्प्रदाय थे— सुन्नी और शिया। इन दोनों सम्प्रदायों में गहरा मतभेद था। अतः दोनों में गहरी कटुता भी थी।

इस्लाम के अनुयायियों में एक सूफी सम्प्रदाय भी था। यह उदारवादी सम्प्र- था। हिन्दुओं के वैष्णव सम्प्रदाय से इसकी तुलना की जा सकती है। दोनों सम्प्रदाय प्रेम एवं भक्ति पर बहुत जोर देते थे। शेख सलीम चिश्ती और शेख मुबारक प्रसिद्ध सूफी संत थे। फैजी और अबुलफजल भी सूफी ही थे।

विरोध एवं समन्वय—हिन्दू तथा इस्लाम धर्म के अनुयायियों में परस्पर विरोध की भावना थी। जब सम्राट कट्टर होता था तो विरोध की भावना और भी अधिक बलवती होती थी। औरंगजेब कट्टर सुन्नी था और वह धर्म के मामले में विशेष अभिरुचि रखता था। अतः उसके समय में हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच अच्छा सम्बन्ध नहीं रहा।

लेकिन मुगलकाल में समन्वय की प्रवृत्ति का भी सर्वथा अभाव नहीं था। हिन्दू और मुसलमान दोनों में कुछ सन्मवयवादी लोग भी थे। अकबर समन्वय वादी मुगल सम्राट था। अतः उसके समय में हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच अच्छा सम्बन्ध था। भक्ति-आन्दोलन के सन्तों ने भी समन्वय पर जोर दिया था। इस तरह समन्वयवादी भावना का विकास हुआ। यह भावना कई क्षेत्रों में दीख पड़ी। सामाजिक एवं धार्मिक उत्सवों में हिन्दू और मुसलमान एक दूसरे को सहयोग देने लगे। हिन्दू ईद और मुहर्रम में तथा मुसलमान होली और दुर्गापूजा में सम्मिलित होते थे। साहित्य एवं कला के क्षेत्र में भी समन्वयवादी भावना दृष्टिगोचर होती है।

⊙

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अध्याय १८

मुगलकालीन संस्कृति

शिक्षा

मुगलकालीन भारत में आधुनिक काल की तरह सार्वजनिक शिक्षा के प्रचार के लिये कोई संगठित प्रयत्न नहीं किया जाता था। जनता में शिक्षा का प्रचार करना राज्य या सरकार का राजनैतिक कर्त्तव्य नहीं समझा जाता था। शिक्षा-प्रचार धार्मिक कर्त्तव्य एवं पुण्य का कार्य माना जाता है। अतः राज्य में सार्वजनिक शिक्षा-विभाग का अभाव था। शिक्षा-प्रचार व्यक्तिगत अभिरुचि एवं प्रबन्ध पर निर्भर करता था। लेकिन सम्राट की ओर से शिक्षण-संस्थाओं को जागीरें और अनुदान के रूप में सहायता दी जाती थी। नारी-शिक्षा राजपरिवार और उच्च वर्ग में ही सीमित थी।

हिन्दुओं के विद्यालय पाठशाला कहलाते थे। मन्दिरों के आसपास ही विद्यालय हुआ करते थे। भूगोल, गणित, व्याकरण, साहित्य, ज्योतिष, दर्शन आदि विषयों की पढ़ाई होती थी। मुसलमानों के विद्यालयों को मकतब या मदरसा कहते थे। मस्जिद के आसपास ही मकतब हुआ करते थे। मकतबों में कुरान तथा कुछ अन्य विषयों की पढ़ाई होती थी।

प्रायः सभी महान मुगल सम्राटों ने शिक्षा के प्रचार में अभिरुचि दिखलायी थी। बाबर और हुमायूँ को शिक्षा एवं साहित्य से बड़ा प्रेम था। बाबर के शासन काल में सार्वजनिक कार्य विभाग को शिक्षण संस्थाएँ खोलने के लिये भार सौंपा गया था। हुमायूँ ने दिल्ली में एक मदरसा की स्थापना की थी। उसे पुस्तकालयों से भी प्रेम था। वह पुस्तकालय की सीढ़ी से ही गिरकर इस संसार से चल बसा था। अकबर ने हिन्दू और मुसलमान सबके लिये दिल्ली, आगरा और फतहपुर सीकरी में विद्यालयों की स्थापना की। वह प्रतिभा-सम्पन्न विद्यार्थियों को पुरस्कार एवं वृत्तियाँ देकर प्रोत्साहित करता था। उसने फतहपुर में एक बालिका विद्यालय भी खोला था। उसने पुस्तकालय के विकास में भी बड़ी अभिरुचि दिखलायी थी। पुस्तकालयों में हस्तलिपियों की भरमार रहती थी। जहाँगीर के

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

समय में एक नियम बना दिया गया कि जिस सम्पत्ति के लिये कोई उत्तराधिकारी नहीं होगा वह सम्पत्ति विद्यालयों के सम्बन्ध में खर्च की जायगी। उसने कई विद्यालयों की मरम्मत भी करायी थी। शाहजहाँ ने दिल्ली में जामा मस्जिद के पास एक शाही कालेज खोला था। औरंगजेब के समय में मकतबों की संख्या में वृद्धि हुई थी।

शिक्षा के कई प्रमुख केन्द्र थे—लाहौर, जौनपुर, सरहिन्द, थानेश्वर, मुलतान, बनारस, काश्मीर, अहमदाबाद आदि।

नारी-शिक्षा का प्रचार नहीं था। हम कह चुके हैं कि यह राज-परिवार और उच्चवर्ग में ही सीमित थी। बेगमों एवं शाहजादियों के लिये शिक्षा का समुचित प्रबन्ध किया जाता था। गुलबदन, नूरजहाँ, मुमताजमहल, जहाँनारा बेगम आदि शिक्षित महिलाएँ थीं।

साहित्य—मुगलकालीन भारत में भाषा एवं साहित्य के क्षेत्र में अद्‌भुत उन्नति हुई। भारतीय और गैर भारतीय दोनों प्रकार के साहित्य एवं भाषा का विकास हुआ। इस तरह फारसी, उर्दू, हिन्दी, मराठी और बंगला का साहित्यिक भंडार समृद्ध हुआ। नीचे इस विषय पर प्रकाश डाला जाता है।

फारसी—बाबर तुर्की, अरबी और फारसी भाषाओं का विद्वान था। वह सफल लेखक भी था। उसने आत्मकथा लिखी जिसे बाबरनामा या तुजक बाबरी कहते हैं। यह तुर्की भाषा में लिखी गई। यह उच्च कोटि की साहित्यिक रचना मानी जाती है। हुमायूँ भी पढ़ने-लिखने में विशेष अभिरुचि रखता था। उसके दरबार में विद्वानों का जमघट लगा रहता था। उसके समय में गुलबदन बेगम ने हुमायूँनामा और जौहर ने 'तजकिरातुल वाकयात' लिखा। बाबर और हुमायूँ को शान्ति एवं समय का अभाव था। यदि ये सुविधाएँ मिली होतीं तो वे कुछ और रचनाओं को प्रस्तुत कर सकते थे।

अन्य क्षेत्रों की तरह साहित्य की दृष्टि से भी अकबर का शासनकाल बहुत ही महत्वपूर्ण है। उसने शिक्षण-संस्थाओं की स्थापना को बहुत प्रोत्साहन दिया। उसने एक अनुवाद विभाग स्थापित किया। इस विभाग का काम था तुर्की, अरबी, संस्कृत तथा अन्य भाषाओं की पुस्तकों का फारसी में अनुवाद कराना। उसके दरबार में अनेक प्रसिद्ध अनुवादक और लेखक रहते थे, उनमें फैजी, अबुलफजल, बदाऊनी, अब्दुररहीम खानखाना आदि के नाम विशेष प्रसिद्ध हैं। फैजी अरबी का अच्छा ज्ञाता एवं कवि था। अबुलफजल भी कवि, इतिहासकार एवं आलोचक था। रामायण, महाभारत, राजतरंगिणी, और आयुर्वेद तथा गणित की कई पुस्तकों का फारसी में अनुवाद कराया गया। मुहम्मद हुसैन, सैयद जमालुद्दीन

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

और गिजाली प्रमुख कवि थे। इन्होंने कई अच्छे काव्य-ग्रन्थ प्रस्तुत किये। कई विद्वानों ने ऐतिहासिक ग्रन्थों की रचना की। फैजी का अकबरनामा अबुलफजल का अकबरनामा एवं आइने अकबरी, बदाऊनी का मुन्तखब-उत्-तवारीख, मुल्ला दाऊद की तारीखे अलफी और निजामुद्दीन अहमद की तबक़ाते अकबरी आदि कुछ प्रसिद्ध ऐतिहासिक रचनाएँ हैं। इन ग्रन्थों में अबुल-फजल की आइनेअकबरी बड़ी ही महत्वपूर्ण रचना है। इसमें तत्कालीन सामाजिक एवं राजनैतिक दशा पर पर्याप्त प्रकाश डाला गया है। फैजी और अबुलफजल के कई पत्र भी साहित्यिक दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं।

जहाँगीर को भी साहित्य में अच्छी रुचि थी। उसने अपनी जीवनी-तुजके जहाँगीरी—लिखी। उसके दरबार में भी बहुत से विद्वान रहते थे। मोतमिद खाँ द्वारा रचित इकबालनामा-ए-जहाँगीरी प्रसिद्ध ऐतिहासिक ग्रन्थ है। इसमें उसके दरबार के प्रमुख साहित्यिकों का वर्णन किया गया है।

शाहजहाँ के समय में भी साहित्य का विकास हुआ। उसके दरबार में भी विविध विषयों के विद्वान् रहते थे। वह विद्वानों का संरक्षक था। उसका पुत्र दारा शिकोह संस्कृत और अरबी का अच्छा ज्ञाता था। उसकी देखरेख में कई शास्त्रों का फारसी में अनुवाद हुआ था। धर्म एवं दर्शन विषयक मौलिक ग्रन्थों की भी रचना हुई। कई ऐतिहासिक ग्रन्थ भी लिखे गये। उनमें अब्दुल हमीद लाहोरी का पादशाहनामा और इनायत खाँ का शाहजहाँनामा उल्लेखनीय हैं। काव्य-ग्रन्थों की भी रचना हुई। उनमें अब्दुल तालिक कलीम का साकीनामा उल्लेखनीय है।

औरंगजेब कट्टर सुन्नी मुसलमान था। अतः उसने गैर मुसलमानों को साहित्यिक विकास के लिये प्रोत्साहन नहीं दिया। लेकिन वह स्वयं अरबी, तुर्की और फारसी भाषाओं का विद्वान था। वह कुरान का भी विद्वान था। उसने इस्लामी कानून पर एक आधिकारिक किताब लिखी—फतवा-ए-आलमगीरी। उसके समय में अन्य विषयों पर भी किताबें लिखी गईं। खफी खाँ ने मुँतखब उल्लुबान नामक प्रसिद्ध ऐतिहासिक ग्रन्थ लिखा।

उर्दू

मुगलकाल में उर्दू का भी जन्म एवं विकास हुआ। कहा जाता है कि सैनिक छावनियों में इसकी उत्पत्ति हुई। भारतीय और गैर भारतीय भाषाओं के मिश्रण के फलस्वरूप इसका जन्म हुआ था। उत्तर में लखनऊ तथा दिल्ली और दक्षिण में बीजापुर तथा गोलकुंडा उर्दू के प्रमुख केन्द्र थे। उर्दू के अनेक लेखकों को सरकारी प्रश्रय प्राप्त था। उर्दू के कवियों में हातिम, सौदा, जौक, गालिब, इन्शा आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हिन्दी

हिन्दी भाषा एवं साहित्य के विकास की दृष्टि से मुगलकाल बड़ा ही महत्वपूर्ण है। मुगलकाल हिन्दी भाषा एवं साहित्य का निर्माणकाल था। हिन्दी के लेखकों को हिन्दू राजाओं तथा मुगल सम्राटों का संरक्षण प्राप्त था। सम्राट अकबर ने हिन्दी के साहित्यिकों को बहुत प्रश्रय प्रदान किया था। कई लेखक तो स्वतन्त्र वातावरण में ही रहकर अपनी रचनाओं को प्रस्तुत करते थे। मुगलकाल में हिन्दी काव्य की कई रचनाएँ प्रस्तुत की गई। इस काव्य को ५ भागों बाँट सकते हैं—सन्तकाव्य, सूफीकाव्य कृष्णकाव्य, रामकाव्य, और रीतिकाव्य। इनमें रीतिकाव्य को छोड़कर अन्य काव्यों का विकास विशेष रूप से स्वतन्त्र वातावरण में ही हुआ था। इनकी रचना आन्तरिक प्रेरणा से आत्मिक सुख के लिये की गई थी।

सन्तकाव्य सर्वसाधारण में बहुत ही लोकप्रिय था। इस काव्य के लेखकों में सन्त रैदास, मलूकदास, दादूदयाल, हरिदास आदि के नाम प्रसिद्ध हैं। सूफी कवि प्रेममार्गी थे। उनमें मलिक मुहम्मद जायसी का नाम प्रसिद्ध है। जायसी ने पद्मावत की रचना की। इसमें मेवाड़ की रानी पद्मिनी की बहुत ही रोचक कहानी है। इसमें विरह एवं सूफी दोनों धाराओं का अद्भुत संगम हुआ है।

कृष्ण और राम को लेकर हिन्दी साहित्य में बहुत रचनाएँ हुई हैं। कृष्णकाव्य के अन्तर्गत सूरदास का सूरसागर बहुत ही प्रसिद्ध ग्रन्थ है। गोपियों के विरह और कृष्ण की बाललीला के चित्रण में सूरदास बेजोड़ थे। उनकी रचनाएँ विश्वसाहित्य की अमूल्य निधियाँ हैं। सूरदास व्रजभाषा के प्रकांड पंडित थे। रासपंचाध्यायी और भ्रमरगीत के लेखक नन्ददास और चौरासी वैष्णवों की वार्ता के लेखक विट्ठलनाथ के नाम भी उल्लेखनीय हैं। रसखान और मीरा के नाम भी कृष्णकाव्य से संबन्धित हैं। रामकाव्य के अन्तर्गत तुलसीदास कृत रामचरित मानस बहुत ही प्रसिद्ध ग्रन्थ है। जनता में यह बहुत ही लोकप्रिय ग्रन्थ है। महल या झोपड़ी सब जगह यह पुस्तक भारत में पायी जाती है। देश और विदेश के अनेक विद्वानों ने इस ग्रन्थ की प्रशंसा की है। लाखों हिन्दुओं के लिये यह महान् धार्मिक एवं उपदेशप्रद ग्रन्थ है। रामचरितमानस आदर्श एवं नैतिकता से ओतप्रोत है। इसके कई वाक्य लोकोक्ति के रूप में प्रचलित हैं। महात्मा तुलसीदास ने राम के ही आधार पर कई अन्य ग्रन्थों की भी रचना की जैसे विनयपत्रिका, गीतावली, जानकीमंगल आदि।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रीतिकाव्य का विकास विशेष रूप से दूसरे की छत्रछाया में हुआ। इस काव्य के लेखकों को हिन्दू राजाओं और मुगल सम्राटों का आश्रय मिला था। रीतिकाव्य के लेखक एक दूसरे से बहुत प्रभावित हुए थे और उनकी रचनाओं में बहुत कुछ एकरूपता दीख पड़ती है। केशवदास ने इस काव्य का प्रारंभ किया। राम चन्द्रिका, रसिकप्रिया, कविप्रिया आदि उनकी प्रसिद्ध रचनाएँ हैं। इसी तरह देव ने भावविलास, सेनापति ने कवित्तरत्नाकर, भूषण ने शिवराजभूषण और मतिराम ने रसराज नामक ग्रन्थ लिखा। बिहारी की सतसई शृंगार रस के लिये प्रसिद्ध है।

मुगल सम्राटों का आश्रय पाने वाले कवियों में बीरबल, अब्दुर रहीमखानखाना, चिन्तामणि, सुन्दरदास, जसवन्त सिंह आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। बीरबल को कविप्रिय की पदवी प्राप्त थी। वह अकबर के दरबार में रहता था। अब्दुररहीम भी अकबर का दरबारी था। चिन्तामणि ने छन्दविचार एवं काव्यविवेक और सुन्दरदास ने सुन्दर शृंगार एवं सिंगासन बत्तीसी नामक ग्रन्थ लिखा। जसवन्त सिंह ने भाषा-भूषण नामक पुस्तक लिखी।

बंगला

धर्म एवं प्रेम की भावनाओं से प्रेरित होकर बंगाल में भी लेखकों ने साहित्य की वृद्धि की। अतः मुगलकाल में बंगला साहित्य का भी खूब विकास हुआ। इस समय के बंगला साहित्य में वैष्णव साहित्य की ही प्रधानता है। चेतन्य की जीवनी एवं कार्यों के सम्बन्ध में कई रचनाएँ प्रस्तुत की गईं। उनमें वृन्दावन दास का चैतन्य-भागवत, कृष्णदास कविराज का चैतन्य चरितामृत और जयानन्द का चैतन्यमंगल प्रसिद्ध हैं। त्रिलोचनदास और नरहरि चक्रवर्ती ने चैतन्य की जीवनी लिखी। चक्रवर्ती का भक्तिरत्नाकर चैतन्य का विशाल जीवन चरित है।

कुछ अन्य सन्तों के सम्बन्ध में भी पुस्तकें लिखी गईं। चण्डी देवी के सम्बन्ध में मुकुन्दराम चकवर्ती ने कवि कंकन चंडी नामक पुस्तक लिखी। महाभारत, गीता और रामायण का बंगला में अनुवाद हुआ। कृत्तिवास की रामायण और काशीरामदास के महाभारत को बहुत लोकप्रियता प्राप्त थी।

मराठी-साहित्य

महाराष्ट्र के सन्तों ने मराठी साहित्य के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया। इन सन्तों में एकनाथ, रामदास, तुकाराम और बावन पंडित के नाम उल्लेखनीय हैं। मराठी साहित्य एवं भाषा के विकास से मराठों में एकता का बड़ा बल मिला था।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

संस्कृत

अकबर संस्कृत के विद्वानों का बड़ा सम्मान करता था। वह उन्हें पुरस्कार के द्वारा भी प्रोत्साहन देता था। उसके दरबार में संस्कृत के भी कई विद्वान रहते थे। उसके समय में 'पारसी प्रकाश' नामक एक फारसी-संस्कृत-कोष की रचना हुई थी। जहाँगीर और शाहजहाँ के समय में भी संस्कृत के विद्वानों को संरक्षण मिलता रहा था। शाहजहाँ के ही दरबार में पंडितराज जगन्नाथ रहते थे। उन्होंने गंगालहरी और रस गंगाधर नामक दो पुस्तकों की रचना की थी। एक विद्वान ने कुछ पारिभाषिक शब्दों का सृजन किया था। औरंगजेब के समय में संस्कृत के विद्वानों का मान घटने लगा था।

पंजाबी

मुगलकाल में पंजाबी साहित्य का भी विकास हुआ। अकबर के ही राज्य-काल में गुरु ग्रन्थसाहब का निर्माण हुआ। मुगलकाल में ही कवि दामोदर ने 'हीर' नामक प्रसिद्ध पुस्तक की रचना की।

कला

मुगल सम्राट कला एवं सौन्दर्य के शौकीन थे। अतः उनके समय में कला के कुछ अंगों का खूब ही विकास हुआ। कला के प्रमुख अंग हैं—वास्तुकला, चित्रकला, मूर्त्तिकला और संगीतकला।

वास्तुकला

वास्तुकला को स्थापत्य या भवन-निर्माण कला भी कहते हैं। मुगलकाल में वास्तुकला की खूब उन्नति हुई। इमारतों के निर्माण पर धन पानी की तरह बहाया गया। सल्तनतकाल में भी इमारतों का निर्माण हुआ था। सल्तनत-कालीन इमारतें सादा और सुदृढ़ होती थीं। मुगलकाल में सल्तनतकाल की अपेक्षा अधिक इमारतें बनीं। मुगलकालीन इमारतें सुदृढ़ तो होती ही थीं, वे कुछ अधिक अलंकृत और सुन्दर भी होती थीं।

भवन-निर्माण शैली के सम्बन्ध में विद्वानों में मतभेद है। फरगुसन के मतानुसार मुगल-वास्तु-कला की शैली विदेशी है। किन्तु यह मत ठीक नहीं है। हैवेल का मत है कि मुगल शासक अधिक भारतीय थे और उनकी इमारतों के बनाने वाले भी अधिकतर भारतीय कलाकार थे। कुछ विद्वानों के मतानुसार मुगल वास्तुकला हिन्दू-मुस्लिम (इंडो-मुस्लिम) कला थी क्योंकि इसपर भारतीय एवं इस्लामी प्रभाव था। किन्तु कुछ विद्वान इस मत से भी सहमत नहीं हैं। सर जॉनमार्शल के विचारानुसार मुगलों की वास्तुकला को किसी एक शैली में

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सीमित नहीं रखा जा सकता। इसका भिन्न-भिन्न समय में भिन्न रूप था। अकबर के समय तक ईरानी शैली का प्रभाव था। उसके बाद भारतीय शैली का प्रभाव पड़ने लगा। अतः हम कह सकते हैं कि मुगल वास्तुकला पर देशी एवं विदेशी, हिन्दू एवं इस्लामी तत्वों का प्रभाव था।

बाबर तथा हुमायूँ—बाबर को भवन-निर्माण में बहुत रुचि थी। उसके समय में कई इमारतों का निर्माण हुआ था। उसके कथनानुसार उसका अपना महल बनाने में ६८० और अन्य स्थानों में इमारतों के बनाने में १४६१ शिल्पकार रोज काम करते थे। उसकी बनवायी हुई बहुत सी इमारतें नष्ट हो गयी हैं। केवल दो इमारतें अभी भी देखी जा सकती हैं–संभल (रोहिलखंड) में जामा मस्जिद और पानीपत में काबुली बाग की मस्जिद। हुमायूँ को इमारत बनाने के लिये पूरा अवकाश नहीं मिला। उसके समय की दो इमारतों के अवशेष मिलते हैं—दिल्ली-स्थित दीनपनाह नामक महल और हिसार जिले में स्थित फतेहाबाद की मस्जिद।

शेरशाह—शेरशाह स्थापत्य का शौकीन था किन्तु वह भी दीर्घकाल तक शासन का उपभोग नहीं कर सका था। उसकी बनवायी हुई इमारतों में सहसराम का मकबरा विशेष उल्लेखनीय है। उसके जीवनकाल में ही इसका निर्माण हुआ था। वह अपनी मृत्यु के बाद उसमें दफना दिया गया। वास्तुविशारदों ने इस इमारत की बड़ी प्रशंसा की है। फरगुसन तथा डा० स्मिथ ने इसे बहुत ही सुन्दर इमारत बतलाया है। शेरशाह की दूसरी प्रसिद्ध इमारत है किला एकुहन मस्जिद या पुराने दुर्ग की मस्जिद।

अकबर—अकबर के शासनकाल में वास्तुकला की खूब उन्नति हुई। वह भवन-निर्माण के सम्बन्ध में अच्छी-अच्छी योजनाओं को बनाया करता था। अबुलफजल के शब्दों में अकबर ने अपने हृदय एवं मस्तिष्क की कल्पना को पत्थर एवं मिट्टी की पोशाक पहनाई। उसके समय में अनेक इमारतें बनीं और कई इमारतों पर हिन्दू शैली का भी पर्याप्त प्रभाव पड़ा। इसका प्रमुख कारण यह था कि उसका दृष्टिकोण उदारवादी था और उसके महल तथा दरबार में हिन्दू नर-नारी भी रहते थे।

वास्तुकला के विकास की दृष्टि से फतहपुर सीकरी का नाम विशेष उल्लेखनीय है। शेख सलीम चिश्ती की स्मृति में यह नगर बसाया (१५६९ ई०) गया था। उसके १२-१३ वर्षों तक वहाँ अनेक प्रकार की इमारतें बनती रहीं। उसके बाद फिर यह नगर छोड़ दिया गया। अब यह नगर उजाड़ स्थान के रूप में अकबर की कहानी कह रहा है। लेनपूल के शब्दों में "एक खोये हुए स्वप्न की मूक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

गवाही के रूप में फतहपुर के बरबाद शहर से बढ़कर सारे हिन्दुस्तान में और कोई अधिक दुखद या अधिक सुन्दर चीज नहीं है।"[१] फतहपुर सीकरी की निर्मित इमारतों में बुलन्द दरवाजा, जामा मस्जिद, शेखसलीम का मकबरा, पंचमहल, बीरबल का निवासस्थान, तुर्की सुलताना की हवेली आदि प्रसिद्ध हैं। बुलन्द दरवाजा की ऊँचाई १४६ फीट है। जामा मस्जिद अपनी विशालता एवं सुन्दरता के लिये विख्यात है। लेनपूल के शब्दों में इमारतों की नक्काशी का सारे हिन्दुस्तान में सानी नहीं है।

आगरे में भी कई इमारतें बनीं। आगरे में उसका बनवाया हुआ दुर्ग प्रसिद्ध है। इसका घेरा डेढ़ मील में है और इसमें दो प्रवेशद्वार हैं। इसकी दीवार ७५ फीट ऊँची है। इसका निर्माण १५६४ ई० में शुरू हुआ था और यह ८ वर्षों में पूरा हुआ था। दुर्ग के भीतर कई सुन्दर इमारतें बनी थीं। उनमें लाल पत्थरों का व्यवहार हुआ था। उनमें दीवानेआम और दीवानेखास प्रसिद्ध हैं। जहाँगीरी महल हिन्दू शैली में निर्मित हुआ था।

अकबर ने अजमेर में और लाहौर में भी दुर्ग बनवाया था। उसने दिल्ली में हुमायूँ का और सिकन्दरा में अपना मकबरा बनवाया था। सिकन्दरा का मकबरा बहुत ही सुन्दर एवं विशाल है।

जहाँगीर—जहाँगीर ने सिकन्दरा के मकबरा को पूरा किया। उसके समय में नूरजहाँ ने दो सुन्दर मकबरा बनवाया—अपने पिता इतमादुद्दौला का मकबरा (आगरे में) और अपने पति जहाँगीर का मकबरा (शाहदारा में)। इतमादुद्दौला का मकबरा संगमरमर का बना हुआ है और बहुत ही सुन्दर तथा चमकीला है।

शाहजहाँ—शाहजहाँ का राज्यकाल तो वास्तुकला के लिये भारतीय इतिहास में एक महत्वपूर्ण अध्याय है। साम्राज्य के अनेक भागों में शाहजहाँ ने अनेक इमारतें बनवायीं और उसने उनके बनाने में बहुत ही उदारता के साथ धन का व्यय किया। उसने दिल्ली का लाल किला बनवाया और उसके भीतर कई इमारतें बनीं। उनमें मोती मस्जिद, दीवाने आम और दीवाने खास प्रसिद्ध हैं। दीवाने खास में सजावट एवं नक्काशी पर बड़ा जोर दिया गया था। मोती मस्जिद भी बहुत सुन्दर इमारत है। उसने दिल्ली में जामा मस्जिद बनवायी थी जो इस देश की सबसे बड़ी मस्जिद मानी जाती है।

शाहजहाँ की सभी इमारतों में आगरे का ताजमहल विशेष उल्लेखनीय है। यह इमारत उसकी बीवी मुमताजमहल की स्मृति में बनायी गई। इसके संबंध

१– मध्यकालीन भारत पृ० १७४

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

में बहुत से कलाकारों की राय ली गई थी। यह इमारत २२ वर्षों में लगभग ५ करोड़ रुपये के व्यय से तैयार हुई। सारी इमारत संगमरमर की बनी हुई है। इसमें अद्भुत सुन्दरता और आकर्षण है। देश-विदेश में इस इमारत की बड़ी प्रशंसा की गई है। यह दाम्पत्य प्रेम का स्थायी स्मारक है।

शाहजहाँ ने शाहजहाँनाबाद के नाम से एक नगर भी बसाया था। उसी ने प्रसिद्ध मयूर सिंहासन (तख्तताऊस) भी बनवाया था। इसके बनाने में लगभग एक करोड़ रुपये और लगभग सात वर्ष का समय लगा था।

पतन—शाहजहाँ के उत्तराधिकारियों के समय में वास्तुकला पतन की ओर अग्रसर हो गयी। औरंगजेब को स्थापत्य से विशेष प्रेम नहीं था। उसने साधारण कोटि की कुछ मस्जिद बनवायी। उनमें लाहौर की बादशाही मस्जिद प्रसिद्ध है। बाद में स्थापत्य के क्षेत्र में कोई महत्वपूर्ण कार्य नहीं हुआ।

चित्रकला

इस्लाम धर्म में चित्रकला के लिये कोई प्रोत्साहन नहीं था। किन्तु साम्राज्य-विस्तार एवं धन-वृद्धि के कारण कुछ मुगल सम्राट चित्रकला के भी शौकीन हो गये थे।

बाबर एवं हुमायूँ—बाबर और हुमायूँ कलाप्रेमी थे। बाबर प्राकृतिक चीजों एवं दृश्यों को देखकर आनन्दमग्न हो जाता था। उसके दरबार में कुछ चित्रकारों को प्रश्रय मिला था। हुमायूँ भी चित्रकला का प्रेमी था। उसने फारस से अपने साथ दो चित्रकारों को लाया था। इनके नाम थे—ख्वाजा अब्दुस समद और मीरसैयदअली तबरेजी। इन चित्रकारों ने हुमायूँ के पुत्र अकबर को चित्रकला सम्बन्धी शिक्षा दी थी।

अकबर एवं जहाँगीर—अकबर के समय में चित्रकला की खूब उन्नति हुई। उसने कला सम्बन्धी एक विभाग स्थापित किया। फारसी चित्रकार ख्वाजा अब्दुस समद इस विभाग का अध्यक्ष नियुक्त हुआ। उसके समय में एक नयी भारतीय शैली का उदय हुआ। इसे भारतीय राष्ट्रीय चित्रकला शैली कहते हैं। अकबर के दरबार में कुछ बहुत ही प्रसिद्ध चित्रकार रहते थे। अब्दुस समद, मीरसैयदअली और फरुखबेग फारसी चित्रकार थे। हिन्दू चित्रकारों में बसावन, दसवन्त, जगन्नाथ, ताराचन्द और मुकुन्द के नाम उल्लेखनीय हैं।

जहाँगीर ने भी अपने पिता की तरह चित्रकला को आश्रय प्रदान किया। अकबर ने जिस शैली का प्रारंभ किया था वह शैली जहाँगीर के समय में पूर्णता

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पर पहुँच गई। जहाँगीर चित्रकला का संरक्षक तो था ही, वह कुशल पारखी भी था। उसके दरबार में भी कई विख्यात कलाकार रहते थे। उनमें फरुखबेग, मुहम्मद नजीर, बिशनदास, गोवर्धन, मनोहर और माधव के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं।

शाहजहाँ एवं औरंगजेब—शाहजहाँ को चित्रकला की अपेक्षा वास्तु-कला में विशेष अभिरुचि थी। औरंगजेब तो कट्टर सुन्नी होने के कारण चित्रकला का विरोधी ही था। उसने बीजापुर तथा गोलकुंडा के महलों में चित्रों को नष्ट करवा दिया था। अतः शाहजहाँ के समय से चित्रकला की अवनति होने लगी। अब चित्रकार केन्द्र से हटकर जहाँ-तहाँ स्थानीय संरक्षण में रहने लगे।

मूर्त्तिकला

मुगलकाल में अकबर को छोड़कर किसी भी सम्राट ने मूर्त्तिकला को प्रोत्साहन नहीं दिया क्योंकि यह भी कुरान के विरुद्ध थी। अकबर के समय में कहीं-कहीं मूर्त्ति-निर्माण का कार्य हुआ था।

संगीतकला

मुगलकाल में संगीतकला का भी विकास हुआ। बाबर और हुमायूँ दोनों को संगीत से बड़ा प्रेम था। दोनों गवैये भी थे। बाबर ने संगीत पर एक किताब भी लिखी थी। हुमायूँ के समय में बैजूबावरा प्रसिद्ध संगीतज्ञ था। वह पहले एक कैदी था और उसका वध कर देने के लिये आज्ञा दे दी गई थी किन्तु जब यह मालूम हुआ कि वह कुशल गायक है तो उसके प्राण की रक्षा की गई और उसे दरबार में स्थान दे दिया गया। हुमायूँ नियमित रूप से संगीत का आयोजन करता था और उसमें बड़े चाव से भाग लेता था।

अकबर—अकबर तो अन्य कलाओं की तरह संगीतकला का भी संरक्षक था। उसने संगीत को बहुत प्रोत्साहन दिया। वह स्वयं भी गायक था। उसने बहुत से विद्वान संगीतज्ञों को दरबार में स्थान दिया था। उनमें तानसेन का नाम सर्वोपरि है। तानसेन पहले हिन्दू था किन्तु बाद में वह मुसलमान हो गया था। वह ग्वालियर का रहने वाला था। संगीत के क्षेत्र में उसे बड़ी लोकप्रियता प्राप्त थी। वह अपने संगीत से लोगों को मुग्ध कर देता था। किन्तु वह बड़ा शराबी था। ३४ वर्ष की ही उम्र में उसकी मृत्यु हो गयी थी। अकबर के समय के अन्य प्रसिद्ध गायक थे—अब्दुररहीम खानखाना, बैजूबावरा, बाबा रामदास और सूरदास।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जहाँगीर और शाहजहाँ भी संगीत के प्रेमी थे। इनके समय में भी दरबार में कई प्रसिद्ध संगीतज्ञ रहते थे। ये दोनों सम्राट स्वयं भी गाते थे। शाहजहाँ के गानों को सुनकर साधु-सन्त भी बहुत प्रभावित हो जाते थे। रामदास, जगन्नाथ आदि उसके समय के प्रसिद्ध गवैये थे।

औरंगजेब के समय में संगीतकला का ह्रास होने लगा। उसके संगीत में कोई अभिरुचि नहीं थी। धीरे-धीरे संगीतज्ञों को संरक्षण मिलना बन्द होने लगा। किन्तु स्थानीय संरक्षण में संगीत कला का भी विकास होता रहा।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

परिशिष्ट १

मुगल सम्राटों की वंशावली

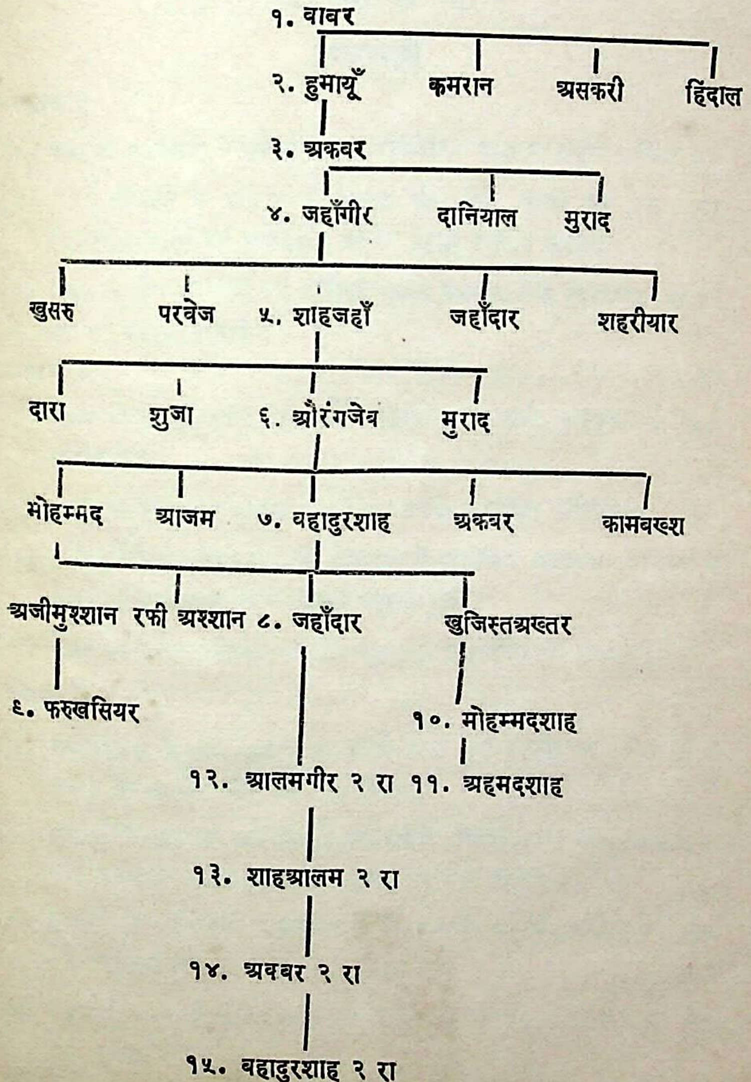

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

परिशिष्ट २

प्रश्नावली

अध्याय १

(१) बाबर के आक्रमण से पूर्व भारत की राजनैतिक दशा का वर्णन कीजिये।

(२) "१६ वीं सदी के आरंभ में भारत छोटे-छोटे राज्यों का एक समूह (Congeries of states) था।" इसकी समीक्षा कीजिये।

(३) "१५२६ ई० में उत्तरी एवं दक्षिणी भारत कमजोर तथा विभाजित था।" इस पर प्रकाश डालिये।

अध्याय २

(१) बाबर की उपलब्धियों का वर्णन कीजिये। उसकी सफलता के क्या कारण थे?

(२) बाबर के चरित्र पर प्रकाश डालते हुए उसका मूल्यांकन कीजिये।

(३) "सम्पूर्ण मध्यकालीन भारतीय इतिहास में सर्वाधिक आकर्षक व्यक्तियों में बाबर भी एक व्यक्ति है।" इसकी व्याख्या करें।

(४) बाबर को मुगल साम्राज्य का संस्थापक कहाँ तक माना जा सकता है?

अध्याय ३

(१) राज्यारोहण के समय हुमायूँ के सामने क्या कठिनाइयाँ थीं? हुमायूँ ने उनका सामना कैसे और कहाँ तक किया?

(२) हुमायूँ के नाम का अर्थ होता है भाग्यशाली; किन्तु उसके समान शायद ही कोई भाग्यहीन सम्राट हुआ हो—इसकी व्याख्या कीजिये।

(३) हुमायूँ की कठिनाइयों के लिये कहाँ तक उसकी अपनी भूलें और कहाँ तक परिस्थितियाँ उत्तरदायी थीं?

(४) "हुमायूँ स्वयं ही अपना सबसे बड़ा दुश्मन था।" इस कथन से आप कहाँ तक सहमत हैं?

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(५) "बाबर ने अपने सबसे बड़े पुत्र के लिये जो ताज छोड़ा वह गुलाबों का सेज (easy throne) नहीं था; उसके लिये हुमायूँ योग्य भी नहीं था।" इसकी व्याख्या कीजिये।

(६) "हुमायूँ जीवन भर ठोकरें खाता रहा और उसका अन्त भी ठोकर से ही हुआ" लेनपूल का यह कथन कहाँ तक सत्य है ?

(७) हुमायूँ और शेरशाह के बीच हुए संघर्षों का वर्णन कीजिये।

(८) "हुमायूँ के सामने जो कठिन समस्याएँ थीं उनमें से अधिकांश उसी की देन थीं।" इसपर प्रकाश डालिये।

अध्याय ४

(१) शेरशाह की जीवनी का वर्णन कीजिये। वह कैसे सम्राट के पद पर पहुँच गया ?

(२) शेरशाह की शासन प्रणाली का वर्णन कीजिये।

(३) शेरशाह की शासन व्यवस्था कहाँ तक आधुनिक थी ?

(४) "वह बाबर नहीं, शेरशाह था जिसने वह नींव तैयार की जिस पर अकबर ने मुगल साम्राज्य का विशाल ढाँचा खड़ा किया।" इसकी समीक्षा करें।

(५) "शेरशाह अकबर के इस दावे का उचित ही विरोध कर सकता है कि वह (अकबर) प्रथम व्यक्ति था जिसने भारतीय राष्ट्र के निर्माण के लिये प्रयत्न किया।" कानूनगो का यह कथन कहाँ तक सत्य है ?

(६) "किसी भी सरकार ने, यहाँ तक कि ब्रिटिश ने भी ऐसी बुद्धिमत्ता नहीं दिखलायी जैसी कि इस पठान ने।' शेरशाह के सम्बन्ध में यह मत कहाँ तक ठीक है ?

अध्याय ५

(१) अकबर के राज्यारोहण के समय भारत की राजनैतिक स्थिति पर प्रकाश डालिये।

(२) राज्यारोहण के बाद अकबर के सामने क्या कठिनाइयाँ थीं ? उसने उन्हें कैसे दूर किया ?

(३) पानीपत की पहली और दूसरी लड़ाइयों के कारणों एवं परिणामों का वर्णन कीजिये।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

(४) अकबर के द्वारा साम्राज्य विस्तार पर एक संक्षिप्त निबन्ध लिखिये।
(५) अकबर की धार्मिक नीति की समीक्षा कीजिये।
(६) दीनइलाही की स्थापना क्यों हुई ? इसके परिणाम क्या हुए ?
(७) अकबर की शासन-प्रणाली का वर्णन कीजिये।
(८) साम्राज्य-निर्माता एवं शासक के रूप में अकबर की उपलब्धियों का वर्णन कीजिये।

अध्याय ६

(१) जहाँगीर के चरित्र एवं उपलब्धियों का वर्णन कीजिये।
(२) नूरजहाँ की जीवनी एवं उसके प्रभावों का वर्णन करें।
(३) जहाँगीर के राज्यकाल की कठिनाइयों के लिये नूरजहाँ कहाँ तक उत्तरदायी थी ?
(४) नूरजहाँ के चरित्र की व्याख्या कीजिये। साम्राज्य पर उसका क्या प्रभाव पड़ा ?

अध्याय ७

(१) शाहजहाँ के चरित्र एवं उसकी उपलब्धियों का वर्णन कीजिये।
(२) शाहजहाँ के पुत्रों में जो उत्तराधिकार-युद्ध हुआ उसका वर्णन कीजिये। उसमें औरंगजेब क्यों सफल हुआ ?
(३) शाहजहाँ का शासनकाल मुगलकालीन इतिहास का स्वर्णयुग था—आप इस मत से कहाँ तक सहमत हैं ?
(४) शाहजहाँ का राज्यकाल विरोधाभास (Paradox) था—इस कथन की पुष्टि कीजिये।

अध्याय ८

(१) औरंगजेब के शासनकाल की प्रमुख घटनाओं का उल्लेख कीजिये।
(२) मनुष्य और शासक के रूप में औरंगजेब का मूल्यांकन कीजिये।
(३) मुगलसाम्राज्य के पतन के लिये औरंगजेब बहुत उत्तरदायी था—इस कथन की पुष्टि कीजिये।

अध्याय ९

(१) अकबर की पश्चिमोत्तर सीमा-नीति का वर्णन कीजिये।
(२) शाहजहाँ की पश्चिमोत्तर सीमा एवं मध्य एशियाई नीति की समीक्षा कीजिये।
(३) औरंगजेब की पश्चिमोत्तर सीमा-नीति पर प्रकाश डालिये।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

अध्याय १०

(१) मुगल-राजपूत सम्बन्ध पर एक संक्षिप्त निबन्ध लिखिये ।

(२) अकबर की राजपूत-नीति की समीक्षा कीजिये ।

(३) औरंगजेब की राजपूत-नीति की समीक्षा कीजिये ।

अध्याय ११

(१) मुगलों की दक्षिणी नीति (डेकानपोलिसी) पर एक संक्षिप्त निबंध लिखिये।

(२) अकबर की दक्षिणी नीति की समीक्षा कीजिये ।

(३) जहाँगीर और शाहजहाँ की दक्षिणी नीति पर प्रकाश डालिये ।

(४) औरंगजेब की दक्षिणी नीति की समीक्षा कीजिये ।

अध्याय १२

(१) सत्रहवीं शताब्दी में मराठों के उत्थान के क्या-क्या कारण थे ?

(२) शिवाजी की जीवनी एवं उनके चरित्र का वर्णन कीजिये ।

(३) सैनिक एवं विजेता के रूप में शिवाजी का मूल्यांकन कीजिये ।

(४) शिवाजी की शासन-प्रणाली का वर्णन करें ।

(५) "शिवाजी अन्तिम सृजनात्मक प्रतिभा एवं राष्ट्रनिर्माता थे जिन्हें हिन्दू जाति ने उत्पन्न किया था ।" इस कथन की पुष्टि कीजिये ।

अध्याय १३

(१) सिक्ख सम्प्रदाय किस प्रकार धार्मिक सम्प्रदाय से सैनिक सम्प्रदाय में बदल गया ?

(२) मुगल-सिक्ख सम्बन्ध पर एक निबन्ध लिखिये ।

(३) गुरु गोविन्द सिंह की जीवनी एवं उपलब्धियों का वर्णन कीजिये ।

अध्याय १४

(१) मुगल साम्राज्य के पतन के क्या कारण थे ?

(२) मुगल साम्राज्य के पतन के लिये औरंगजेब कहाँ तक उत्तरदायी था ?

अध्याय १५

(१) पेशवा के उत्थान और पतन पर एक टिप्पणी लिखिये ।

(२) बाजीराव प्रथम की उपलब्धियों का वर्णन कीजिये ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

अध्याय १६

(१) मुगलों की शासन-व्यवस्था का वर्णन कीजिये ।

(२) मुगलों के केन्द्रीय शासन-प्रणाली का उल्लेख कीजिये ।

(३) मुगलों के सैनिक संगठन पर प्रकाश डालिये ।

(४) मुगलों की राजस्व-प्रणाली की विवेचना कीजिये ।

अध्याय १७

(१) मुगलकालीन भारत की आर्थिक दशा पर प्रकाश डालिये ।

(२) मुगलकालीन भारत की सामाजिक एवं धार्मिक दशा का वर्णन कीजिये ।

अध्याय १८

(१) मुगलकालीन भारत में शिक्षा एवं साहित्य की प्रगति का उल्लेख करें ।

(२) मुगलकालीन कला पर एक संक्षिप्त निबन्ध लिखें ।

(३) मुगलकाल में वास्तुकला या चित्रकला के विकास पर प्रकाश डालें ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE

ru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Ja

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

परिशिष्ट ३

विस्तृत अध्ययनार्थ ग्रन्थ-सूची

(१) डा० ईश्वरी प्रसाद—ए शौर्ट हिस्ट्री ऑफ मुस्लिम रूल इन इंडिया।
(२) आर० पी० त्रिपाठी—राइज एंड फौल ऑफ दि मुगल एम्पायर।
(३) एस० आर० शर्मा—मुगल एम्पायर इन इंडिया।
(४) कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इंडिया—भाग ४
(५) सरकार तथा दत्त--भारत का आधुनिक इतिहास भाग १
(६) डा० जे० एन० सरकार—मुगल शासनपद्धति।
(७) अशरफ—सोशल एंड इकोनोमिक कंडिशन्स इन मेडिभल इंडिया।
(८) डा० आशीर्वादी लाल—मुगलकालीन भारत।
(९) लेनपूल—मध्यकालीन भारत।

ajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

n Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-

uru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jal

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

jGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgao

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon